देशी और विलायती

देशी श्रौर विलायती

देशी और

(श्रीप्रभातकुमार मुखोपाध्याय के 'देशी ओ विलायती'
का हिन्दी-अनुवाद)

अनुवादक

रामेश्वरप्रसाद पाण्डेय

प्रकाशक

इंडियन प्रेस, लिमिटेड, प्रयाग।

थम बार]　　१९२४　　[मूल्य २

P inted and publi·hed by K. Mittra, at The Ind an Pre , I l
Allahabad.

सूचीपत्र

पत्र-पद्म



इंडियन प्रेस लिमिटेड



ढेंशी।

मेरा उपन्यास

पहला परिच्छेद

मैं जब अन्तिम परीक्षा देकर मेडिकल कालेज से बाहर निकला, उस समय, मेरी अवस्था केवल बाईस वर्ष की थी। बाप-दादों की कमाई हुई यथेष्ट सम्पत्ति पास होने के कारण चिकित्सा का व्यवसाय करने की वैसी ज़रूरत न थी। किन्तु गाँव के सभी लोगों ने कहा कि जब इतनी मिहनत कर, इतना रुपया-पैसा खर्च कर, डाक्टरी पास ही किया, तब प्रैक्टिस न करना साधारणतः ठीक मालूम नहीं होता। बात दिल में ठीक जँची। किन्तु डाक्टरी का चोगा-चपकन पहन स्थूलकाय (कारण खूब कमाने पर घी-दूध निश्चय ही खूब खाऊँगा), अत्यन्त गम्भीर अपनी भविष्य मूर्ति की कल्पना करने से बहुत हँसी आने लगी।

डाक्टर होने की उच्चाभिलाषा मुझे किसी काल में न थी। मेरी एक-मात्र उच्चाभिलाषा थी उपन्यास का नायक बनने की। लड़कपन से ही उपन्यास पढ़ने का मुझे शौक

पैदा हो गया था। मैंने सबसे पहले जो उपन्यास पढ़ा था, वह बंकिम बाबू का 'आनन्दमठ' था। याद आता है कि उस समय मेरी अवस्था केवल ११ वर्ष की थी। उसी साल नया 'आनन्दमठ' निकला था। मेरे मँझले दादा कलकत्ते में, कालेज में, पढ़ते थे। पूजा की छुट्टी में घर आते समय वे पुस्तक खरीद लाये। उन्होंने आकर यह प्रचार कर दिया कि वे एक "सन्तान" हैं। चिर दिन अविवाहित रह कर देश के कल्याण के लिए आत्मोत्सर्ग करेंगे। गांव के अन्यान्य नव-युवकों के साथ छिप कर वे अनेक प्रकार की सलाहें करने लगे। मेरे पूछने पर मुझे कुछ न बताते थे; आशा देते थे कि बड़े होने पर मुझे दीक्षित करेंगे। बहुत कुतूहल बढ़ जाने से 'आनन्दमठ' की तलाश की पर मझले दादा ने उसे छिपाकर न मालूम कहाँ रख छोड़ा था; उसे न पाया। हताश होकर अन्त में उनकी सभा की सलाहें ओट से सुनीं। जिस घर में उनकी गोष्ठी होती थी, उस घर में पहले से ही एक चौकी के नीचे मैं छिप रहा। जो कुछ सुना उसे इस समय प्रकाशित न करूँगा। क्योंकि दादा इस समय पूर्व बंगाल के एक डिस्ट्रिक्ट मैजिस्ट्रेट हैं। इस समय एक स्वदेशी मुकद्दमे में कई विद्यार्थियों को जेल की सज़ा देने से उनकी पदोन्नति भी होने की संभावना हुई है।

बहुत देर तक ठंडे फ़र्श पर पट लेटने से अथवा कच्ची इमली बहुत अधिक खा जाने से इसके दूसरे दिन मुझे

ज्वर आ गया। ज्वर छूटने पर भी सावधान माता-पिता ने सागू-बार्ली के सिवा और कुछ मुझे खाने न दिया। भूख से छट-पटा कर खाने की चीज़ खोजते समय अकस्मात् "आनन्द-मठ" हाथ में आ गया। उसी दिन पूरी पुस्तक पढ़ डाली। याद है, दुर्भिक्ष-पीड़ित लोग चूहे भून कर खा जाते हैं—पढ़ कर मेरे दिल में हुआ था कि मैं भी इस समय दो एक भुने हुए चूहे यदि पा जाऊँ तो खा जाऊँ।

इसके बाद जैसे ही जैसे उम्र बढ़ने लगी वैसे ही वैसे बँगला और अँगरेज़ी के उपन्यास पढ़ने लगा। अपने नित्य के गद्यमय जीवन पर अश्रद्धा पैदा होने लगी। अभिभावकों के बहुत कुछ कहने सुनने पर भी विवाह नहीं किया। पूर्वानु-रागवर्जित एडवेंचर-लेश-हीन विवाह करना मन ने मञ्जूर न किया।

उपन्यास का नायक होने में एक विशेष अड़चन भी थी, वह अड़चन मेरा बाहरी अवयव था। मेरा चेहरा उपन्यास के नायक की तरह बिलकुल ही नहीं।

किन्तु विधाता किस उपाय से कौन सा उद्देश सिद्ध करता है, यह जानना कठिन है। इस अनायकोचित मूर्ति ने ही मुझे एक दिन उपन्यास के स्वप्न-राज्य में पहुँचा दिया।

बन्धुओं के समझाने-बुझाने से डाक्टरी का व्यवसाय करने का मैंने संकल्प कर लिया था। गाँव में रहकर डाक्टरी

करूँगा—विषय-सम्पत्ति भी देख सुन सकूँगा । औषध, आलमारी आदि ख़रीदने के लिए कलकत्ते की यात्रा की ।

दूसरा परिच्छेद

बरसात का मौसिम था। कलकत्ते में प्रायः वृष्टि होती थी। पहले जिस मेस की इमारत में रहा करता था वहीं जा ठहरा। इच्छा थी कि एकाध सप्ताह ठहर, देख-सुनकर साज-सामान ख़रीद लूँगा। प्रातःकाल उठते ही गंगा-स्नान के लिए जाता था—यह मेरा बहुत दिनों का अभ्यास था। एक सूखा वस्त्र और गमछा कन्धे पर रखकर रात बजने के पहले ही स्नान के लिए निकल जाता था। गंगास्नान के लिए एक जोड़ा स्वतन्त्र वस्त्र था; कारण उस समय गंगा का जल बहुत मैला होने से कपड़ा मैला हो जाता था।

तीन चार दिन कलकत्ते में बीतने पर, एक दिन स्नान कर ज्योंही घाट पर चढ़ रहा था, भीगे कपड़े बदल कर लौटने का उद्योग कर रहा था, त्योंही एक बाबू जल्दी जल्दी घाट पर आ इधर-उधर नज़र दौड़ाने लगे। बाबू के वेष से यह जान न पड़ता था कि वे स्नान के लिए आये हैं। कमीज़ पर चद्दर लटक रही थी। उम्र लगभग चालीस वर्ष की थी। चेहरा सूखा हुआ था, बहुत दिनों से बाल न बनवाने से मुख

ओझल हो रहा था—मालूम होता था, मानो उनकी देख-भाल करनेवाला, उनका यत्न करनेवाला, कोई नहीं है। वे आकर स्नान करनेवालों में से किसी को चिन्तित भाव से खोजने से लगे। हठात् मेरे पास आकर और मेरी ओर घूर कर कहा—"महराज हो ?"

मेरे ब्राह्मणत्व में कोई सन्देह नहीं, परन्तु इसके पहले महाराज शब्द से सम्बोधित किये जाने का सौभाग्य मुझे प्राप्त न हुआ था। सोचा कि शायद मुझे देखकर किसी दूसरे व्यक्ति का भ्रम हो गया है।

मुझे चुप देखकर बाबू ने अधीर होकर कहा—"कैसी विपत्ति है! उत्तर क्यों नहीं देते? तुम क्या महराज हो?"

हाय, मेरी सूरत नायक की तरह न होने पर भी क्या रसोइये की तरह है। समझ गया कि बाबू एक रसोइये की तलाश में हैं। सिर में न मालूम क्या धुन सवार हुई, पूछा—"हाँ, बाबूजी।"

"कहीं नौकर हो ?"

"जी, नहीं।"

"नौकरी करोगे ?"

"पाऊँगा तो करूँगा।"

"रसोई बनाना जानते हो ?"

"जी, यह तो जाति का पेशा है—इसे फिर न जानूँ ?"

"घर कहाँ है ?"

"जशोर।"

"नाम ?"

"श्रीहाराधन मुखोपाध्याय।"

"कितने दिन से कलकत्ते में हो ?"

"यों ही चार-पांच दिन हुए होंगे।"

"नौकरी के लिए ही आये हो ?"

"नहीं तो क्या थियेटर देखने आया हूँ ?"

बाबू नाराज़ हो गये। कहा—"तुमको तो बात करने की भी तमीज़ नहीं। तुम बड़े असभ्य हो। भले आदमियों से क्या इसी प्रकार बात करना होता है ?"

मन ही मन बहुत आनन्दित हुआ। इनके रसोइये का दो एक दिन काम करने में हानि क्या ? ईश्वर का यह एक सुयोग आ मिला है। इसलिए नम्रतापूर्वक कहा—"हुजूर देहात का रहनेवाला जङ्गली हूँ, कुछ जानता नहीं। कुसूर माफ़ कीजिएगा हुज़ूर।"

बाबू ने नरम होकर कहा—"हूँ।" कुछ सोच कर कहा—"सच ही ब्राह्मण हो ? या ब्राह्मण बन गये हो ? आज-कल एक जोड़ा जनेऊ कन्धे पर डाल कर कितने ही लोग ब्राह्मण बन जाते हैं।"

हाय हाय, क्या मेरी मूर्ति देखकर भंगी-चमार होने की भी संभावना होती है ? बाबू की सभ्यता की मैं विशेष प्रशंसा न कर सका। प्रकट में, विनीतभाव से मुसकुराकर

कहा—"साहब, मैं तो जाल या दगाबाज़ी के पास भी नहीं फटकता।"

बाबू फिर मुझसे जिरह करने लगे।

"अच्छा, कैसे ब्राह्मण हो, गायत्री कहो तो ?"

मैंने गायत्री की आवृत्ति की। इस दिल्लगी के समय सुपवित्र गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर मन में बहुत पछताया।

बाबू होंठ सिकोड़ कर सन्देह का भाव दिखा, सिर हिलाने लगे। कहा—"कुछ समझ में न आया। आज-कल छापे की पुस्तकें चली हैं। चार पैसे की एक पोथी ख़रीद लेने से गायत्री-सन्ध्या सब कंठ की जा सकती है।"

मैंने दुःख दिखा कर कहा—"मालिक, यदि आपको विश्वास नहीं तो क्या करूँ ?"

बाबू के मुँह में उत्साह का कुछ चिह्न दिखाई पड़ा। सहसा कहा—"अच्छा, क्या मन्त्र कह कर यज्ञोपवीत में गाँठ देते हैं, कहो तो ? यह तो छापे की किसी भी पुस्तक में नहीं है।"

मैंने गम्भीर-भाव से कहा—"भारद्वाज-आंगिरसबार्ह-स्पत्य-प्रवरस्य।"

सुन कर बाबू ने कहा—"ठीक-ठीक, ब्राह्मण ही हो। क्या महीना लोगे ?"

"आप क्या देंगे ?"

"तुम ही कहो न।"

"कलकत्ते का रेट तो बँधा है।"

"कितना।"

हम लोगों के मेस के ब्राह्मण का महीना पांच रुपया नक़द और ख़ुराक-पोशाक था। इसी से साहस कर कहा—"पाँच रुपया।"

"पांच रुपया नहीं, पचीस रुपया। किसने तुमसे कहा है कि कलकत्ते का रेट पांच रुपया है ?"

"मालिक, विद्यार्थियों के अनेक मेसों के रसोइयों का महीना पांच रुपया, और खाना कपड़ा है।"

मेस और गिरस्त का घर बराबर है ? मेस की चाकरी आज है कल नहीं। यदि चार रुपये में राज़ी हो तो कहो। चार रुपये, खाना और साल में दो कुरता और दो धोतियां मिलेंगी।

मैंने सिर खुजलाते खुजलाते कहा—"मालिक, चार रुपये से कैसे गुज़र होगी। बहुत बड़ा परिवार है। उनको खिलावेंगे क्या ?"

"बड़ा परिवार है ? कितने जन खानेवाले हैं ?"

"मालिक, बूढ़े बाप, माँ, भाई,"—

बीच में ही बाबू बोल उठे—"परमेश्वर ! रसोइये की

नौकरी कर बूढ़े बाप, मा और भाई को खिलाओगे! मैं एक सौ रुपया महीना पाता हूँ, मैं ही नहीं खिला सकता! अपने बाल-बच्चों के भरण-पोषण में ही सब रुपया खर्च हो जाता है। चार रुपये में से एक रुपया खर्च करना—तीन रुपया अपनी स्त्री को भेज दिया करना।

"मालिक, मेरा विवाह अभी नहीं हुआ है।"

"क्यों, कुलीन ब्राह्मण हो, अब तक विवाह नहीं हुआ?"

"नहीं हुआ।"

"क्यों, कुछ दोष है क्या?"

"दोष?—दारिद्र्य दोष है। मुझ गरीब को कौन अपनी लड़की दे।"

"विवाह नहीं किया यह अच्छा ही किया। साहब लोग जब तक खुद कमाने नहीं लगते तब तक विवाह नहीं करते। यदि अँगरेज़ी जानते तो उन लोगों की किताबों में देख सकते। हमारे दफ़्तर के छोटे साहब पाँच सौ रुपया माहवार पाते हैं, पर अब तक उन्होंने विवाह नहीं किया।"

मैं चार रुपये के बजाय पाँच रुपये करने के लिए बहुत गिड़गिड़ाने लगा। अन्त में ४॥) में राज़ी हो गया। बाबू ने कहा—यदि काम अच्छा कर सका, भाग न निकला, तो साल के बाद चाकरी बढ़ाने के सम्बन्ध में विचार करेंगे। अभी जाकर मुझे रसोइये के काम में नियुक्त होना होगा।

घर की मालकिन बीमार हैं। आज दो दिन से रसोइया भग जाने से बड़ी तकलीफ़ में फँसे हैं।

तीसरा परिच्छेद

इस तरह रसोइया हो बाबू के पीछे पीछे चला। सोचने लगा कि अनेक आराधना के बाद यह एक ऐडवेंचर नसीब हुआ। देखना है, इसमें कोई रहस्य निकलता है या नहीं।

बाबू का नाम कालीकान्त राय है। ब्राह्मण हैं। चोरबागान में रहते हैं। भीतर घुस कर देखा कि छोटे से आँगन में आम की गुठलियाँ, छोड़ी हुई भात-तरकारी, और पत्तलों का ढेर लग रहा है। आँगन के एक कोने में पानी का नल है। नल के पास ही एक हौज़ है। नल के गले से बाँस का एक फटा टुकड़ा कपड़े के किनारे से बँधा है। उससे बह कर पानी हौज़ में गिर रहा है।

कालीकान्त बाबू ने घर के भीतर घुस कर, ऊपर, दुमंज़िले के बराण्डे की ओर ताक कर पुकारा—"सुनती हो? सुनती हो?"

उनकी आवाज़ सुन कर बराण्डे में एक बालिका आकर खड़ी हुई। कहा—"बाबा, चिल्लाओ नहीं। माँ इस समय सो गई हैं।"



यही पहली बार चार आँखें होना है। रोमियो जूलियट का दृश्य याद आया। मेरी जूलियट ने, बाल बिखराये हुए, दूसरी मंज़िल से देखा कि कंधे पर गमछा लटकाये, हाथ में भीगा कपड़ा लिये रसोइया महराजरूपी रोमियो मुग्ध नेत्र से खड़ा है।

जूलियट की उम्र चौदह वर्ष की थी, अपनी जूलियट की उम्र भी उतनी ही कूती। उसकी देह का रंग जूलियट की अपेक्षा कुछ मलिन था किन्तु मुँह-आँखों की सुन्दरता बेजोड़ थी।

कालीकान्त बाबू ने कहा—"प्रिय, आ, नीचे आ, देख तो।"

"प्रिय? प्रियतमा या प्रियंवदा? प्रियबाला भी हो सकती है? प्रियतमा न हो तभी अच्छा। पृथ्वी के सब लोग ही क्या प्रियतमा कह कर पुकारेंगे। प्रियबाला नाम मीठा है। किन्तु प्रियंवदा नाम में मधुरता और काव्य की गंध दोनों हैं। प्रियंवदा शकुन्तला की किन्तु प्रियबाला आज-कल के उपन्यासों की ही पात्र है।"

पाँवों की पायजेबें झमझमाती हुई बालिका नीचे उतर आई। आकर पिता के बग़ल में खड़ी हो उनकी ओर प्रश्नपूर्ण दृष्टि से देखने लगी।

मुझे दिखा कर कालीकान्त बाबू ने कहा—"प्रिय,

इन एक रसोइया महाराज को लाया हूँ। सब इन्तज़ाम कर दो।"

बालिका बड़ी ही सुन्दर थी। सोचने लगा कि क्या इस किशोर हृदय में एक रसोइया स्थान पा सकेगा।

मेरे चिन्ताप्रवाह में बाधा देकर बाबू ने कहा—"आठ बज गये हैं। दस बजे आफिस जाना है। खाना दस बजे के पहले तैयार कर सकोगे?"

मैंने कहा—"मालिक, देखूँ, चेष्टा करूँगा।"

"थोड़ा भात-दाल बना दो। दो चूल्हे जला लो। एक पर भात और एक पर दाल चढ़ा दो। मैं बाज़ार से मछली ला देता हूँ। साग-भाजी सब घर में ही है।

प्रिय ने कहा—"सब है।"

इसके बाद बाबू एक गमछा ले मछली ख़रीदने बाज़ार चले।

मैंने तब बालिका से पूछा—"रसोई-घर किधर है?"

"आओ दिखा दें।"—कह कर प्रिय मुझे अपने साथ ले दूसरे बराण्डे में ले गई। एक घर की जंज़ीर खोलते खोलते कहा—"यही रसोई-घर है।"

"घर के भीतर घुसकर देखा कि चूल्हे में अब तक आग भी नहीं सुलगाई गई है। कहा—"अब तक तो कोई इन्तज़ाम ही नहीं। नौकरानी कहाँ है? चूल्हा में आग सुलगा दे न?"

बालिका ने कहा—"नौकरानी हमारे यहाँ नहीं है। कोई एक महीना हुआ, नौकरानी भग गई। माँ ने कहा कि अब नौकरानी न रक्खेंगी। मैं ही सब करती हूँ। मैं चूल्हे में आग जला देती हूँ।"

देखा, घर के एक कोने में कोयले का एक ढेर लगा है। मैंने कहा—"नौकरानी नहीं ? अच्छा मैं ही आग जला लेता हूँ। तुमको तकलीफ़ करने की ज़रूरत नहीं"—कह कर और कोयले के ढेर के पास जाकर एक ढक्कन भरकर कोयला लाया। चूल्हा जलाने की चेष्टा करने लगा।

यह काम इतना कठिन है यह पहले न जानता था। प्रिय खड़ी खड़ी देखने और मुसकुराने लगी। अन्त में कहा—"कहीं इस तरह कोयला आग पकड़ता है ?"

मैंने हताश होकर पूछा—"बतला दो किस तरह फिर आग पकड़ता है ?"

"चलो, मैं आग जला देती हूँ। तुम मछली के शोरबे के लिए आलू वग़ैरह काट डालो।"

इस मैले काम में बालिका को लगाने में मुझे दुःख होने लगा। किन्तु क्या करूँ, उपाय नहीं। दस बजे भोजन तैयार न होने पर बाबू बड़ा गोलमाल मचायेंगे। इसलिए आग जलाने का काम बालिका के सिपुर्द कर मैं तरकारी काटने लगा।

देखा, हँसिये से तरकारी काटना कठिन है। छुरी से

किसी तरह काटी भी जा सकती है। हम लोगों के मेस का रसोइया जब भग जाता था, तब हम कई जन बैठ कर तरकारी छुरी से काटते थे।

फिर भी, सावधानी से तरकारी काटने लगा। हाथ कट जाने का डर भी लग रहा था। चूल्हा जला कर प्रिय मेरे पास आ खड़ी हुई और गाल पर हाथ रख कर कहा—"वाह! खूब!"

मैंने डरते हुए पूछा—"क्या?"

"यह क्या मछली के शोरबे के लिए आलू काट रहे हो।"

"क्यों?"

"मछली के शोरबे के लिए क्या आलू गोल गोल काटे जाते हैं। इस तरह तो साग के आलू काटे जाते हैं। मछली के शोरबे के लिए आलू के चार टुकड़े किये जाते हैं।"

मैंने लज्जित होकर कहा—"उहँ!"

प्रिय ने कहा—"चलो, उधर। मैं काटती हूँ।"

मैं सरक गया। चूल्हे की सुलगती आग पर पंखा झलने लगा।

बालिका ने मुसकुरा कर पूछा—"रसोई बनाना जानते हो? या वह भी इसी तरह?"

मैंने मन ही मन अत्यन्त कौतुक का अनुभव कर कहा—"इस प्रकार ही।"

"इस प्रकार ही ?" मालूम होता है और कभी यह काम नहीं किया। यही श्रीगणेश है न ?"

"हाँ, यही श्रीगणेश है।"

"तब चाकरी क्यों की ?"

मैंने चाकरी क्यों की यह इस समय बता देने से सब चौपट हो जायगा। दो दिन बाद जाते वक्त, और किसी को न बता कर, इस बालिका से कह जाना स्थिर किया।

बालिका ने मुझे चुप देखकर मेरे मन का भाव कुछ दूसरा ही समझा। उसका मुँह करुणा से रँग गया। मानो अनुतप्त होकर पूछा—"मालूम होता है तुम बहुत ग़रीब हो ?"

मैंने नज़र नीची कर सिर हिलाया। उसकी सहानुभूति गहरी बनाने के लिए कहा—"मैं रँगरूट हूँ, कुछ जानता नहीं—तुम्हारे बाप यह सुनकर क्या मुझे रक्खेंगे ? निकाल देंगे।"

मुझे ढाढ़स देकर बालिका ने कहा—"अच्छा, मैं किसी से न कहूँगी। मैं सब बता दिया करूँगी। तुम दो दिन में सब सीख लोगे।"

"तुम्हारी माँ न जान पायेंगी ?"

"माँ क्या रसोई-घर में आती हैं ? वे ऊपर ही रहती हैं।"

"सुना है, वे बीमार हैं ?"

"वे बारहों मास बीमार रहती हैं ?"

"क्या बीमारी है।"

"किसी दिन यही सिर में दर्द होता है, किसी दिन और कुछ। उनका कोई भय नहीं। वे खूब बकती-झकती हैं, किन्तु ऊपर से ही। सीढ़ी उतरते ही हाँफने लगती हैं।"

"शायद खूब बकती-झकती हैं ? इसी से रसोइया-नौकरानी कोई टिकता नहीं ?"

"बालिका इस बात से मानो कुछ लज्जित हुई। बातें बदलने के लिए पूछा—"तुम्हारा नाम क्या ?"

"प्रियंवदा।"

"प्रियंवदा ? नाम तो अच्छा है !"

बालिका ने लाज से सिर नीचा कर लिया।

फिर पूछा—"तुम्हारे भाई-बहन कितने हैं ?"

"मेरे सगा एक भाई है।"

"और जो दो-तीन छोटे छोटे बच्चे देखे ?"

"वे भी मेरे भाई-बहन हैं ? मेरी इस माँ के बच्चे हैं।"

तब समझा—गृहिणी प्रियंवदा की सौतेली माँ हैं नौकरानी फिर क्यों नहीं रक्खी गई, यह भी समझ गया इस कोमल बालिका के लिए सहानुभूति से मेरा हृदय भ गया।

इसी समय बाबू मछली लाकर आ पहुँचे। बाहर खड़े होकर पूछा—"क्यों, क्या क्या तैयार हो गया?"

मैंने कहा,—"मालिक अधिक देर नहीं!"

"जो हो, चटपट बना लो, समझ गये? बहुत फैलाव न करो। मेरे आफिस चले जाने पर सब बना लेना" कह कर वे ऊपर चले गये।

चौथा परिच्छेद

पहले सोचा था कि दो दिन रसोइये के काम का मज़ा उठा अपने माननीय पूर्ववर्त्तियों का मार्ग अनुसरण करूँगा—अर्थात् भग खड़ा हूँगा। किन्तु आज एक महीने से स्थिर निश्चल भाव से नौकरी कर रहा हूँ। यह कहने की ज़रूरत नहीं कि प्रियंवदा का सुन्दर मुँह मेरे लिए सोने की जंज़ीर हो गया है। फिर भी, प्रियंवदा मुझे अब भी रसोइया ब्राह्मण ही जानती है। तथापि उसके व्यवहार से समझ सकता हूँ कि वह मुझे साधारण ब्राह्मण की अपेक्षा कुछ अधिक स्वतन्त्र समझती है। प्रियंवदा कुछ थोड़ा सा लिखना-पढ़ना जानती है। मैं रसोई घर में बैठ कर काम से फ़ुरसत पाने पर उसे पढ़ाने लगा था। इसी एक महीने के बीच ही दो तीन अच्छी पुस्तकें उसने पढ़ डालीं। एक दिन

उसने मुझसे कहा था—"तुमने रसोइये की नौकरी न कर स्कूल में मास्टरी क्यों नहीं की ?"

मैंने कहा—"मास्टरी करने का विचार करता हूँ। तुम्हारा विवाह हो जाने पर मैं भी चाकरी छोड़ कर चला जाऊँगा।"

पीछे मालूम हुआ कि प्रियंवदा की उम्र चौदह वर्ष की नहीं, केवल तेरह वर्ष की है। किन्तु वह कुछ अधिक उम्र की मालूम होती थी। पहले मुझे आश्चर्य होता था कि इतनी बड़ी लड़की का विवाह क्यों नहीं हुआ। अनन्तर जाना—कालीकान्त बाबू के पुत्रों के प्राइवेट मास्टर से सुना—प्रियंवदा के विवाह-सम्बन्ध की चर्चा कभी कभी चलती है, किन्तु जितनी सस्ताई से ये वर का सौदा करना चाहते हैं, उतना सस्ता कोई वर मिलता नहीं।

मैंने जब से यह सुना तब से सोच रक्खा था कि एक दिन कालीकान्त बाबू के निकट आत्म-प्रकाश कर उसके साथ विवाह की प्रार्थना करूँगा। पहले दो तीन दिन बीतते ही प्रियंवदा के साथ ने मेरे हृदय में सुख-संचार किया था। वह सुख दिन दिन घना होने लगा। उस साथ का छूटना दिन दिन तीव्रतर मालूम होने लगा। उस समय भादों का महीना था। रात में सोने के लिए पास ही एक मकान किराये पर ले लिया था। काम-काज से छूटने पर दिन और रात में वहीं रहता था। घर अधिक भाड़े पर ले लिया था। तसवीरों,

पुस्तकों, साज-सामान से उसे सजाया था। किन्तु वहाँ सुख न मिलता था। वही अँधेरा, धुवें से मैला निकृष्ट रसोईघर मेरे सुख का घर हो गया था। आधी रात को नित्य नींद टूट जाने पर बाहर अंधकार में मेघों का गरजना सुनाई देता था। बड़े ज़ोर से पानी पड़ता था। प्रियंवदा को स्मरण कर सुख की कितनी कल्पना मेरे मन को घेर लेती थी। भादों महीने में हिन्दू का विवाह नहीं होता। सोच रक्खा था कि कुँआर आते ही कालीकान्त बाबू से कहूँगा और पूजा के पहले ही प्रियंवदा को ब्याह कर घर ले जाऊँगा।

किन्तु मुझे शंका भी होती थी। कालीकान्त बाबू मेरे प्रस्ताव को यदि स्वीकार न करें। स्वीकार न करने का कोई कारण तो नहीं दिखाई देता; तथापि शायद स्वीकार न करें। मन से यह आशंका किसी तरह दूर न कर सका। मेरे भाग्य में प्रियंवदा को अपनी बनाने का यदि सुख न बदा हो? तो क्या होगा? किस तरह यह ज़िन्दगी बिताऊँगा।

किन्तु कुँआर का महीना शुरू होने के पहले ही, दूसरी एक अभावनीय घटना से मुझे प्रियंवदा का प्राप्त होना, केवल सम्भावित नहीं अनिवार्य हो गया। जिस अमृत का पान करने के लिए प्यास से उत्कण्ठित हो उठा था, उसी अमृत को एक ने मेरे पास लाकर कहा—"पान करो—पान करना ही होगा।"

एक दिन सबेरे अपने काम पर आकर देखा कि प्रियंवदा शरीर को कपड़े से खूब ढाँक कर आई है। पूछने से मालूम हुआ कि रात में ज़रा ज्वर सा जान पड़ता था, अब भी ठंढ सी लग रही है।

इसी प्रकार दूसरे दिन भी हुआ। ज्वर और उपवास की अवस्था में प्रिय अपना निर्दिष्ट कार्य करने लगी। काम कुछ कम न था। बरतन मलना, कपड़े धोना आदि नौकरानी के सब काम उसी को करने पड़ते थे।

उस दिन कालीकान्त बाबू से कहा—"प्रिय की तबीअत ठीक नहीं रहती। थोड़े दिन के लिए एक नौकरानी रख लेना अच्छा होगा।"

सुन कर बाबू ने नाराज़ हो कर कहा—"तुम तो कह कर निश्चिन्त हो गये; थोड़े दिन के लिए नौकरानी मिले कहाँ?"

बहुत क्रोध आया, दुःख भी हुआ। प्रियंवदा के सम्बन्ध की ला-परवाही मुझे असह्य होने लगी। कहाँ जाने से किसी नौकरानी का पता लग सकेगा, यह भी कुछ मुझे मालूम न था। तथापि कहा—"तो तलाश देखूँ क्या?"

"हा जाओ तो तलाश करो" कह कर बाबू मुँह सिकोड़ कर चले गये।

उस दिन मैंने नौकरानी की बहुत तलाश की पर कोई नौकरानी न मिली।

और एक आफ़त हुई—प्रियंवदा साबूदाना, बार्ली कुछ खाना न चाहती थी। पहले दिन उपवास कर रह गई। दूसरे दिन एक पैसे की लाई ला दी।

प्रियंवदा खाते खाते बोली—"यह मुझे अच्छी नहीं मालूम होती।"

मैंने स्नेह के साथ पूछा—"तुमको क्या खाने की इच्छा है?"

"ज़रा अनार-अंगूर मिले तो खाऊँ।"

दूसरे दिन बाबू से कहा—"प्रिय सागू बार्ली कुछ खाती नहीं। उसके लिए अनार या अंगूर ला देते तो अच्छा था।"

बाबू ने कहा—"अनार! अंगूर! ज्वर पर यह सब खाने से अभी विकार खड़ा हो जायगा। सर्वनाश! ये सब बड़ी ठंडी चीज़ें हैं।"

मैं चुप रहा। अपनी आँखों से देखा है कि गत सप्ताह बाबू की इन स्त्री के पुत्र को जब ज्वर आया था तब अनार-अंगूर, बिस्कुट आदि ढेर का ढेर घर में आया था। मन में स्थिर किया कि आज मैं शाम को प्रिय के लिए खाने की कोई चीज़ लाऊँगा। इससे ये लोग चाहे नाराज़ हो जायँ।

उस दिन शाम को काम पर आते वक्त मैं एक बक्स अंगूर, कई एक अनार और कुछ बिस्कुट लाया। किन्तु प्रियंवदा उस दिन नीचे न उतरी। उसके छोटे भाई सुशील-चन्द्र से पूछने पर मालूम हुआ कि ज्वर बड़े ज़ोर का चढ़ा है।

चिन्तित चित्त से शाम का काम पूरा किया। घर जाने पर सारी रात मुझे नींद न आई।

दूसरे दिन सबेरे जाकर फिर सुवीर से पूछा—"तुम्हारी दीदी की तबीअत कैसी है?"

"दीदी सारी रात पानी पानी चिल्लाती रहीं।"

"देह क्या खूब गरम है?"

"बिलकुल आग की तरह।"

"इस समय कैसी हैं?"

"इस वक्त नींद लग गई है।"

"रात में उनके पास कौन था?"

"मैं ही था। मैं और दीदी एक साथ ही सोते हैं न।"

"तुम्हारे मा-बाप क्या देखने नहीं आये?"

"बाबा सोने के लिए जाने के पहले एक बार देखने आये थे। बहुत रात तक दीदी जब माँ माँ कह कर चिल्लाती रहीं तब माँ एक बार उठ कर आई थीं। बाहर से, खिड़की से बोलीं—'इतना चिल्लाती क्यों है? घर के लोगों को सोने न देगी? चुपचाप पड़ी रह मुँहजली' यह सुन कर डर से दीदी चुपचाप पड़ी रहीं।"

"मैं ऊपर कभी गया न था। किस घर में कौन रहता है, जानता न था। गृहिणी का खाना ऊपर जाता था, पर बराबर प्रियंवदा ही ले जाती थी। कल केवल शाम को बाबू खुद ले गये थे।"

सुधीर से पूछा—"तुम और तुम्हारी दीदी जिस कमरे में रहती हैं, वह किस ओर है ?"

"सीढ़ी से जिस ओर को चढ़ते हैं उसी ओर।"

मन ही मन स्थिर किया कि आज काम से निपटने पर प्रियंवदा को देख आऊँगा। सुधीर से कहा—"देखो, आज तुम स्कूल न जाना। तुम्हारी दीदी की सेवा-टहल करने के लिए और कोई नहीं है।"

सात बजे देखा कि बाबू चादर लिये बाहर जा रहे हैं। सोचा, मालूम होता है, डाक्टर बुलाने जा रहे हैं। एक घंटे में लौट आये। साथ में डाक्टर नहीं, एक नौकरानी थी। बोले—"एक नौकरानी बुला लाया हूँ। क्या क्या काम करना होगा यह सब इसे समझा दो।"

दो दिन पहले, जब तक प्रिय ज़रा उठती बैठती थी, तब तक नौकरानी दुष्प्राप्य थी। आज नौकरानी मिल गई। कुछ दिन पहले लाने से लड़की की तबीअत इतनी ख़राब न होती। बाबू के प्रति घृणा से मेरा हृदय भर गया। छिः छिः दूसरी बार विवाह करने पर क्या अपनी सन्तान पर इस तरह निर्मम और निष्ठुर होना पड़ता है। एकबारगी क्या क़साई होना उचित है ? डाक्टर नहीं, दवा नहीं, पथ्य भी नहीं। मन ही मन प्रतिज्ञा की कि आज मैं ऊपर जाकर प्रियंवदा को ज़रूर ही देखूँगा। उसके लिए दवा-पानी का इन्तज़ाम

करूँगा। मैं खुद ही डाक्टर हूँ। इसलिए मैंने अपने आपको यहीं पहले पहल अभिनन्दन किया।

यथासमय बाबू दफ़्तर चले गये। लड़के (सुधीर को छोड़ कर) स्कूल चले गये। गृहिणी का भोजन ऊपर रख आया। सब कामों से फ़ारिग होने पर सुधीर से कहा—"चलो तुम्हारी दीदी को देखूँ।"

सुधीर के साथ ऊपर जाकर प्रियंवदा के कमरे में प्रवेश किया। एक मैला फटा-पुराना बिस्तरा फ़र्श पर पड़ा था। उसी पर पड़ी वह बालिका तकलीफ़ से छटपटा रही थी।

मैं पास जाकर पत्थर पर बैठ गया। उसका हाथ पकड़ कर पूछा—"प्रिय, कैसी तबीअत है?"

प्रिय ने आँखें खोलीं। मुझे देख कर बोली—"महराज? मेरा सिर फटा जाता है। क्या करूँ?"

"देखा बड़े ज़ोर का जूड़ी बुखार है। तुम्हारा माथा फटा जाता है? अच्छा, मैं अभी अच्छा किये देता हूँ।"

कह, रसोईघर में जा थोड़ा सा सरसों का तेल गरम किया। तवे पर ज़रा आग रक्खी और ऊपर जाकर प्रियंवदा के पाँव के तलवे पर उस तेल की दस मिनट तक मालिश की। अनन्तर पूछा—"सिर का दर्द अब कैसा है?"

प्रिय ने कहा—"बहुत कुछ अच्छा है। अब तकलीफ़ नहीं।"

तब फिर प्रियंवदा के पास जा बैठा। अच्छी तरह

परीक्षा कर, सब पूछ-ताँछ कर, एक प्रिस्क्रिप्शन लिखा। कहा—"प्रिय, तुम ज़रा सो रहो। मैं एक घण्टे के भीतर तुम्हारे लिए दवा लाता हूँ।"

कह, घर से बाहर हो, गाड़ी भाड़ा कर एक पहले दर्जे के दवाख़ाने से दवा तैयार करा लाया।

उस दिन शाम को प्रियंवदा की तबीअत बहुत कुछ ठीक रही।

इस प्रकार मैंने तीन-चार दिन तक दवा की। पहले दिन सोचा था कि, मुझे दवा-पथ्य की व्यवस्था अपने पास से करते हुए देख कर बाबू ख़फ़ा होंगे। किन्तु देखा, ऐसा न हुआ। अनुराग भी नहीं, विराग भी नहीं, पूर्ण तिरस्कार का भाव है। चाहे मरे चाहे जिये। मैं मन ही मन आशा करने लगा कि मैं जब बाबू से उनके जामातृ-पद के लिए प्रार्थना करने जाऊँगा, उस समय भी मानो उनके मन में तिरस्कार का यही भाव रहेगा। अनादर-अवहेला से मुझे कन्यादान दे देंगे। किन्तु शीघ्र ही एक घटना घटी, जिससे मुझे अपने को प्रकट कर उनकी कन्या के लिए प्रार्थी न होना पड़ा।

पाँचवाँ परिच्छेद

प्रियंवदा को दिन दिन आराम होने लगा। किसी के आपत्ति न करने से मैं दोपहर का सारा समय उसी के

साथ बिताने लगा। उससे कितनी ही गपशप चलती थी। बहुत सी अच्छी अच्छी पुस्तकें ला देता था।

उस दिन म्युनिसिपिल मार्केट से अधिक दाम देकर काले अंगूरों का एक गुच्छा ख़रीद लाया था। प्रियंवदा ने कुछ खाया और मुझसे भी खाने के लिए अनुरोध किया। मैंने भी दो एक मुँह में रक्खे।

भादों का महीना बीत रहा था। बहुत गरमी थी। प्रियंवदा का ललाट पसीने से तर हो गया। यह देखकर मैं धीरे धीरे पङ्खा झलने लगा।

क्रम से प्रियंवदा सो गई। बहुत दिनों से तेल न लगाये जाने के कारण उसके बाल पतले हो गये थे। सिर के इधर-उधर के बाल हवा से इधर-उधर उड़ रहे थे।

मैं सतृष्ण नयनों से उसके पीले मुँह की ओर टकटकी लगा देखता रहा। आज भादों महीने का अन्तिम सप्ताह है। एक सप्ताह के बाद मैं कालीकान्त बाबू से प्रस्ताव करूँगा। दुर्गापूजा के पहले ही विवाह करूँगा। अपनी ओर प्रियंवदा के स्नेह के आकर्षण का प्रमाण इन कई दिनों में पा गया था। इन कई दिनों से वह मुझे अपने परम आत्मीय के ही समान समझ रही थी।

थोड़े दिनों में ही जिस बालिका को अपनी पत्नी के रूप मे पाकर मैं सुखी होने की आशा कर रहा था,—वह विश्वस्तचित्त से मेरी सेवा के वश में हो, मेरे पास सो रही

थी। मैं जिस मणि को शीघ्र ही गले में डालकर स्नेह के साथ जिसकी रक्षा करूँगा, मैं एकान्त में उसके सिरहाने बैठा था। मैंने झुककर, अंगूर के रस से भिने हुए, अंगूर की ही तरह कोमल उसके दोनों सुन्दर होंठों को एक बार चूम लिया।

सिर ऊँचा कर देखा कि जो खिड़की बराण्डे की ओर है उसके बाहर की ओर एक स्त्री खड़ी है। अनुमान से समझा कि ये ही गृहिणी हैं। मुझको देखते ही वे हट गईं।

उस दिन शाम को जब रसोई बनाने में व्यस्त था, हठात् बाबू ने आकर आवाज़ दी—"महराज।"

"हुकुम।"

"ज़रा इधर तो आना।"

बाबू की आवाज़ गुस्से से भरी जान पड़ती थी। मैं सब समझ गया। मन ही मन हँसता हुआ बाहर आया।

लड़के जिस घर में प्राइवेट मास्टर से पढ़ते थे, वह घर उस वक़्त ख़ाली था। कालीकान्त बाबू मुझे उसी घर में ले गये। लाल-पीली आँखें कर मुझसे कहा—"क्या सुनता हूँ?"

"क्या सुना है?"

"तुम जानो, प्रियंवदा बिलकुल बच्ची नहीं है?"

"मालूम है।"

"तुमको अत्यन्त सच्चरित्र जानकर बीमारी के दिनों में

उसकी सेवा-टहल करने में मैंने कोई आपत्ति नहीं की, यह तो जानते हो?"

"आपका अनुग्रह है।"

"तुमने प्रियंवदा का मुँह चूम लिया है।"

"हाँ, चूम लिया है।"

"तुमसे यह काम कैसा हो गया है, जानते हो?"

"आपही बतलाइए।"

"पिनाल कोड की एक धारा के अनुसार अपराध हो गया है। मैं यदि पुलिस कोर्ट में तुम पर नालिश करूँ तो क्या होगा, जानते हो?"

"बहुत भले आदमी की तरह, बिलकुल डरे हुए की तरह, मैं बोला—"क्या होगा?"

"जेल होगा।"

"जेल—हाँ?"

बाबू गंभीर भाव से बोले—"जेल होगा। उस दिन बंगवासी में पढ़ा था, कि एक मुसलमान ने एक यूरेशियन बालिका का मुँह जबर्दस्ती चूम लिया था; इसके लिए उसको छः महीने की जेल की सज़ा हुई थी।"

मैं नखरा करता जाने लगा—"आँ! क्या कहते हैं? तो मुझे क्या होगा?"

बाबू ने कहा—"यदि तुम्हारे नाम नालिश करूँ तो क्या करोगे?"

कातर स्वर से कहा—"हुक्म, वकील-बारिस्टर कर एक बार देखूँगा। यदि भाग्य में जेल ही लिखा होगा तो होगा।"

"वकील-बारिस्टर को देने के लिए पैसा कहाँ पाओगे?"

"हुकुम, देश में जो कुछ ज़मीन-जगह है वह सब बेच देना होगा।"

"जेल से छूटने पर क्या खाओगे? फिर तो कोई नौकर रक्खेगा नहीं।"

मैं अपने को बहुत डरा हुआ दिखाकर, टकटकी लगा बाबू के मुँह की ओर ताकता रहा।

अन्त में उन्होंने कहा—"सुनो। तुमने मेरी जवान लड़की का छिप कर अंगस्पर्श किया है, यह बहुत ख़राब किया है। अब तुमको उससे विवाह करना होगा।"

मैं यह पहले ही समझ गया था। उपन्यासों में भी इस प्रकार के बहुत से दृष्टान्त पढ़े थे। रंग देखने के लिए मैंने कहा—"हुकुम, इस पर—इस पर तो कोई आपत्ति नहीं है। पर मैं कुलीन ब्राह्मण हूँ। दहेज, कुल-मर्यादा आदि सभी तरह से यदि मान-रक्षा करें तो फिर मुझे आपत्ति क्या?"

बाबू ने बहुत नाराज़ होकर कहा—"क्या? कुल-मर्यादा! अच्छा, जाओ ज़रा जेल की हवा खा देखो। उससे तुम्हारी कुल-मर्यादा अभी बढ़ जायगी। ब्याह करने पर तुम्हारी नौकरी और भी अच्छी लगेगी।"

अन्त में कहा—"दहेज ! दहेज ! किस मुँह से माँगते हो ? तुमको जेल न भिजवा कर ब्याह करने का जो प्रस्ताव किया है, यह तुम्हारे सौभाग्य की बात है ।"

विनय दिखा कर कहा—"जो हुकुम, यह तो ठीक ही है । यह तो ठीक ही है । तो क्या—"

बीच में ही बाबू बोल उठे—"तो क्या—कुछ नहीं । मैं एक बात कह देता हूँ । रुपया-पैसा पाओगे नहीं । राज़ी हो तो अच्छा । न हो तो जेल जाओ । बस ।"

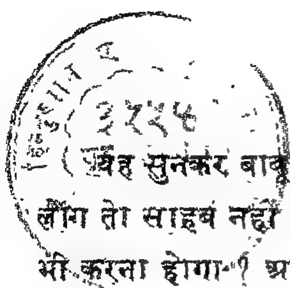
मैंने और भी रंग देखने के अभिप्राय से कहा—"आपकी कन्या के साथ विवाह करना मेरे जैसे मनुष्य के लिए तो विशेष सौभाग्य की ही बात है—किन्तु क्या "

बाबू ने बिगड़ कर कहा—"किन्तु परन्तु क्या ? यदि जेल जाने में ही विशेष सौभाग्य समझते हो तो जेल जाओ ।"

"यह बात नहीं कहता—रुपया कमाने योग्य हुए बिना ब्याह करना ठीक नहीं । खिलाऊँगा क्या ?"

"क्यों, अभी तो कहा, ज़मीन-जगह बेंच कर वकील-बारिस्टर करूँगा,—उसी ज़मीन-जगह पर खेती कर क्या स्त्री का पेट न पाल सकोगे ?"

"ज़मीन तो बहुत थोड़ी है । किसी तरह खाना-पीना तो चल सकता है; किन्तु उसी पर निर्भर होकर क्या विवाह करना उचित है ?—यही देखिए आपके दफ़्तर के छोटे साहब, पाँच सौ रुपये माहवार पाते हैं; किन्तु अब तक ब्याह नहीं किया ।"



यह सुनकर बाबू जल उठे। बोले—"वे साहब हैं। हम लोग तो साहब नहीं। वे जो करेंगे वही क्या हम लोगों को भी करना होगा? आँख बन्द कर अनुकरण करते करते ही तो देश की यह दशा हो गई।"

यहाँ यह पचड़ा खतम करना अच्छा समझ कर बोला—"तो नहीं! तो नहीं! ब्याह ही करूँगा।"

"यही ठीक है। कुआर आ ही रहा है। दुर्गापूजा की छुट्टी होने पर पश्चिम घूमने जाऊँगा। मधुपुर या देवघर कहीं जाकर, पुरोहित को बुला ब्याह कर दूँगा।"

"तो इतनी दूर ले जायँगे? यहाँ न होगा?"

"यहाँ? रसोइये के साथ लड़की का ब्याह कर समाज में मुँह दिखा सकूँगा? नहीं—नहीं—यह न होगा। वहाँ ब्याह हो जाने से कोई जाने सुनेगा नहीं—चुपचाप हो जायगा—यहाँ आकर कह-सुन देना होगा कि एक अच्छा पात्र पा जाने से ब्याह कर आया हूँ।"

छठा परिच्छेद

दुर्गापूजा की छुट्टी हुई। बाबू ने परिवार के साथ देवघर की यात्रा की। मुझे भी साथ लिया। अब तक प्रियंवदा

ने इस विषय में कुछ भी न सुना था। उसके माता-पिता ने सब छिपा कर ठीक-ठाक किया था।

मेरे एक वकील बन्धु उसी समय छुट्टी में मधुपुर जा रहे थे। उनसे कह दिया था कि मेरे लिए एक अच्छा घर किराये पर ले रक्खें।

शुभ दिन में देवघर में मेरा विवाह हुआ। नववधू को लेकर यात्रा की। ससुर ने दया कर अपने व्यय से हम लोगों के वास्ते यशोधर के लिए तीसरे दर्जे के दो टिकट ख़रीद दिये।

सोहाग-रात के बाद दूसरे दिन हम लोगों ने यात्रा की। अब तक प्रियंवदा जानती थी कि हम लोग यशोधर ही जा रहे हैं।

मधुपुर में गाड़ी ठहरने पर ज़नाना-गाड़ी से प्रियंवदा को उतारा।

प्रिय बोली—"यहाँ क्यों ?"

मैंने कहा—"यहाँ कुछ दिन ठहर कर फिर चलेंगे।"

जो घर ठीक किया गया था, उसी में उतरा।

प्रिय ने पूछा—"यह घर किसका है ?"

"इस समय हमारा है। हमने भाड़े पर लिया है। यहाँ हम दोनों एक आध महीना ठहरेंगे।"

संध्या का समय है। दोनों एकान्त में सुखपूर्वक बैठे थे। इस बार प्रियंवदा से सब कुछ कह दिया। सोचा, प्रिय

खूब चकरायेगी। किन्तु प्रिय ने कहा—"मुझे तो मालूम है।"

"तुमको मालूम है? कैसे जाना?"

"क्यों, मेरी बीमारी के समय तुमने एक बार मुझे रवि बाबू की काव्य-ग्रन्थावली पढ़ने के लिए लाकर दी थी, याद है?"

"—पढ़ा था?"

"उसमें एक चिट्ठी रक्खी थी। मालूम होता है, तुम्हारे किसी बन्धु की चिट्ठी थी।"

आश्चर्य के साथ बोला—"बन्धु की चिट्ठी? किसकी चिट्ठी थी, बतलाओ तो सही? उसमें लिखा क्या था?"

"नाम तो याद नहीं। उसमें लिखा था,—'यह तुम्हारा कैसा पागलपन है! ज़मींदार के लड़के होकर, डाक्टरी पास कर, रसोइये का काम करते हो?' और भी सब लिखा था।"

तब मुझे याद आया। उन्हीं वकील बन्धु ने, जिन्होंने घर किराये पर ले दिया था, वह पत्र लिखा था। वे मेरे विशेष अन्तरंग बन्धु थे। उनको मैंने पहले ही सब बातें लिख दी थीं। इनकी चिट्ठी में यह बात लिखी थी,—यह भी लिखा था कि यदि मालिक की लड़की से प्रेम ही हो गया हो तो जल्दी अपना परिचय देकर विवाह कर सकते हो। रसो-इयापने में क्या चातुर्य है यह न समझ कर उन्होंने मेरा तिरस्कार किया था।

मैंने तब प्रिय से कहा—"यह याद आता है। अच्छा, उसमें और क्या लिखा था, बताओ।"

प्रिय ने लज्जा के साथ मुसकुरा कर कहा—"जाओ, न बताऊँगी।"

"नहीं, बताओ।"

"नहीं, न बताऊँगी।"

"बहुत ज़िद करने पर भी न कहला सका। अन्त में कहा—"मैं तुमको प्यार करता हूँ, यह तुम उस चिट्ठी को ही देख कर जान गई थीं ?"

प्रिय आँखें नीची कर अँगूठे पर आँचल बाँधते बाँधते मुसकुराने लगी।

मैंने उसके गले में हाथ डाल कर उसका मुँह चूम लिया। कहा—"तुमने बड़ा अन्याय किया है।"

"क्या ?"

"पराये की चिट्ठी पढ़ ली।"

"मैं तुम्हें पराया समझती हूँ ?"

"तब तो विवाह हुआ न था। मैं तुमको प्यार करता हूँ, यह तब जानती न थीं। तब मैं पराया न था ?"

"क्या मालूम ?"

"फिर ?"

"हम लोगों ने जब जन्म लिया था, तभी तो विधाता ने हम दोनों का ब्याह होना ठीक कर दिया था।"

प्रियंवदा का फिर चुम्बन करने के लिए ज्योंही बाहु फैलाया, त्योंही नौकर ने आकर खबर दी—"माली फूल लाया है ।"

बाहर जाकर देखा, माली रंग रंग के ढेर के ढेर फूल लाया है । उसी फूल से रात में हमारी फूलशय्या हुई ।



विवाह का विज्ञापन

पहला परिच्छेद

गाज़ीपुर शहर के गोराबाज़ार महल्ले में रामऔतार नाम का एक कायस्थ युवक रहता है। उसकी अवस्था बीस वर्ष की होगी। वह कुछ अँगरेज़ी लिखना-पढ़ना जानता है। मैट्रिक परीक्षा में कई बार फेल होने पर वह अब पढ़ना-लिखना छोड़-छाड़ कर घर में बैठा मौज करता है।

वैशाख का महीना है। दिन की प्रचण्ड गरमी के बाद इस समय ज़रा ठंडी ठंडी हवा चलने लगी है। रामऔतार नंगे बदन हाथीदाँत की खड़ाऊँ पहने खटखट करता सदर घर के बराण्डे में आ खड़ा हुआ। नौकर ने एक कुर्सी लाकर रख दी। रामऔतार ने बैठ कर कहा—"चतुरी भाँग तैयार हो गई है? ले आ।"

कुछ देर के बाद चतुरी उर्फ़ चतुर्भुज ने चाँदी के एक गिलास में गुलाब-मिली विजया लाकर दी। रामऔतार अमीर आदमी है। घर सड़क से बिलकुल मिला-जुला है, बाज़ार

से कुछ दूर है। इसलिए ज़रा एकान्त सा है। रास्ते में आने-जानेवालों की संख्या बहुत अधिक नहीं केवल बीच बीच में दो एक इक्का झम झम शब्द करते दौड़ते निकल जाते हैं। रास्ते की मोड़ पर सिरस का एक पेड़ है। उसमें कोमल कोमल अगणित फूल लगे हैं। दूसरी ओर म्युनिसिपेलटी की एक लालटेन धुँधली रोशनी फैलाने की चेष्टा कर रही है।

रामऔतार आराम से बैठा भंग पी रहा है। सहसा कुछ दूर पर ज़ोर की आवाज़ "गुलाबछड़ी" सुनाई पड़ी।

गुलाबछड़ीवाले ने कैरोसीन तेल की एक तेज़ चिमनी के साथ थाल कंधे पर रक्खे घर के सामने आकर आवाज़ दी —

क्या मज़ेदार गुलाबछड़ी
जो खावे, सो मज़ा पावे;
जो चक्खे, याद रक्खे;
गुलाबछड़ी

घर के भीतर से फ़ौरन एक पाँच वर्ष का लड़का निकल आया। उसने रामऔतार के पास आकर हठपूर्वक कहा—"भैया मैं गुलाबछड़ी खाऊँगा।"

यह सुनकर फेरीवाले ने रास्ते पर खड़े हो बराण्डे पर अपना थाल उतारा। बालक मोहनलाल की ओर देखकर कहा—"गुलाबछड़ी–नानखटाई सोहन हलुआ–क्या लोगे बोलो?"

बालक गुलाबछड़ी का पक्षपाती था। उसने कई एक

गुलाबछड़ियाँ ख़रीदीं। फेरीवाले ने अपनी बग़ल से हिन्दी का एक अख़बार निकालकर उसका कुछ अंश फाड़कर उसमें गुलाब-छड़ियाँ लपेट मोहनलाल के हाथ में दीं। इसके बाद थाल उठाकर पहले की ही तरह मध्यम स्वर से 'गुलाबछड़ी' बोलता बोलता वह रवाना हुआ।

मोहनलाल बड़े आनन्द से बराण्डे में नाचता नाचता गुलाबछड़ी खाने लगा। कुछ देर के बाद भाई के पास आ फटा काग़ज़ दिखाकर कहा—"देखो भैया हाथी की एक तसवीर है।"

रामऔतार ने काग़ज़ हाथ में लेकर देखा, एक हाथीमार्का दवा का विज्ञापन है। किन्तु उसकी बग़ल में जो छपा देखा उससे उसका कौतूहल बढ़ गया। बग़ल में छपा था—"विवाह का विज्ञापन।"

बाँयें हाथ में सिद्धि का गिलास ले दाहिने हाथ में अख़-बार का टुकड़ा ले रामऔतार ने बैठक में प्रवेश किया। रोशनी के पास खड़े हो उसने पढ़ा:—

"विवाह का विज्ञापन।

प्रार्थना-समाजी एक भले आदमी के एक १७ वर्ष की सुन्दरी कन्या है उसके विवाह के लिए कायस्थ जाति के एक सुशिक्षित सच्चरित्र वर की आवश्यकता है। विवाह के बाद हम

लोग लड़के को शिक्षा पाने के लिए विलायत भेजना चाहते हैं। पात्र व अभिभावक पहले पत्र लिखकर फिर मुझसे मिलें। —

लाला मुरलीधरलाल
महादेव मिश्र का घर
केदारघाट, बनारस सिटी।"

रामऔतार ने दो बार विज्ञापन पढ़ा। पढ़ने के बाद उसके मुँह पर कुछ हँसी दिखाई पड़ी। बराण्डे से लौट कर कुर्सी पर बैठ सिद्धि पीते पीते तरह तरह की बातें सोचने लगा।

सोचा, यह तो बड़े मज़े का विज्ञापन है! उसका तो लड़कपन में ही विवाह हो गया है। नहीं तो यह अच्छा सुयोग प्राप्त हुआ था। सत्रह वर्ष की सुन्दर कन्या—नहीं मालूम देखने में कैसी हो; प्रार्थना-समाजी की कन्या है। बंगाल में जैसे ब्रह्म-समाजी हैं प्रार्थना-समाजी भी वैसे ही हैं। रामऔतार ने यह सुना था। अब तक जब लड़की कारी है तब ज़रूर ही शिक्षित है और गाना-बजाना जानती है। इस प्रकार की महिलाओं के सम्बन्ध में रामऔतार के मन में बहुत दिनों से अनन्त कौतूहल संचित था।

सिद्धि पी चुकने के बाद ग्लास को नीचे रखकर रामऔतार ने सोचा—"एक काम करूँ, चिट्ठी लिखकर और फिर जाकर इन लोगों से भेंट करूँ। कुछ दिन तक उनके घर आना जाना जारी

रख, मज़ा ही क्यों न लें। इसके बाद मौक़ा पाकर भगा लाऊँगा।"

भाँग के नशे में इस आनन्द की लहरें मन में लहरा लहरा उठने से रामऔतार बहुत हँसने लगा। उसका विवाह होगया है, ये लोग यह कैसे जान पायेंगे? कुछ दिन कोर्टशिप करने के बाद फिर चम्पत। रामऔतार लगातार हा हा कर हँसने लगा।

सोचा, अब देर करना ठीक नहीं। चिट्ठी अभी लिखना होगा। रामऔतार ने उठकर बैठक में प्रवेश किया। पलँग पर बैठकर आगे बकस रखकर चिट्ठी लिखने लगा। अभ्यास के अनुसार पहले लिखा "श्रीगणेशाय नमः" इसके बाद सोचा कि वे लोग प्रार्थना-समाजी हैं, हिन्दू-देव-देवियों का नाम देखकर बिगड़ जायँगे; उसे बिलकुल असभ्य जानेंगे। इसलिए दूसरे काग़ज़ पर "ओम् ईश्वरो जयति" लिखकर प्रारंभ किया। मैट्रिकफेल होना जानकर कहीं वे यथेष्ट शिक्षित न समझें इसी से लिखा कि वह बी० ए० परीक्षा फेल है। अपनी सच्चरित्रता के सम्बन्ध की बातें लिखते समय उसके मुँह पर हँसी की रेखायें दिखाई पड़ीं। क़लम रखकर कुछ देर तक हँसता रहा। अनन्तर लिखा—वह जाति-भेद नहीं मानता, विलायत जाने में कुछ भी आपत्ति नहीं; कुमारी का यदि एक फ़ोटोग्राफ़ हो तो कृपा कर भेज दें—लिखकर चिट्ठी पूरी की।

उस दिन रामऔतार को अच्छी तरह नींद नहीं आई।

भविष्य बातों की वह जितनी ही कल्पना करता है, हँसी रोकना उसे उतना ही कठिन हो जाता है।

दूसरा परिच्छेद

काशी के केदारघाट के निकट एक छोटी गली में एक तिमंज़िला घर है। दोपहर के वक्त उस घर के एक कमरे में फ़र्श पर शतरंज बिछा कर दो व्यक्ति बैठे खेल रहे हैं। उसमें से एक पुरुष का शरीर दृढ़, बलिष्ठ, कुछ स्थूल और गौर है। दूसरे का शरीर दुबला होने पर भी उसके शारीरिक बल का परिचय अंग प्रत्यंग से फूटता है। ये दोनों व्यक्ति काशी के प्रसिद्ध गुण्डे हैं। पहले कहे गये व्यक्ति का नाम महादेव मिश्र है। वह इस घर का मालिक है। दूसरे का नाम कन्हाईलाल है। वह महादेव मिश्र का एक प्यारा शागिर्द है।

नौकर ने आकर तम्बाकू दी। इसके बाद अपनी मिरज़ई की जेब से एक चिट्ठी निकाल कर कहा—"चिट्ठी आई है।"

कन्हाईलाल ने लेकर ठिकाना पढ़ा—"लाला मुरलीधरलाल, महादेव मिश्र का घर, केदारघाट, बनारस सिटी।" पढ़कर कन्हाईलाल ने कहा—"लाला मुरलीधर तुम्हारे किरायेदार हैं। लाला मुरलीधर को तो यह घर छोड़े हुए दो तीन साल हो चुके।"

महादेव ने तम्बाकू पीते पीते कहा—

"लाला मुरलीधर की बदली तो लखनऊ को हो गई है . चिट्ठी खोलो; पढ़ो क्या लिखा है ।"

कन्हाईलाल ने कहा—"मुरलीधर का ठिकाना काटकर भेजेंगे नहीं ?"

महादेव ने कहा—"अरे क्या समाचार है, यह तो पहले जानना ही होगा । खोलो । पढ़ो ।"

कन्हाईलाल ने गुरुजी के आज्ञानुसार चिट्ठी खोलकर पढ़ी ।

"महाशय,

समाचारपत्र में आपकी कन्या के विवाह का विज्ञापन पढ़ा है । मैं एक भले घर का कायस्थ युवक हूँ । मेरी अवस्था केवल २२ वर्ष की है । मैंने इलाहाबाद-कालेज में बी० ए० तक पढ़ा है । किन्तु परीक्षा के पहले बीमार हो जाने के कारण पास न हो सका । मैं जाति-भेद नहीं मानता, लड़कपन से ही मेरी इच्छा विलायत जाने की है । यदि आप अपनी कन्या के लिए योग्य पात्र समझें तो मैं विवाह करने को तैयार हूँ । मैं बाल्य विवाह का विरोधी हूँ । इसलिए अब तक विवाह नहीं किया है । मैं सच्चरित्र और सत्यवादी हूँ । आज्ञा पाने पर मैं आपका दर्शन करूँगा । यदि कुमारी का एक फ़ोटोग्राफ़ हो तो भेजकर बाधित कीजिएगा ।

लाला रामऔतारलाल

महल्ला गोराबाज़ार,

शहर गाज़ीपुर ।"

चिट्ठी सुन कर महादेव मिश्र हँसने लगा। कहा—"यह तो अच्छा तमाशा है। उस लड़की का विवाह तो कभी का हो गया है।"

महादेव ने कहा—"जानते नहीं? लाला मुरलीधर ने अखबारों में नोटिस छपा दिया था न। वे तो ब्रह्मसमाजी हैं न। उनके साथ तो भले कायथ सम्बन्ध न करेंगे। इसी से नोटिस छपा दिया था?"

"मैंने तो सुना है कि कायस्थ के साथ ब्याह हुआ है।"

"हाँ हाँ—कायथ तो था किन्तु विलायत जाकर बालिस्टर हो आया था। कायथ था, बड़ा घराना भी था। नोटिस पढ़कर और लोग भी आये थे? किन्तु लाला मुरलीधर ने कहा कि जब मैं बालिस्टरी पास किया जमाई पा रहा हूँ तब और किसी से ब्याह क्यों करूँ। इसी घर में तो विवाह हुआ था, यह तो तीन साल की बात है।"

कन्हाईलाल ने सिर हिलाकर कहा—"ठीक ठीक।" कुछ क्षण चिन्ता कर कहा—"फ़ोटूगिराप भेजने को जो लिखा है वह क्या?"

मिश्र ने कहा—"जानते नहीं—यह तसवीर है। एक बक्स होता है, उसमें एक शीशा लगा रहता है। मनुष्य को सामने खड़ा कर देने से भीतर तसवीर खिँच जाती है। उसी को फोटूगिराप कहते हैं।"

कन्हाईलाल ने कहा—"ओ हो! ठीक! ठीक! अ

मालूम हो गया। अब तो एक अच्छा शिकार मिल गया है। चिट्ठी लिख कर बुलाया जाय।

महादेव मिश्र ने कहा—"लेने के लिए आयेगा तब निश्चय ही सोने की घड़ीचेन लगाकर आयेगा। यदि अपने यहाँ ये चीज़ें न होंगी तो दूसरे के यहाँ से माँग कर लायेगा। उसे आने को लिखता हूँ। केवल चिन्ता यह है कि—फोटू-गिराप कहाँ मिले।"

महादेव मिश्र ने कहा—इसके लिए चिन्ता न करो। बाज़ार में बहुत से फोटूगिराप मिलेंगे। वह जो मोहम्मदख़ाँ की दूकान है न; वहाँ पारसी थेटर की ख़ूबसूरत औरतों की तसवीरें हैं। वहाँ से एक भेज देना होगा।"

तब सलाह पक्की हो गई। यह भी स्थिर हो गया है कि इस घर में बुलाना न होगा नहीं तो पीछे पुलिस को पता लग सकता है। एक दूसरा घर सजा कर और उसे वहाँ ले जाकर काम साधना होगा। एक प्याला भाँग और उसके साथ थोड़ा धतूरे का रस—और कुछ न करना होगा।

तीसरा परिच्छेद

सन्ध्या का समय है। गोरा बाज़ार की उसी बैठक में अधलेटा हुआ रामऔतार धूम्रपान कर रहा है, और

कभी कभी सड़क की ओर उत्सुकता से देखता है। डाकवाले के आने में अब विलम्ब नहीं। आज दो दिन से रामऔतार इस प्रकार प्रतीक्षा कर रहा है। कारण, अब तक चिट्ठी का जवाब नहीं आया।

डाकवाला आकर एक पत्र और एक पैकेट दे गया। हस्ताक्षर अपरिचित हैं। बनारस सिटी की मोहर लगी है।

हर्ष से फूल कर रामऔतार पलँग पर बैठ गया। पहले पैकेट को ही खोला। फ़ोटोग्राफ़—सुन्दरी युवती का है। आश्चर्य छवि! ललचाती हुई आँखों से रामऔतार फ़ोटो-ग्राफ़ की ओर देखता रहा। शरीर में पारसियों जैसी साड़ी है। ब्रह्म-समाज की स्त्री-कन्यायें भी इस तरह की साड़ी पहनती हैं। यह उसने रेल पर कई बार देखा है। मुँह आँखों की बनावट कैसी सुन्दर है। रामऔतार मनही मन सोचने लगा। वाह वा! क्या बहार है! वाह रे मैं!

फ़ोटोग्राफ़ को हाथ में लिये खोला। उसमें इस प्रकार लिखा था––

"महाशय,

आपकी चिट्ठी मिल गई है। आगामी शनिवार को शाम की गाड़ी में आप आजायँ तो अच्छा। आपके साथ मेरी मुलाक़ात होने पर और बातें होंगी। मैंने हाल में घर बदल दिया है। इसलिए केदारघाट के घर में न आइएगा।

मैं स्टेशन पर आदमी भेज दूँगा। वह आपको अपने साथ ले आवेगा। उस दिन शाम को मेरे घर आपके भोजन करने से मैं अत्यन्त सुखी हूँगा। फ़ोटोग्राफ़ भेजता हूँ।

लाला मुरलीधर लाल"।

रामऔतार पत्र को रखकर फिर फ़ोटोग्राफ़ को देखने लगा। एक हाथ बग़ल में लटका हुआ है। दूसरा आधा उठा हुआ साड़ी का एक अंश पकड़े है। आँखें दोनों मानो हँस रही हैं। सोचने लगा, इससे बातचीत होने में कैसा मज़ा आवेगा।

भौंहें टेढ़ी कर रामऔतार ने सोचा, लिखा है कि शनि-वार की शाम की गाड़ी से आना। तो अभी दो दिन की देर है। शनिवार न लिख कर शुक्रवार क्यों न लिखा। इन दो दिन में बहुत अच्छी तरह तैयारी कर लेनी होगी।

शनिवार के दिन भोजन कर रामऔतार ने घर में कहा—ज़रा काशीजी दर्शन करने जाता हूँ—कह कर अपना वेश सजाने लगा। ऐसे वेश में जाना होगा जिससे पहली ही मुलाक़ात पर कुमारी के मन में प्रभाव का संचार हो जाय। अच्छी रेशमी चपकन निकालकर रामऔतार ने पहनी। ज़री के काम की सुन्दर मख़मली टोपी सिर पर रक्खी। दिल्ली से लाये हुए सुन्दर मुलायम रंगीन जूतों से पाँवों की शोभा बढ़ाई। हिना के बढ़िया इत्र से रूमाल को तर किया। अपनी मूँछों और भौंहों में ज़रा लगा लिया। काशी में कितने दिन

रहना पड़ेगा इसकी कोई मियाद नहीं। ख़र्च आदि वहाँ अच्छा ही करना होगा। इससे दो सौ रुपये भी अपने साथ लिये। सोने की घड़ी, सोने की चेन और हीरा जड़ी अँगूठी पहन कर गाड़ी पर सवार होकर स्टेशन की ओर रवाना हुआ।

गाड़ी पर सोचता जाने लगा, युवती से भेंट होने पर किस तरह बातचीत करनी होगी। अँगरेज़ी ढंग की एक कोर्टशिप होती है, यह वह जानता है। किन्तु उसके प्रकरण के विषय में कुछ जानता नहीं। अँगरेज़ी उपन्यास वह कभी पढ़ता नहीं। तथापि 'लालहीरा की कथा', 'लयलामजनू', 'गुलबकावली' आदि उसकी पढ़ी हुई हैं। सोचा इन ग्रन्थों में वर्णित प्रथा का अवलम्ब लेना शायद अनुचित न होगा। केवल पहले पहल कुछ आत्मसंयम दिखाना ही अच्छा है। पहले आदर का 'तू' न कहकर 'आप' कहना ही उत्तम होगा। कारण, सब महिलायें लिखी-पढ़ी और सभ्यता-प्राप्त हैं। बात यह है कि इस प्रकार की कोई बात न करनी होगी जिससे वह विरक्त हो। दो चार दिन आने जाने के बाद एक दिन एकान्त में प्यारी कहकर बातचीत करना शायद अनुचित न होगा।

रामऔतार इस तरह की पर्यालोचना और भविष्य-सुख की कल्पना कर रहा था। क्रम से गाड़ी आकर राजघाट स्टेशन पर आ खड़ी हुई।

रामऔतार उतर कर इधर-उधर देख रहा था, इसी

समझ एक युवक उसके पास आकर खड़ा हुआ। युवक की उत्तरीय और पंजाबी कमीज़ रंग से रँगी है। आकर पूछा—"आपका नाम क्या? लाला रामऔतारलाल है?"

"हाँ, आपका नाम क्या है?"

"किसनप्रसाद। मैं लाला मुरलीधरलाल का भतीजा हूँ। मैं आपको लेने आया हूँ" कह कर वह आदर के साथ रामऔतार को बाहर ले गया।

बाहर गाड़ी खड़ी थी। गाड़ी पर चढ़ कर किसनप्रसाद ने कहा—"द्वार और खिड़कियाँ बन्द कर दूँ क्या? आज बैसाखी पूर्णिमा होने से काशी में छोटा दोलोत्सव है। देखिए न, आते समय दुष्टों ने पिचकारी मार कर मेरा कपड़ा किस तरह बिगाड़ दिया है।

रामऔतार ने व्यस्त होकर कहा—"बन्द कर दीजिए। बन्द कर दीजिए"। उसको भय हुआ कि कहीं कोई पिच-कारी मार कर उसकी रेशमी पोशाक नष्ट न कर दे।

दोनों वार्तालाप करने लगे। क्रम से गाड़ी गन्तव्य स्थान पर पहुँची। उतर कर रामऔतार ने देखा कि पत्थर की बनी हुई अट्टालिका है। इधर-उधर देखे बिना ही किसनप्रसाद के पीछे पीछे भीतर प्रवेश किया।

पहले अत्यन्त अन्धकार मिला। इसके बाद सीढ़ियाँ दिखाई पड़ीं। वहाँ बत्ती जल रही थी। सीढ़ी से चढ़ कर रामऔतार एक बड़े कमरे में पहुँचा। उसने पहले सोचा था कि जब ये

लोग नई रोशनी के हैं तब घर साहबी ढङ्ग से सजा होगा। किन्तु देखा, वैसा नहीं है। कमरे के बीच में फ़र्श पर बिछौना बिछा है। कई तकिये रक्खे हैं। बीच में बैठा एक स्थूलकाय, बलिष्ठ और गौरवर्ण पुरुष धूम्रपान कर रहा है।

किसनप्रसाद उर्फ़ कन्हाईलाल ने पहुँच कर कहा—"चाचाजी यह लाला रामऔतारलाल आ गये हैं।" चाचाजी और कोई नहीं स्वयं महादेव मिश्र है। महादेव ने बड़ी प्रसन्नता से रामऔतार को बिठाया। नाना प्रकार के वार्तालाप में कुछ समय बीता, कन्हाईलाल को इस प्रकार सम्बोधन कर कहा—"किसन, तो मैं भीतर जाकर उन सबको तैयार होने कहता हूँ। तुम तब तक इनको कुछ जलपान कराओ।"

यह कर महादेव मिश्र उठ गये। कन्हाईलाल वहाँ बैठा रहा। कुछ क्षण के बाद एक नौकर चाँदी के गिलास में थोड़ी सुगन्धित सिद्धि और मिष्टान्न लाकर हाज़िर हुआ।

किसनप्रसाद ने कहा—आप थक गये हैं। इसी से एक पियाला सिद्धि का प्रबन्ध किया है। हम काशी-निवासी सिद्धि के बड़े भक्त हैं। थकावट दूर करने के लिए सिद्धि की जैसी कोई चीज़ नहीं।

रामऔतार ने अनुरोध से सिद्धि और मिष्टान्न को पेट को भेट किया। जेब से घड़ी निकाल कर देखा नौ बजे हैं। घड़ी देखते देखते उसकी दोनों आँखें नींद से मुँदने सी लगीं।

कन्हाईलाल ने कहा—"आप गाना बजाना जानते हैं

क्या ? हमारे घर की स्त्रियों को गाना बजाना बहुत प्रिय है।"

रामऔतार ने कहा—"गाना ! गाना ! जानते हैं क्या। सुनेंगे एक।"

उस समय नशे से उसका दिमाग चमचमा उठा। सोचने लगा मानो चारों ओर दीपमालिका का दृश्य हो। बहुत से लोग मानो उसे चारों ओर से घेरकर सारंगी, बेहाला, बीन लिये खड़े हैं। वे सब मानो ताल पर नृत्य करने लगे।

रामऔतार ने खड़े होकर कहा—"गीत ? सुनेंगे एक ?" कह आँखें मूँद गाने लगा।

बता दे सखि कौन गली गये श्याम
गोकुल ढूँढ़ी
वृन्दावन ढूँ—

और कुछ मुँह से न निकला। ढूँ...ढूँ...ढूँ कई बार कह बिछौने पर लेट गया। उसके मुँह से लार निकलने लगी !

कुछ देर के बाद महादेव मिश्र ने आकर प्रवेश किया। कहा—"क्यों बे कन्हैया, दवा का असर हुआ ?"

कन्हाईलाल ने हँसकर कहा—"हाँ, असर तो हुआ ही है। जाय कहाँ ?"

महादेव ने कहा—"देखो क्या क्या है ?"

तब कन्हाईलाल ने बेहोश रामऔतार की घड़ी, चेन, हीरा जड़ी अँगूठी, दो सौ रुपया, पान रखने का चाँदी का डब्बा आदि निकाल लिया। महादेव ने रुपया गिनते गिनते कहा—"कपड़े उतार लो। क़ीमती हैं।"

गुरुजी के आज्ञानुसार कन्हाईलाल टोपी, जूता, रेशमी पोशाक सब उतारकर उसको एक चिथड़ा पहनाने लगा।

महादेव ने कहा—"नहीं, नहीं, इसे बाबाजी बनाकर छोड़ दो। कल सबेरे जब नशा उतरेगा तब खावेगा क्या! एक गेरुआ कोपीन पहना दो। देह में सर्वत्र भस्म रमा दो। एक चिमटा दे दो। साथ में एक झोली भी दे दो। काशी में संन्यासी वेशधारी कभी भूखों नहीं मरता।"

कन्हाईलाल ने इसी प्रकार सब कर दिया! महादेव ने जेब से कुछ पैसे निकाल कर कहा—"ये कुछ पैसे भी झोली में डाल दो। अभी दो घण्टा यहीं पड़ा रहने दो।"

इसके बाद अँधेरी अँधेरी गलियों से लेजाकर मान-मन्दिर की ड्योढ़ी में सुला आना। सारी रात ठंड से खूब सोयेगा। नशा भी रात बीतते बीतते दूर हो जायगा।

× × ×

कई दिन के बाद ग़ाज़ीपुर के सब लोगों ने सुना कि राम-

श्रीतारलाल ने धन-दौलत छोड़ छाड़ कर संसारत्यागी हो काशी में जा संन्यास ले लिया है। सौभाग्य से उसके मामा काशी में उसको इस अवस्था में देख कर बहुत कष्ट से गृहस्था-श्रम में लाये हैं। धार्मिक व्यक्ति का रूप पाने से अब से राम-श्रीतारलाल की कुछ प्रसिद्धि हो गई है।

आधुनिक संन्यासी

पहला परिच्छेद

बाँकीपुर के कालेज में पढ़ता था। हिन्दूपने की ओर अधिक प्रवृत्ति थी। सिर में लम्बी चुटैया थी। नित्य बड़े सवेरे उठ कर गङ्गास्नान कर आता था। मछली तो खाता था, किन्तु मांस न खाता था। हम लोगों के मेस में हफ्ते में एक दिन मांस बनता था। उस दिन मैनेजर मेरे लिए दूध का इन्तज़ाम कर देते थे।

बाँकीपुर में एक बड़ा शिवालय है। वहाँ प्रायः घूमने जाया करता था। इसलिए कि किसी साधु-महात्मा का कदाचित् दर्शन हो जाय। 'साधु' का दर्शन तो बिलकुल ही दुर्लभ न था, किन्तु साधु-महात्मा का दर्शन कभी हुआ नहीं। अधिकांश साधु प्रायः निरक्षर होते हैं। यह कहना अनुचित न होगा कि शास्त्र का ज्ञान उनको शुरू में नहीं होता—केवल कुछ उपदेश और ज्ञान के पद याद होते हैं और भस्म लगाने में बड़े ही निपुण होते हैं। तथापि ऐसे

साधुओं के पास जाकर बैठता था, धर्मतत्त्व के विषय मे प्रश्न करता था।

उस समय मैं बी० ए० में पढ़ता था। परीक्षा के लिए केवल पाँच दिन बाकी थे। एक मनुष्य ने यह ख़बर सुनाई कि गंगा के तट पर एक यथार्थ साधु उतरे हैं। यह ख़बर सुनते ही मैं किताब बन्द कर बाहर निकला। अकेले ही गंगातट की ओर चल पड़ा।

उस समय तीन बजे थे। गंगातट पर, स्नान के घाट से दूर पर, फूस की एक झोपड़ी बनी थी। वहीं साधु बाबा ने आश्रम जमाया था। मैं नंगे पाँव वहाँ जाकर पहुँचा और साधु बाबा के निकट तीन चार आदमियों को बैठे देखा। साधु बाबा उन लोगों से हिन्दी में बातें कर रहे थे।

मैं दोने में कुछ मिठाई ले गया था। वह मिठाई और एक चवन्नी साधु बाबा के चरणों के पास रख कर प्रणाम किया। अन्य भक्तों की भेंट भी वहाँ रक्खी देखी।

साधु बाबा उन लोगों से तुलसीदास की रामायण के सम्बन्ध में बातें करने लगे। कहा—"मैं बङ्गाली हूँ, बँगला भाषा में रामायण है; किन्तु तुलसीदास ने अपने ग्रन्थ में भक्ति रस का जैसा स्रोत बहाया है वैसा बँगला-रामायण में नहीं" कह कर तुलसीदास की रामायण के अनेक दोहे-चौपाइयाँ सुनाने लगे।

इस रंग-ढंग से मेरे मन में कुछ खटका पैदा हुआ।

हृदय की सी बातें मालुम न हुईं। खरीदारों को ख़ुश करने जैसी बातें थीं। मतलबी जैसी बातें थीं। मेरे गाँव में एक विधवा थी। चिट्ठी लिखाने का काम पड़ने पर वह मेरे पास आकर कहती थी—"आहा, राजू के हाथ के अक्षर मोतियों जैसे दाने होते हैं।—एक चिट्ठी लिख दोगे, भैया?"

वे लोग प्रणाम कर चले गये। तब साधु बाबा ने पैसे उठा गिने। चवन्नी, दुअन्नी और पैसे बहुत से थे। गिन चुकने पर बाबाजी का मुख-कमल खिल उठा। मैं उस समय मन में सोच रहा था,—ये भी एक भण्ड साधु हैं। मेरा समय और पैसा व्यर्थ गया। किन्तु दूसरे ही क्षण साधु-बाबा ने जो बात कही उससे उसी क्षण पहले का भाव भग गया और मन भक्ति से भर गया।

साधु बाबा ने कहा—"आज प्रणामी में प्रायः एक रुपया मिला है। यह रुपया दुर्भिक्ष-भांडार में जायगा। इससे सोलह आदमियों का एक वक्त का भोजन होगा।"

मैं अनेक साधुओं के साथ घूमा हूँ—किसी भी साधु के मुँह से तो कभी भी दुर्भिक्ष-भाण्डार और भूखे लोगों के प्रति ममता की बातें सुनी नहीं।

पूछा—"आपको प्रणामी में जो कुछ मिलता है, उस सबका ही क्या आप इसी प्रकार सद्व्यय करते हैं?"

"हाँ, सबका। एक कौड़ी भी मैं नहीं रखता।"

"तब आपका काम कैसे चलता है ?"

तब उन्होंने मेरा दिया हुआ और दूसरे कई एक मिठाई के दोने दिखा कर कहा—"यह देखो, अपनी क्षुधा शान्त करने के लिए उपाय है ?"

मैंने कहा—"आप संन्यासी हैं। नाना स्थानों में, जंगल-पहाड़ों में विचरते रहते हैं—अनेक बार ऐसे मौके आ सकते हैं कि भक्तों से कुछ भेट आ न सके। उस दिन क्या करते हैं ?"

साधु बाबा ने कहा—"ज़रा भूल कर रहे हो। यह भक्तों की भेट नहीं है—भगवान् का उपहार है। अपना काम मैं करता रहता हूँ, अपना काम वे करते हैं।"

सोचा कि मनुष्य भक्ति-योग्य है। कुछ क्षण के बाद उन्होंने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है ?"

"राजीवलोचन घोषाल।"

मेरे अन्यान्य परिचय भी उन्होंने पूछे। सभी बतलाया। सब जान-सुनकर उन्होंने कहा—"तुम्हारी परीक्षा के लिए अब केवल पाँच दिन बाकी हैं—और तुम पाठ्य-पुस्तकों का पढ़ना छोड़कर घूमते फिरते हो ?"

मैंने कहा—"टके कमाने की विद्या में मेरा मन नहीं लगता। साधु-महात्माओं का संगही मुझे आनन्दप्रद है।"

साधु बाबा ने कुछ क्षण तक चुप रह कर कहा—"देखो, अनेक रास्ते हैं। जिसने जो रास्ता पकड़ा है, उसके लिए उसी

रास्ते पर चलना कर्तव्य है। एक रास्ते पर खड़े हो दूसरे रास्ते की ओर लालचभरी आँखों से देखने पर, दूसरे रास्ते पर तुम पहुँच नहीं सकते और जिस रास्ते पर हो उस पर भी आगे बढ़ नहीं सकते। जिस रास्ते पर हो, उसके इधर-उधर न देखो, सीधे सामने देखना। इसी कारण तो घोड़े की आँखों पर "अँधियारी" चढ़ा देते हैं। घोड़ा केवल सामने ही देख पाता है, सामने ही दौड़ता है।"

इस समय होता तो इस युक्ति में छिद्र पकड़ पाता। किन्तु उस समय तो मोहित हो गया। सोचा कि हाँ, इस बार यथार्थ साधु का दर्शन मिला है। अपने निकट धर्मोपदेश सुनने की मेरी एकान्त आकांक्षा देख कर साधु बाबा ने कहा—"पहले आरंभ किये हुए काम को पूरा करो। परीक्षा हो जाय, तब मेरे पास आना।"

मैंने कहा—"आपकी आज्ञा शिरोधार्य है। किन्तु इस बीच में आपके चरणों का एक बार और दर्शन करने की अनुमति दीजिए।"

"तुम्हारी परीक्षा कब है ?"

"इसी सोमवार के दिन।"

"अच्छा, सोमवार को प्रातःकाल मेरे पास आना। मेरे श्रीचरणों का दर्शन करने के लिए नहीं,—तुम्हारी परीक्षा के सम्बन्ध में तुमको कुछ आवश्यक बातें बताऊँगा।"

कुछ क्षण और वार्तालाप कर मैं उठने का विचार कर रहा

था, इसी समय साधु बाबा ने कहा—"साधु-सेवा करने की तुम्हें बड़ी आकांक्षा है,—एकाग्र हो काम तो करो, देखूँ।"

मैंने मानो अपने को धन्य समझ कर कहा—"आज्ञा दीजिए।"

बाबा ने कहा—"यह कमण्डल है। गंगा से जल भर कर ला दो।"

मैंने जल ला दिया। साधु बाबा दूसरी ओर देखते हुए बोले—"Thanks."

साधु-संन्यासी के मुख से 'Thanks' यह पहले ही सुना। उनको प्रणाम कर विस्मय एवं आनन्दपूर्ण हृदय से डेरे को लौट आया।

दूसरा परिच्छेद

डेरे पर आकर पढ़ने में ध्यान लगाया। ये पाँच दिन अनवरत अध्ययन कर परीक्षा के दिन प्रातःकाल उठ कर साधु बाबा का दर्शन करने के लिए चला।

मेरी परीक्षा के सम्बन्ध में साधु बाबा कौन सी आवश्यक बात बतायेंगे—इस विषय में मेरे मन में कुछ कौतूहल पैदा हो गया था। साथ रहनेवालों को साधु बाबा का किस्सा सुनाया। किसी किसी ने दिल्लगी कर कहा—"शायद कोई प्रश्न बतला

दें। वे लोग भूत-भविष्यत् सब जानते हैं न।" और एक बात कहना भूल गया। लोगों से सुना गया है कि साधु बाबा अँगरेज़ी के पूर्ण विद्वान् हैं—शायद एम० ए० पास हैं! सुधांशु बाबू नाम के मेरे एक सहपाठी ने एम० ए० पास सुन दिल्लगी कर कहा—"एम० ए० पास नहीं, आसमान पास हैं।" इसके बाद मानसिक क्रोध के कारण मैं सुधांशु बाबू से अच्छी तरह से बात नहीं करता।

गंगा के किनारे जाकर पहले स्नान किया। स्नान के बाद भीगे कपड़े हाथ में ले साधु बाबा की कुटी की ओर चला।

उस समय सूर्योदय हो ही रहा था। जाकर देखा कि कुटी के सामने अग्निकुण्ड धधक रहा है—उसके सामने साधु बाबा बैठे ध्यानमग्न हैं।

कुछ क्षण बैठे रहने के बाद साधु बाबा ने आँखें खोलीं। मैंने प्रणाम किया।

उन्होंने कहा—"आज तुम्हारी परीक्षा है।"

"हाँ, महाराज।"

"तुमको आज कुछ बतलाने कहा था। वह बहुत साधारण बात है और आवश्यक बात भी है। देखो, आर्यधर्म मे पूर्वकाल से फूलों-द्वारा देवता की पूजा करने की व्यवस्था क्यों है, बतला सकते हो?"

मैंने कहा—"फूल सुगंधपूर्ण होते हैं, देवता की प्रसन्नता के लिए फूलों-द्वारा पूजा की जाती है।"

साधु बाबा ने कहा—"भूलते हो। देवता निर्विकार है। फूल की गंध से उसे प्रसन्नता कैसे होगी? नहीं, फूल देवता की प्रसन्नता के लिए नहीं है। पूजा करनेवाले की प्रसन्नता के लिए है। फूल की सुगन्ध से पूजा करनेवाले के मन में आनन्द का भाव उदित होगा। आनन्दपूर्ण मन से कोई भी कार्य करने से जैसी सफलता मिलती है वैसी और किसी से नहीं। तुम डेरे को लौटते समय एक शीशी इत्र ख़रीद ले जाना। यदि देशी पाना तो विलायती न ख़रीदना। कारण, देशी शिल्प की उन्नति करना हम सबका कर्तव्य है। वही इत्र, रूमाल में, कमीज़ में, कोट में मलकर परीक्षा के लिए जाना। मन अच्छा रहने से अच्छा लिख सकोगे।"

और दो चार बातों के बाद पूछा—"तुम लोगों के शेक्सपियर के कौन कौन से नाटक पाठ्य हैं?"

मैंने कहा—"Hamlet, Julius Cœsar and Tempest."

साधु बाबा ने कहा—"आहा Hamlet! उसकी तुलना की पुस्तक और किसी भाषा में नहीं पढ़ी।" कह कर—"To be, or not to be, that is the question." से आरम्भ कर बड़े अच्छे ढंग के साथ उसकी आवृत्ति की।

साधु बाबा के एम० ए० पास होने में अब मुझे अणु-मात्र भी सन्देह नहीं रहा।

डेरे पर लौटने पर अनेकों ने मुझसे पूछा—"बाबाजी ने क्या बताया ?"

मैंने सब बातें कह सुनाईं। सुन कर दो एक ने कहा—"देखो, वह एम० ए० पास हो चाहे न हो, पर बुजुर्ग नहीं।" किसी किसी ने कहा—"साधु बाबा पर भक्ति तो होती है। परीक्षा हो जाने पर एक दिन दर्शन लेने चलेंगे।"

मैं मनही मन अत्यन्त गर्व का अनुभव करने लगा। सोच रक्खा—परीक्षा हो जाने पर इन लोगों को एक बार साथ ले जाकर दिखलाऊँगा कि साधु बाबा कैसे असाधारण व्यक्ति हैं। अँगरेज़ी-साहित्य की चर्चा चला कर सबको विशेषतः सुधांशु को दिखलाऊँगा कि साधु बाबा कैसे सुपण्डित हैं।

परीक्षा हो गई। उसी दिन शाम को ही कई एक साथियों को साथ ले साधु बाबा के दर्शन के लिए चला। गर्व से मेरी छाती फड़कने लगी। ये साधु बाबा मानो विशेषकर मेरी ही सम्पत्ति हैं—सब कोई देखें-देख कर आश्चर्य में डूबें। जो गेरुआ वस्त्र पहन कर जटा धारण कर, भस्म लगा कर विचरते फिरते हैं, वे सभी साधु नहीं, ये लोग यह देख लें।

मैदान होकर गंगा के तट को जाने का मार्ग था। विजयी वीर की तरह सबके आगे आगे पैर बढ़ाता चला।

कुटी में पहुँच कर देखा कि कुटी शून्य है। किन्तु

उसके चारों ओर लोग इकट्ठे हैं। साधु बाबा कहाँ हैं, पूछने पर कुछ लोगों ने कहा—"साधु बाबा! ये ही कुछ चण हुए साधु बाबा को पुलिस पकड़ ले गई। उन्होंने कलकत्ते के बंगाल बैंक से जाली चेक तुड़ाकर बीस हज़ार रुपया हड़प कर लिया था। वारण्ट जारी हुआ था। कुछ ही चण हुए डिटेक्टिव पुलिस आकर उनको गिरफ़ार कर ले गई।"

मैं वज्राहत की तरह खड़ा रह गया। सुधांशु मेरी ओर देखकर मुसकुराने लगा।

हाथ में बन्दूक होती तो मैं उसे गोली मार देता।

एक .खूराक दवा

पहला परिच्छेद

आज दो दिन से स्वामी का पत्र न पाने से सुकुमारी बहुत चिन्तित होने लगी है। वह इस घर की छोटी बहू है। उसके ससुर बड़े आदमी हैं। उसको गृहस्थी का कोई काम नहीं करना पड़ता—खाली बैठी बैठी उपन्यास पढ़ा करती है। जेठानी के साथ, दोनों ननदों के साथ गपशप किया करती, ताश खेला करती है। बीच बीच में लड़ाई-झगड़ा भी करना पड़ता है। इसलिए स्वामी को पत्र लिखना और स्वामी से पत्र पाना उसका प्रत्येक दिन का प्रधान काम है। और उसके लिए एक काम है पर वह बहुत प्रीतिकर नहीं। उसको बहुत सी दवाइयाँ खानी पड़ती हैं। कारण, कभी कभी जाड़ा देकर उसे ज्वर आ जाता है।

सुकुमारी स्वामी का पत्र न पाने से चिन्तित हो रही है, यह घर की बिल्ली तक जानती थी। आज सबेरे दस बजे सुकुमारी कपड़ा रँगने की तैयारी करने लगी। इसी समय छोटी ननद

मन्ना ने आकर कहा—"सोच सोच कर मरी जा रही है। यह ले तेरे दूल्हे की चिट्ठी आई है।" सुकुमारी आग्रह के साथ चिट्ठी ले अपने सोने के घर को भग गई। चिट्ठी खोलकर जो कुछ पढ़ा, उससे उसका सिर घूम गया। चिट्ठी इस प्रकार थी—

सुकुमारी,

मैं गहरे मनस्ताप में जल रहा हूँ। मैंने तुम्हारे साथ विश्वासघातकता की है। मैं अब तुम्हारे भक्तियोग्य स्वामी नहीं। मेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई थी। कुसंगति के दोष से प्रलोभन में पड़ कर बहुत घृणित काम कर बैठा हूँ। सब बातें पत्र में लिखने योग्य नहीं—आकर कहूँगा। आज शाम को घर आऊँगा। निष्कपट हृदय से तुमसे सब कहूँगा। तुम्हारा प्रेम यदि मुझे क्षमा कर सकता है तो मैं फिर मैं हूँगा, नहीं तो सब चौपट हो गया।

तुम्हारा हतभाग्य,

अविनाश

पत्र को पहली बार पढ़ कर सुकुमारी ने सोचा कि कोई भयानक घटना घटी है, किन्तु कैसी घटना घटी है, यह अच्छी तरह अनुमान न कर सकी। बारम्बार पढ़ते पढ़ते एक अर्थ उसके मन में उठने लगा। उसका शरीर शिथिल हो आया, और खड़ी न रह सकी। खाट पर बैठ गई। बैठ कर फिर एक बार चिट्ठी पढ़ी। पढ़ कर उसके कोड़ियों टुकड़े

कर डाले। मुट्ठी में भर चिट्ठी के टुकड़ों को खिड़की के रास्ते बाग़ में फेंक दिया।

दूसरे ही क्षण मन में यह बात उठी कि यदि कोई फटे टुकड़ों को बीन कर और जोड़ कर पढ़े! फ़ौरन बाग़ में जाकर फटे काग़ज़ों को एक एक कर बीन लिया। उसकी अँगुलियों में ओस और कीचड़ लग गया। कुछ दूर पर, दूसरे घर के सदर दरवाज़े पर एक वैष्णव भिखारी खँजड़ी बजा-कर गाना गा रहा था, खड़ी होकर उसे ही सुना। चिट्ठी के टुकड़ों को आँचल के छोर में बाँध कर सोने के कमरे को लौट आई।

बहुत जाड़ा मालूम होने लगा। ठीक उसी तरह जैसा ज्वर आने के पहले होता है। बिस्तरे पर पड़ कर, दुलाई तान, लेट रही। दुलाई के भीतर पहले आँसुओं का बाँध फूटा। एकान्त कमरे में, घरवालों से छिप कर सुकुमारी ख़ूब रोई।

इसी समय उसकी बड़ी ननद विनोदिनी ने आकर कहा—क्यों, तबीअत ठीक नहीं क्या? लेटी क्यों हो? कह कर उसने सुकुमारी के मुँह पर से एकबारगी दुलाई खींच ली। मुँह देख कर आश्चर्य में आ कहा—यह क्या? रोती क्यों हो। क्या हुआ? दादा अच्छी तरह तो हैं?"

सुकुमारी ने जल्दी से आँखों के आँसू पोंछ कर कहा—"नहीं, रोती तो नहीं।"

"नहीं, रोती ही तो थी। दादा अच्छी तरह हैं तो?"

"हाँ, अच्छी तरह हैं।"

सुनकर विनोदिनी अस्वस्थ हुई। किन्तु आश्चर्य में आ कहा—"तो रोती क्यों थी ?"

गालों पर आँसुओं का चिह्न था, तथापि सुकुमारी ने कहा—"नहीं तो, रोती तो नहीं थी।"

"दादा नाराज़ हुए हैं।"

"चलो, हटो।"

"बताओ न क्या हुआ, बताओ न।"

सुकुमारी ने विरक्त होकर कहा—"कुछ नहीं हुआ, होगा और क्या ?"

नहीं, कुछ नहीं हुआ ! कहती क्यों नहीं कि न बताओगी। न बताओ, मेरा क्या बिगड़ेगा—,कह विनोदिनी बिगड़ कर चली गई।

सुकुमारी ने अकेली होने पर फिर दुलाई में मुँह छिपा लिया। सोचने लगी, यदि यह सच हो सकता है, तब तो सब कुछ हो चुका। सब कुछ गया। ऐसे स्वामी को कैसे स्पर्श करूँगी, कैसे यत्न करूँगी, सेवा करूँगी ?

वे क्या करेंगे ? उनको क्या हो गया ? उनका ऐसा सर्वनाश किसने किया।

इसी समय उसकी सास ने कमरे के भीतर आ

कहा—"फिर ज्वर चढ़ आया ? अच्छा करती हो ! क्या कुपथ्य किया । फिर इमली का अचार खा लिया ?"

सुकुमारी दुलाई के भीतर से काँपती काँपती बोली—"माँ, इमली का अचार तो खाया नहीं ।"

खाया नहीं तो क्या किया ? इतना मना करती हूँ कि सिर भिगो कर न सोओ । पर सुनती नहीं । खाना खा कर ही चुप लेट रही । जो ख़ुशी हो करो बहू । देह क्या बहुत गरम है ? बहुत जाड़ा लगता है ? अभी मेरा माला-जप पूरा नहीं हुआ, बिछौना छू न सकूँगी, जाती हूँ मन्ना या बिनी को भेजे देती हूँ" कह कर वे चली गईं ।

सुकुमारी फिर सोचने लगी । वह कौन है ? किस राक्षसी ने उनका सर्वनाश किया । उनके सुख के घर में आग लगा दी । उसको यदि एक बार पा जाऊँ तो नाख़ूनों से फाड़ डालूँ ।

सोचा, नहीं मालूम, वह कैसी सुन्दरी है । स्वामी बहक गये—अवश्य ही वह मुझसे अधिक सुन्दरी है । अब कोई नहीं, मेरा स्वामी ! अपने स्वामी को मैं देवता की तरह मानती थी । कितने लोगों ने कहा था कि कलकत्ता अत्यन्त लुभावना शहर है—युवकों के लिए बड़ा विषम स्थान है—किन्तु स्वामी पर मेरा अगाध विश्वास था ।

इस प्रकार सोचते सोचते सुकुमारी का ज्वर दूना बढ़ गया। ज्वर के कारण वह अचेत हो गई।

दूसरा परिच्छेद

सुकुमारी ने जब आँखें खोलीं उस समय देखा कि घर में दीपक जल रहा है। डाक्टर पास बैठे दवा तैयार कर रहे हैं। उसके ससुर कुछ दूर पर बैठे तम्बाकू पी रहे हैं। मन्ना फ़र्श पर बैठी बच्चे को सुला रही है।

डाक्टर ने कहा—"इस दवा को खा लेना तो ज़रा" कह कर मुँह के पास दवा ले गये। सुकुमारी ने दवा खा ली।

डाक्टर ने कहा—"ज्वर बहुत कुछ इस समय उतर गया है। चिन्ता की कोई भी बात नहीं। जब तक ज्वर बिलकुल उतर न जाय तब तक यह फ़ीवर मिक्सचर दो घंटे के अन्तर से दीजिएगा" कह कर वे बिदा हुए।

डाक्टर के चले जाने पर सुकुमारी की सास आईं। सिर पर हाथ रख कर कहा—"बहुत कुछ कम हो गया है। देह पर हाथ रक्खा नहीं जाता था। अब कैसी तबीअत मालूम होती है बहू।"

सुकुमारी ने बहुत धीरे से कहा—"अच्छी हूँ।"

उन्होंने कहा—"शाम की गाड़ी से अविनाश आया है

मन्ना, जा देख, अपने दादा को बुला दे।" इसके बाद स्वामी से कहा—"तुम्हारे लिए जलपान रख आई हूँ—जाओ, देरी न करो।

घर में केवल सुकुमारी की सास रह गई, और सब चले गये। कुछ ही क्षण में अविनाश आ गया। उसकी माँ तब किसी काम के बहाने वहाँ से उठ गई।

अविनाश ने बिछौने पर बैठ कर सुकुमारी के सिर पर हाथ रक्खा। पूछा—"कैसी हो सुकु?"

सुकुमारी ने कहा—"अच्छी हूँ।"

"आज सवेरे मेरी चिट्ठी मिली थी।"

"मिली थी।—सच?"

अविनाश ने कहा—"सच ही तो है।"

"मेरी याद नहीं आई?"

"अविनाश चुप रहा।"

सुकुमारी ने कहा—"वह क्या बड़ी सुन्दरी है?"

अविनाश ने आश्चर्य के साथ कहा—"कौन?"

"वह।"

"वह कौन? किसकी बात पूछती हो?"

सुकुमारी के मन में बड़ा खटका पैदा हो गया। कहा—"तो फिर क्या हुआ है? क्या किया है?"

अविनाश मुहूर्त में ही समझ गया कि सुकुमारी कैसे भ्रम में पड़ गई है। सोचा—कैसी सर्वनाश की बात है!

कहा—"नहीं—नहीं—सुकु। तुम क्या सोच रही हो। वह बात नहीं।"

"तो फिर क्या ?"

इस जीवन में कभी स्पर्श तक करने को मना किया था, तुम्हारी बड़ी घृणा जान कर भी वही पिया है। मद पिया है। अधिक नहीं, संसर्ग में पड़ जाने से केवल एक चुल्लू पिया है।"

× × × ×

दो घंटे के बाद सुकुमारी को फिर दवा देने की बात थी, किन्तु दवा देने की ज़रूरत न रही। एक ख़ूराक दवा से ही उसका ज्वर बिलकुल दूर हो गया। सच-मुच कहना पड़ेगा कि डाक्टर बाबू की दवा रामबाण थी।

स्वर्णसिंह

पहला परिच्छेद

कई वर्षों की बात है। वकालत का इम्तहान पास कर अलीपुर में 'प्रैक्टिस' करने लगा। किन्तु मवक्किल न आये। छः महीने बार-लायब्रेरी में बैठ कर दूसरे नये वकीलों से गप-शप हाँकते हाँकते थक गया। सोचा, पश्चिम जाऊँ। किन्तु पश्चिम जाऊँ तो कहाँ? डिरेक्टरी निकाल कर पश्चिम के नाना स्थानों के वकीलों की सूची ढूँढ़ने लगा। खोजते खोजते देखा कि बिहार में ससराम नाम का एक ज़िला है, वहाँ बंगाली वकील एक भी नहीं। जाने में बाधा भी बहुत है—रेल नहीं। आरा स्टेशन पर उतर कर इक्के से जाना पड़ता है। इक्के से तीन-चार दिन लगते हैं। सोचा, यही ठीक है। इस पृथिवी में काशी साक्षात् कैलाश है। वहाँ जाने से ही धन मिलेगा। पश्चिमवालों का विश्वास है कि बंगाली बड़े बुद्धिमान् होते हैं। उधर बंगालियों का अब भी खूब आदर है।

इसलिए एक महीने के भीतर ससराम पहुँच कर प्रैक्टिस शुरू कर दी।

ससराम में एक उर्दूवाले वकील थे। उनका नाम मुंशी ज्वालाप्रसाद था। वे ही वहाँ के प्रधान वकील थे। किन्तु मुझे देखकर बुड्ढा सन्तुष्ट न हुआ। इधर-उधर कहता फिरने लगा—"अरे वह तो छोकड़ा है, क़ानून का हाल क्या जाने।" पहले पहल मैं एक मुक़द्दमे में उनके विपक्ष का वकील हुआ। मुक़द्दमे के आख़िरी बहस के दिन बहस करने के लिए कई मोटी मोटी किताबें साथ ले गया था। ज्वाला-प्रसाद से क़ानून की पुस्तकों से कोई सम्बन्ध ही न था। मेरी पुस्तकों का बोझा देखकर वे गरम हो गये और जज बहादुर से बोले—

"हुज़ूर देखिए तो तमाशा! कलकत्ते से एक वकील आया है—न मूँछ है न दाढ़ी—अपनी बहस के लिए बोझ भर किताबें ले आया है। हुज़ूर को क़ानून सिखलाना चाहता है। हुज़ूर को क़ानून क्या मालूम नहीं!"

जज बहादुर ने ज़रा हँस कर वकील साहब से बैठ जाने को कहा।

ज्वालाप्रसाद के इस विद्रोह का कारण अपने प्रति पीछे मालूम हुआ। उनका बड़ा लड़का पटना कालेज में क़ानून पढ़ता था। एक-मात्र वही भविष्य में, ससराम में अँगरेज़ीदाँ

वकील हो, यह मुंशी ज्वालाप्रसाद की इच्छा थी। इसी से मुझे देखकर इतनी ईर्ष्या है।

दूसरा परिच्छेद

थोड़े दिनों में मेरी वकालत चमक गई। फ़ुरसत से कलकत्ते जाकर अपनी स्त्री को ले आया। सदर रास्ते पर मेरा दुमंज़िला घर था। ऊपर के कमरे में, चिक पड़ी हुई खिड़की के पास बैठ कर, कौतूहलपूर्ण नेत्रों से इस नूतन प्रदेश का नवीन जीवन देखना मेरी स्त्री को अच्छा लगता था। एक दिन सड़क पर कितनी ही बालक-बालिकायें इकट्ठा हो खेल खेल कर यह गीत गाने लगीं—

"बंगाली बिटिया,
कलकत्ता में बेंचे तमाखुल टिकिया।"

मेरी स्त्री अब तक हिन्दी न जानती थी। पूछा—"ये सब क्या कहते हैं?"

मैंने कहा—"वे जो कह रहे हैं, उसका भावार्थ यह है कि बंगाली की लड़की हमारे देश में आकर बड़ी नवाब बन गई है, चिक की ओट में दोतल्ले पर बैठी है, किन्तु सुना है कलकत्ते में तुम लोग तम्बाकू की टिकिया बेंचती हो।

मेरी स्त्री ने सुन गाल पर हाथ रख कहा—"ओ माँ, क्या होगा।"

ग्रीष्मकाल आया। मेरे घर के चारों ओर ताड़ के पेड़ों में पासियों ने 'लावणि' बाँधी है। नित्य सवेरे पासियों का ताड़ पर चढ़ो चिल्लाना सुनाई पड़ता है। अर्थात् मैं ताड़ पर चढ़ता हूँ; कुलवधुओ, तुम आँगन से भग कर भीतर छिप जाओ।

गरमी की छुट्टी में ज्वालाप्रसाद का पुत्र पटने से आया। शहर में अँगरेज़ी पढ़े-लिखे लोग कम होने से उसके और मेरे बीच बन्धुता पैदा हुई। उसका नाम सुन्दरलाल था। यद्यपि मैं उसके पिता का वैरी था। तथापि वह मेरे पास आता था। कभी कभी हम दोनों साथ ही साथ घूमने जाते थे। जैसे आज-कल के बंगालियों को 'साहब' बनने की बड़ी लालसा रहती है, देखा वैसे ही सुन्दरलाल को बंगाली बनने की बड़ी लालसा है। पिता से छिप कर वह कभी कभी मेरे यहाँ शाम को निमन्त्रण-रक्षा भी करने लगा।

वह मुझे प्रिय था। क्रम से मालूम हुआ कि उसने केवल अँगरेज़ी शिक्षा ही नहीं पाई है, उसको उसके साथ की एक व्याधि भी लग गई है। वह व्याधि दाम्पत्यविषयक है। सनातन प्रथा के अनुसार पिता-द्वारा पसन्द की गई लड़की से वह विवाह करने के लिए तैयार नहीं। कहा, इसी लिए पिता उस पर नाराज़ हैं।

और कुछ दिनों में बन्धुत्व और भी बढ़ गया। एक दिन चाँदनी रात में हम दोनों नदी-तीर पर घूम रहे थे। सुन्दर-लाल ने उस दिन मुझसे कहा कि वह एक लड़की को पसन्द करता है।

मैंने पूछा—"उसका नाम क्या है ?"

"पन्ना।"

"कितनी बड़ी है ?"

"उसकी उम्र चौदह वर्ष की है।"

देखता हूँ, तब तो ख़ासा रोमांस (Romance) का मामला है। मित्र से फिर पूछा—"लड़की है कहाँ ?"

"हमारे ही गाँव में है।"

मुझे मालूम था कि ज्वालाप्रसाद का घर सदर से छः मील दूरी पर पाटलि गाँव में है। रहस्य कर कहा—"मालूम होता है,—"इसी से बार बार घर जाते हैं ?"

सुन्दरलाल ने कहा—"कहाँ बार बार जाता हूँ ? आते ही एक बार गया था और उस दिन एक बार और गया था। पहली बार तो केवल देख ही पाया था, बातचीत का मौक़ा नहीं मिला। इसी से दूसरी बार गया था।"

हँसकर कहा—"तो यहाँ क्यों तड़पते हो ? मैं होता तो छुट्टी के कई महीने वहीं बिताता।"

सुन्दरलाल ने कहा—"आकांक्षा का यदि अनुसरण करता तो मैं भी वहीं रहता। मैं जानता हूँ कि यदि मैं

उसके निकट रहूँ तो सदा उसे देखने का, उससे बातचीत करने का, मौक़ा ढूँढ़ता फिरूँगा। इससे अपने आपको संयत न रख सकूँगा। इस तरह कुछ दिन बीतने पर गाँववालों में कैसी आलोचना उठेगी, यह ज़रा सोच देखो। मैं जिसको प्यार करता हूँ, क्या मैं उसका"—

सुन्दरलाल और कह न सका। किन्तु मैं उसके मन का भाव समझ गया। मैंने अब तक इस विषय को मज़ाक की ही बात समझी थी। सुन्दरलाल की इस बात से मेरे मन का वह भाव दूर हो गया।

परिहास का स्वर छोड़ कर पूछा—"लड़की कौन है ?"

"हमारे गाँव में एक बूढ़े, पेंशन पाये हुए सैनिक हैं। उनका नाम सूबेदार अयोध्यानाथ है। पन्ना उनकी पोती है।"

"वे क्या तुम्हारे स्वजातीय हैं ?"

"हाँ, स्वजाति ही हैं।"

"तब बाधा क्या है ? अपने पिता से अपनी इच्छा कभी प्रकट की थी ?"

"की थी। मैंने ख़ुद तो की नहीं, दूसरों से कहलाया था। अयोध्यानाथ मेरे साथ विवाह करने के लिए तैयार थे। किन्तु उनके कुल में कोई दोष होने से, जातिभय के कारण पिता किसी तरह राज़ी नहीं होते। उस लड़की के विवाह की चेष्टा और कई जगह की जा चुकी है, किन्तु कोई राज़ी नहीं

हुआ। नहीं तो हम लोगों में इतनी बड़ी लड़की कभी अवि-वाहिता रहती है ?"

सुन कर मेरा मन कुछ उदास हो गया। यह तो उप-न्यास का साही कारखाना देखता हूँ। किन्तु उपन्यास में भी सुख-सम्मिलन किसी न किसी उपाय से प्राय: हो ही जाता है। यहाँ क्या ऐसा न होगा ?

इसके बाद सुन्दरलाल ने अनेक बातें कहीं। सब बातें ही उसकी प्रणयिनी के सम्बन्ध की थीं। सुन्दरलाल ने स्पष्ट ही कहा—"प्रणय का आवेग सब उसकी ओर से है। बालिका अच्छा बुरा शायद कुछ भी नहीं जानती। जानने की उसकी अवस्था भी नहीं, सुयोग भी नहीं आया।

घर आकर अपनी स्त्री से सब बातें कहीं।

तृतीय परिच्छेद

इसके बाद और दो महीने बीत गये। मेरी आमदनी बढ़ती जा रही है। अब हर एक संगीन मुकदमे में किसी न किसी पक्ष में मेरी नियुक्ति रहती है। सुन्दरलाल पटना लौट गया है।

इस बीच में कई बार सुन्दरलाल के साथ उसके गाँव गया था। सूबेदार अयोध्यानाथ से भेंट कर आया हूँ। दूर

से अचानक अपने बन्धु की मनोहारिणी को भी देख आया हूँ। लड़की बहुत सुन्दर है। उसकी इच्छा करने का दोष सुन्दरलाल को नहीं दिया जा सकता।

पहले दिन पाटोली से लौट आते ही मेरी स्त्री ने सबसे पहले पूछा—"पन्ना को देखा?"

"हाँ, देखा तो है?"

"देखने में कैसी है?"

ज्ञानी लोग कह गये हैं कि अपनी स्त्री के समक्ष और किसी स्त्री के रूप की प्रशंसा कभी न करनी चाहिए। करने से विपद् की संभावना है। इसी से सावधानता का अवलम्ब ले कहा—"देखने में बुरी नहीं।"

स्त्री ने कहा—"तो भी देखने में कैसी है, कैसा रंग है, आँख-मुँह कैसा है?"

कहा—"हाँ, अच्छा ही है।"

मेरे उत्तर से मेरी स्त्री सन्तुष्ट न हुई। फिर पूछा—"खूब सुन्दर है?"

पूर्ववत् सावधानता का अवलम्ब लेकर कहा—"क्या जानूँ, इतना तो समझता-बूझता नहीं।"

गृहिणी ने कहा—"बातों के लच्छन तो देखो। दूध-पीते बच्चे हैं। कुछ समझते ही नहीं। अच्छा एक बात पूछती हूँ। तुम यदि सुन्दरलाल होते तो उसे प्यार करते या नहीं?"

मैंने दुष्टता कर कहा—"किसको? तुमको?"

श्रीमती ने रूठ कर कहा—"तुम्हारी बात सुन कर देह जल उठती है। पन्ना को—पन्ना को।"

"मैं यदि सुन्दरलाल होता ?"

"हाँ, हाँ। यह भी नहीं समझ सकते। इतना पास करके क्या किया ?"

ऐसे प्रश्नों का क्या उत्तर देना चाहिए, ज्ञानियों ने कुछ नहीं कहा है। इसलिए कपाल ठोंक कर कहा—

"हाँ शायद प्यार करता।"

कपाल ठोंक कर बारूद के बक्स में दियासलाई क्यों न लगा दी ! इसकी अपेक्षा उसका फल गुरुतर न होता।

बहुत कष्ट से तो मान छूटा। मान के बाद उन्होंने पन्ना के घरवालों के सम्बन्ध में जो प्रश्न किये, मालूम होता है, सबका ही सन्तोषजनक उत्तर दे सका।

सूबेदारजी बहुत भले आदमी हैं। यह कन्या उनकी सर्वस्व है। कहा, इच्छा करते ही उसका ब्याह कर सकते हैं, किन्तु लड़की को दूसरे के हाथ सौंप कर कैसे काल काटेंगे। लड़ाई में उन्होंने उम्र बिता दी है, इसके सम्बन्ध की बहुत सी बातें कहीं।

आषाढ़ का महीना है। रात में गहरी नींद में मस्त था। सहसा किसी शब्द से आँखें खुल गईं। कान देकर सुना। बाहर से शब्द आया—"बंगाली बाबू—ए बंगाली बाबू।"

मेरा नाम यहाँ बहुत थोड़े आदमियों को मालूम है।

बंगाली वकील होने से सर्वसाधारण में 'बंगाली बाबू' के ही नाम से परिचित हूँ।

फिर आवाज़ आई—"बंगाली बाबू--ए बाबू जी।"

मैं "कौन है ?" कह कर बिछौने पर बैठ गया।

"ज़रा बाहर तो आइए।"

मेरी स्त्री भी जग पड़ी। कहा—"मालूम होता है कोई ख़राब ख़बर का तार आया है।"

बत्ती जला जूता पहन बाहर निकला। चाँदनी रात है। किन्तु आकाश में कुछ बादल हैं। इसी से चाँदनी मन्द हो रही है। ताड़ के पेड़ों को कँपा कर सन् सन् हवा चल रही है।

सदर दरवाज़ा खोलकर देखा कि एक अपरिचित आदमी खड़ा है। पूछा—"तुम कौन हो ?"

उसने कहा—"मुवक्किल।"

"इतनी रात में क्यों आये ?"

"एक वृद्ध मृत्यु-शय्या पर पड़ा है। एक वसीयतनामा लिखना है इस समय ही न चलने से काम न बनेगा। सवेरे तक वह जीता रहेगा या नहीं, इसमें सन्देह है।"

"कितनी दूर चलना पड़ेगा ?"

"बहुत दूर नहीं। यहाँ से सिर्फ़ दो तीन कोस।"

"जायँगे किस पर ?"

"घोड़ा लाया हूँ।"

"फीस लाये हो ?"

"लाया हूँ। कितना लगेगा ?"

"इस रात में मैं सौ रुपये से कम पर न जाऊँगा।"

"यह लीजिए" कह कर उसने अपनी चद्दर के एक छोर की गाँठ खोल कर सौ रुपये के नोट गिन दिये।

मैं उसे ज़रा इन्तज़ार करने के लिए कह कर घर के भीतर तैयार होने गया। नोटों को सन्दूक में रखते रखते अलीपुर-बार के उन निरन्न दिनों की बातें याद आईं। एक दिन वह था—एक दिन यह है। तब सारा दिन कचहरी में हत्या दिये बैठे रहने पर भी मुवक्किलों का दर्शन न मिलता था। और इस समय उसी देवता ने दो पहर रात गये, चिल्ला चिल्ला नींद तोड़ दी।

गृहिणी को सचेत कर, नौकरों को जगा, तैयार हो बाहर आया। घोड़े पर सवारी करते करते पूछा—"वृद्ध कौन है ?"

मेरे संगी ने कहा—"सूबेदार अयोध्यानाथ।"

"सूबेदार जी, उनका ही मृत्युकाल उपस्थित है ?" कह कर मैं दु:ख से मौन हो गया। यही पन्द्रह दिन हुए, उनके पास बैठकर युद्ध की कितनी ही कहानियाँ सुन आया हूँ।

कोई एक घण्टे में अपने उसी पूर्वपरिचित गाँव में जा पहुँचा।

सूबेदारजी ने मुझसे कहा—"बाबू, आ गये ? आइए, आइए—मैं तो अब चलता हूँ।"

मैंने कहा—"नहीं सूबेदारजी। ऐसी बात क्यों कहते हैं? आप अच्छे हो जायँगे। आपसे युद्ध की और कितनी ही कहानियाँ सुनूँगा।"

इस कथन से सूबेदारजी के मुख पर हँसी की एक बहुत पतली रेखा दिखाई पड़ी। कहा—"रामजी की इच्छा। उनकी जो इच्छा होगी वही होगा। इस समय मेरा एक काम कीजिए। अधिक रात में आपको कष्ट देकर बुलाया है।"

मैंने कहा—"आज्ञा दीजिए।"

सूबेदारजी ने कहा—"शायद आपको मालूम है कि मैं निस्सन्तान हूँ। मेरे केवल एक लड़का था। उसने वीर की तरह युद्ध-क्षेत्र में प्राण दे दिये हैं—वह स्वर्ग में है। दुर्भाग्य की बात है कि मुझे रोग-शय्या पर मरना होगा। रामजी की इच्छा। मेरे उस पुत्र के एक कन्या है। उसी को खेला-कुदा कर मैंने जीवन का शेष भाग बिताया है। मेरे एक भतीजा है। वह पंजाब में नौकरी करता है। मेरे जो कुछ सम्पत्ति है वह मैं अपनी पोती को दे देना चाहता हूँ। इस मर्म का आप एक वसीयतनामा लिख दें। मेरे एक सोने का सिंह है। मैं जब बर्मा की लड़ाई में गया था, तब राजमहल लूटने में उसे पाया था। सिंह तौल में तीस सेर से ऊपर है। सोने का दाम पचास हज़ार रुपया होगा। मेरी पोती से जो विवाह करेगा वह उस सिंह को दहेज में पायेगा। लोहे के मेरे सन्दूक में वह सिंह रक्खा है। अब तक किसी को इसकी खबर न

थी। खबर होने से डाकू लोग सिंह को ले जाते। लोहे के सन्दूक़ में मेरा एक हज़ार रुपया है। यह रुपया मेरी पोती पन्ना के नाम लिख दीजिए। और मेरा यह घर, सामान्य ज़मीन जो कुछ है, थाली-लोटा और मेरे मेडल आदि सब मेरे भतीजे के नाम लिख दीजिए।"

वृद्ध ऊपर लिखी बातें धीरे धीरे कहने लगे और मैं भी साथ ही साथ नोट करने लगा। लिखने के लिए कागज़ भाँजते-भाँजते कहा—"आप अपने इस वसीयतनामे का मुख्तारआम किसको नियत करेंगे?"

वृद्ध ने कहा—"यह देखिए, असल बात हो भूला जाता हूँ। मुख्तारआम आप होंगे। यह भी लिख दीजिए। आपका पसन्द किया पात्र यदि पन्ना से विवाह करेगा तो उसे सिंह मिलेगा। आप सुन्दरलाल के बन्धु हैं। क्या कोई आपत्ति है?"

मैंने कहा—"मैं आनन्द के साथ आपके वसीयतनामे का मुख्तारआम होने को तैयार हूँ।"

मैं सुन्दरलाल का बन्धु हूँ—वृद्ध ने विशेषकर इसका उल्लेख कर मेरी सम्मति पूछी। उनका उद्देश समझना बाक़ी न रहा।

वसीयतनामा तैयार हो गया। वृद्ध ने सही कर दी। गवाहियों की भी सही ले ली।

वृद्ध ने कहा—"वसीयतनामे को आप अपने साथ लेते

जायँ। और यह लीजिए लोहे के मेरे सन्दूक की चाबी, आपका परिवार यहीं है ?"

"हाँ यहीं हैं।"

मेरे न रहने पर तब आप दया कर पन्ना को अपने घर में ले जाकर विवाहपर्य्यन्त रखिएगा। पन्ना ख़ुद बना कर खाया करेगी।

मैंने कहा—"मेरे घर में इस देश का रसोइया-ब्राह्मण नौकर है। पन्ना को ख़ुद बना कर क्यों खाना पड़ेगा ?"

उठ कर वृद्ध से मैंने कहा—"अब मैं चलता हूँ। किन्तु आपको अच्छा होना होगा। और भी बहुत दिन तक जीकर हम लोगों को लड़ाई के क़िस्से सुनाने होंगे।"

वृद्ध ने अश्रुगद्गद कंठ से कहा—"रामजी की इच्छा। आपके हाथ अपनी पन्ना को, रुपये-पैसे को, सबको सुपुर्द कर निश्चिन्त होगया। जिससे पन्ना का मंगल हो वही आप करेंगे।"

सूबेदारजी को इसका वचन देकर विदा हुआ। इसके बाद केवल एक दिन सूबेदारजी जीवित रहे।

चौथा परिच्छेद

एक महीना बीत गया। सूबेदारजी का श्राद्ध-तर्पणादि हो गया है। पन्ना को लाकर अपनी स्त्री के पास रख दिया है।

रुपया और सिंह भी लोहे के सन्दूक के साथ लाकर घर में रख दिया है।

पहले कई दिन पन्ना पितामह के शोक में म्रियमाण रही। मेरी स्त्री की शुश्रूषा से वह क्रम क्रम से स्वस्थ हो गई।

एक दिन रविवार को, सवेरे उठ कर चाय पी रहा था, उसी समय नौकर ने आकर ख़बर दी कि बाबू ज्वालाप्रसाद जी मिलने आये हैं। इसके पहले ऐसा अनुग्रह उन्होंने मुझ पर कभी न किया था।

मैं कभी कभी सूबेदारजी के सन्दूक को खोल कर उसी सोने के सिंह को देखता और सोचता था कि अब भी बाबू ज्वालाप्रसाद इस ग़रीब की कुटिया में क्यों पदार्पण नहीं करते।

बाहर जाकर बड़े आदर से वकील साहब को बिठाया। दो एक बातों के बाद उन्होंने कहा—"देखिए, आपके कारण तो हम लोगों की बड़ी निन्दा हुई है।"

पूछा—"क्यों ?"

हमारे जाति-भाई सब कहते हैं कि बुड्ढे के मर जाने पर उसकी पोती खाना न पाकर बंगाली के यहाँ अन्न खाती है—जाति-भाई किसी ने उसे आश्रय नहीं दिया।

मैंने आश्चर्य कर कहा—"खाना न पाकर ? क्यों, पन्ना तो एकबारगी दरिद्र नहीं, सूबेदारजी वसीयतनामा लिख कर उसे जो कुछ दे गये हैं वह क्या आपने सुना नहीं।

ज्वालाप्रसाद ने विस्मित की तरह कहा—"उनके पास था क्या जो वसीयत करेंगे। आप हँसी करते हैं।"

वकील साहब के इस अभिनय को देख कर मन ही मन प्रसन्न हुआ। नम्रतापूर्वक कहा—"नहीं, वसीयत कर गये हैं। मैंने ही वह वसीयतनामा लिखा है।"

ज्वालाप्रसाद ने कहा—"तो ठीक। घर में दस पाँच रुपये रहे होंगे, बुड्ढे ने शायद उनको ही वसीयत किया है। बुद्धिमानी का ही काम हुआ है। पन्ना के पिता बूढ़े की विवाहिता स्त्री की संतान न होने की एक गप उड़ी थी। वसीयतनामा न लिखाने से बुड्ढे का भतीजा आकर शायद घर-द्वार पर दखल कर लेता। वकालत करते करते बुड्ढा हो गया, सभी समझ सकता हूँ" कह कर वे सूखी हँसी हँसे।

उनके मुँह का भाव देख कर मैं समझ गया—"असल बात भीतर ही भीतर अलबला रही है, किन्तु खुल कर कहने की हिम्मत नहीं होती।"

इधर-उधर की बे-लगाव की तरह तरह की बातें उठीं, अन्त में बात कह डाली। पन्ना के साथ सुन्दरलाल के विवाह का प्रस्ताव किया।

मैंने कहा—"हे स्वर्णसिंह! धन्य तुम्हारी महिमा।"

ज्वालाप्रसाद से कहा—"लड़की में जो कुलगत दोष है, उससे आपके जाति-भाई तो कोई आपत्ति नहीं करेंगे?"

ज्वालाप्रसाद ने कहा—"नवीन बाबू करेंगे। मैं

जानता हूँ—वे मुझे जातिच्युत करेंगे। किन्तु हम लोग शिक्षित व्यक्ति हैं, यदि निर्बोध समाज शासन का इतना भय कर चले तो देश की कुरीतियाँ, सोच देखिए, दूर होंगी ?"

बहुत कष्ट से हँसी रोक कर मैं गंभीर भाव से सिर हिलाने लगा। कहा—"ठीक, ठीक, वकील साहब। आपने अपनी विद्वत्ता के योग्य ही बात कही है।"

ज्वालाप्रसाद ने कहा—"अँगरेज़ी नहीं पढ़ा हूँ, किन्तु समाज और धर्म-सम्बन्ध में मेरे मत अँगरेज़ी पढ़े-लिखे लोगों के समान ही हैं।"

मैंने पूर्ववत् गंभीरभाव से कहा—यह तो है ही। यह तो है ही।

ज्वालाप्रसाद ने शायद यह सोचा कि उनकी चालबाज़ी को मैं पकड़ नहीं सका हूँ। इसी से उत्साहित होकर कहा—"अच्छा नवीन बाबू, आप और सुन्दरलाल की तो विशेष बन्धुता हो गई है। एक बात आपसे पूछता हूँ। मैंने हाल में ही सुना है कि सुन्दरलाल पन्ना से विवाह करने के लिए पागल हो रहा है। यह सच है क्या ?"

मैंने कहा—"सच है।"

ज्वालाप्रसाद ने उत्साह के साथ कहा—"तब मेरे मन की सब दुविधा ही मिट गई। पन्ना कुजाति ही क्यों न हो, ग़रीब ही क्यों न हो, मेरे पुत्र ने अपना हृदय ही जिसको

समर्पित कर दिया है—उसको मैं पुत्रवधू बनाऊँगा। मेरे पुत्र का सुख बड़ा है या जाति, नवीन बाबू?"

हँसी की इतनी प्रचण्डशक्ति रोक लेने की मुझमें शक्ति है, यह मैं पहले न जानता था। पहले की ही तरह शान्तभाव से कहा—"अवश्य ही आपके पुत्र का सुख बड़ा है, वकील साहब।"

ज्वालाप्रसाद ने कहा—"तब आपकी राय है?"

मैंने कुछ क्षण सोचने का भान किया। ज्वालाप्रसाद का मुँह फीका पड़ने लगा। उन्होंने सोचा कि शायद मैं मंजूर न करूँ।

मुझको चुप देख कर ज्वालाप्रसाद ने कहा—"सुन्दर-लाल जब आपके प्रिय बन्धु हैं, तब आप अवश्य ही उनकी भलाई चाहेंगे।"

फिर मैंने कहा—"मेरा मत है।"

सुन कर सोने का लोभी बुड्ढा आनन्द से अधीर हो गया। पहले सोने के सिंह के होने की बात न जानने का भाव दिखाने में जिस तरह कृतकार्य हुआ था, इस समय अपरि-मित आनन्दोच्छ्वास को छिपाने में उस तरह कृतकार्य न हो सका।

अन्य सब चित्तवृत्तियों की अपेक्षा, प्रबल आनन्द को

छिपाना, मालूम होता है, मनुष्य के लिए सबसे अधिक कठिन है।

+ + + + +

पन्ना और सुन्दरलाल का विवाह हो गया है।

वसीयतनामे का प्रोबेट (मृतप्रमाणपत्र) ले लिया है। विवाह के कुछ सप्ताह बाद रात को मेरी शान्ति भंग कर फिर मेरे सदर दरवाज़े पर शब्द हुआ—"बाबूजी, नवीन बाबू!"

जग कर सोचा—"और किसी का वसीयतनामा लिखना होगा क्या?"

बाहर आकर देखा कि लालटेन लिये एक नौकर खड़ा है। उसके पीछे पन्ना और सुन्दरलाल हैं।

आश्चर्य से पूछा—"क्या है? बात क्या है?"

"भीतर चलो, कहता हूँ।"

नौकर को बिदाकर सुन्दरलाल ने पन्ना के साथ मेरे आँगन में प्रवेश किया। कहा—"पिता ने हम दोनों को निकाल दिया है।"

"क्यों?"

"वह सोने का सिंह बिलकुल सोने का नहीं। ख़ूब पतली सोने की पत्ती ऊपर मढ़ी थी। भीतर बिलकुल ताँबा था। पिता ने पहले ही कहा था कि उसको गला कर कम्पनी के काग़ज़ ख़रीद कर रक्खेंगे। नहीं तो डाँकू किसी दिन सिंह

को ले जायँगे। आज शाम को गलाया है। अन्दाज़न कोई दो सौ रुपये का सोना निकला है—बाकी सब ताँबा है। पिता क्रोध से पागल से हो गये हैं। दूर दूर कर हम लोगों को घर से निकाल दिया है।

मेरी स्त्री बराण्डे में अंधकार में खड़ी सब सुन रही थी। अचानक आ पन्ना का हाथ पकड़ अपने कमरे में ले गई।

मैं सुन्दरलाल को साथ ले जाकर दूसरे कमरे में बैठा।

प्रतिज्ञा-पालन

पहला परिच्छेद

भवतोष कालेज में अँगरेज़ी पढ़ता तो था, किन्तु अँगरेज़ी पढ़ने की उसे बिलकुल इच्छा न थी। अँगरेज़ी विद्या में उसकी तिल-मात्र श्रद्धा न थी। इसके अतिरिक्त उसका ख़याल था कि अँगरेज़ी पढ़ने से ही देश का सत्यानाश हुआ है। देश में आर्यभाव लुप्त होते जा रहे हैं, भारत में उस पूर्वकाल के लौटने का उपाय नहीं रहा जाता, यह कह कर भवतोष आक्षेप किया करता था। आत्मीय स्वजनों के डाँट-दपट से लाचार हो वह अँगरेज़ी पढ़ता था, नहीं तो नवद्वीप या भट्टपल्ली में जाकर किसी विद्यालय में भरती हो संस्कृत पढ़ने की इच्छा थी। जो हो, अँगरेज़ी पढ़ने-लिखने पर भी भवतोष अपने आचार-व्यवहार और विचारों को जैसा अविकृत रख सका था, वैसा आज-कल प्रायः देखा नहीं जाता।

भवतोष कलकत्ते में एक विद्यार्थी-आश्रम में रह कर लिखना-पढ़ना सीखता था। एक दिन हठात् दुर्गापूजा की

छुट्टी हो गई। भवतोष घर के लिए नये नये कपड़े-लत्ते आदि ख़रीद गठरी-मोटरी बाँध कर घर को रवाना हुआ। उसका घर कलकत्ते से बहुत दूर न था।

दुर्गापूजा समाप्त हुई। पूर्णिमा आई। उस दिन सवेरे भवतोष की विधवा माता गङ्गास्नान करने के लिए गई थी। गङ्गा का घाट गाँव से कुछ दूर था। घाट पर नगर की बहुत सी स्त्रियों का समागम हुआ था। स्नान के बाद, लौटते वक़्त, भवतोष की माता की दृष्टि लड़कपन की अपनी सहेली उपेन्द्र वन्द्योपाध्याय की स्त्री पर जा पड़ी।

"क्यों, दीदी, अच्छी तो हो?" कह कर उपेन्द्र बाबू की स्त्री भवतोष की माता के पास आई। दोनों सखियों के कुशल-प्रश्नादि पूछने पर उपेन्द्र बाबू की स्त्री ने कहा—"भवतोष घर आया है?"

"आया है। उसकी छुट्टी भी ख़तम होने पर आई; फिर कलकत्ता चला जायगा।"

उपेन्द्र बाबू के तेरह वर्ष की एक सुन्दर कन्या है। उसका नाम पुलिना है। लड़की कुमारी है। उपेन्द्र बाबू की स्त्री ने कहा—"देखो दीदी, मेरी पुलिना के साथ अपने भवतोष का यदि ब्याह कर दो तो अच्छा हो।"

भवतोष की माँ ने कहा—"मेरी भी बहुत दिनों से यही इच्छा है बहन, किन्तु लड़का विवाह करना नहीं चाहता, क्या करूँ, कितने सम्बन्ध आ आकर लौट गये।"

"अच्छा तो एक बार और कह देखो न। बड़ा लड़का है, बहू आने पर तुमको कितना आनन्द होगा, ब्याह क्यों नहीं करता ?"

भवतोष की माँ ने कहा—"अच्छा, कह देखूँगी। यदि लड़का राज़ी हो गया तो इसी अगहन महीने में ही ब्याह हो सकता है।"

माँ जिस वक़्त घर लौटी उस वक़्त भवतोष बैठक में बैठा वङ्गवासी के उपहार पराशरसंहिता के एक स्थल का अनुवाद ध्यानपूर्वक पढ़ रहा था। माँ ने आकर कहा—"बेटा, भीतर आओ; एक बात कहनी है।"

भवतोष किताब रख धीरे धीरे माता के पीछे पीछे चला। अपने कमरे में ले जाकर माता ने पुत्र से कहा—"बेटा, इस बार ब्याह कर डालो। तुम मेरे बड़े लड़के हो, बहू का मुँह देखने की कब से मुझे आशा लगी है, वह आशा पूरी करो बेटा।"

हम ऊपर लिख आये हैं कि भवतोष पहले विवाह करने को बिलकुल राज़ी न था। विद्यार्थी की दशा में विवाह करना उचित नहीं,—कमाने योग्य हुए बिना विवाह करना उचित नहीं,—इस प्रकार की कोई भी विलायती आपत्ति भवतोष को न थी। उसकी आपत्ति दूसरे प्रकार की और शास्त्र-सम्मत भी थी। उसने सुना है, और समाचार-पत्रों में भी पढ़ा है, कि आज-कल की नई रोशनी की स्त्रियाँ यथार्थ हिन्दू गृहलक्ष्मी

की तरह नहीं होतीं। वे बहुत शौकीन और बाबू होती हैं। शास्त्र की रीति के अनुसार स्वामी पर भक्ति नहीं रखतीं, बल्कि स्वामी के साथ बराबरी का बर्ताव करने को तैयार रहती हैं! और भी नाना प्रकार के दोष उसने सुने थे।

किन्तु विधवा माता के एकान्त अनुरोध को किस तरह टाले? माता की आज्ञा न मानने का पाप-भार भी वह सिर पर लादना नहीं चाहता। इसलिए थोड़े दिनों से स्थिर किया है कि माँ के इस बार अनुरोध करने पर विवाह करेगा, किन्तु लड़की उसके प्राचीन आदर्श के अनुरूप होनी चाहिए।

इस समय इस सम्बन्ध में भवतोष की स्वाधीन चिन्ता से निकले हुए अनेक मत थे। उसके आश्रम के उसके सह-पाठियों को वे अच्छी तरह मालूम थे। रात में, भोजन के बाद, छत पर जब आश्रम के विद्यार्थी होते थे तब अनेक सिगरेटों का अग्रभाग एक साथ जल उठता था, उस समय प्रायः इस विषय की आलोचना होती थी। वादानुवाद होने पर भवतोष कहता था—"यदि मैं कभी ब्याह करूँगा तो ऐसी लड़की से ब्याह करूँगा जो काली और कुरूपा होगी। कारण, सुन्दर लड़कियाँ अभिमानिनी होती हैं। सास-ससुर पर भक्ति-श्रद्धा नहीं रखतीं, पति को पूज्य नहीं मानतीं, सहधर्मिणी न होकर विलासिनी हो जाती हैं। इसके अतिरिक्त वे 'बाबू' बनना चाहती हैं। ज़रा रूपवती होने से, सज-धज कर रूप को प्रकट करने में व्यस्त रहती हैं। साबुन चाहिए, सुगन्ध चाहिए,

पाउडर चाहिए, पारसी साड़ी चाहिए, ज़नानी कमीज़ चाहिए, बेचारे पति को प्राण की आ लगती है- -दूसरे पढ़ी-लिखी लड़की से विवाह न करूँगा। वे केवल उपन्यास पढ़ती हैं (कोई कोई उपन्यास लिखती भी हैं), ताश खेलती हैं, स्वामी को कविता में पत्र पर पत्र लिखने में दिन बिता दिया करती हैं, घर का काम-काज नहीं करतीं, व्रत नियमादि सधते ही नहीं, बच्चे ज़मीन पर पड़े रोते रहते हैं-" इत्यादि।

इस प्रकार की ओजस्विनी वक्तृता सुन कर आश्रम के कोई कोई विद्यार्थी कहते थे—"अच्छा, भवतोष बाबू, समय आने पर कैसा करोगे, देख लेंगे। ऐसा बहुतेरे कहते हैं। कहने और करने में बड़ा अन्तर है।"

सन्देह की ऐसी बातों से भवतोष जोश में आकर कहता था—"अच्छा, देख लेना कि मैं जो कहता हूँ वही करता हूँ या नहीं।"

माँ जब बार बार अनुरोध करने लगी तब भवतोष राज़ी हो गया। कहा—"अच्छा माँ, मैं ब्याह करूँगा, किन्तु खुद देख-सुन कर ब्याह करना चाहता हूँ।"

सुनकर माँ बहुत खुश हुई। कहा—"देख-सुन कर ब्याह करना चाहते हो? अच्छी बात है। एक अच्छी सुन्दर तेरह बरस की लड़की है।"

भवतोष सुनकर चौंक उठा। कहा—"खूब सुन्दर है क्या?"

माँ ने उत्साहपूर्वक कहा—"ख़ूब सुन्दर है। मूरति सा मुँह है। जैसी नाक है, वैसी ही आँखें हैं, वैसी ही भौंहें हैं। देह तो एकबारगी गुलाब के फूल की तरह है।"

भवतोष ने मन्द और गंभीर स्वर से कहा—"उससे तो मैं ब्याह न करूँगा, माँ।"

माँ सुनकर अकचका गई। कहा—"क्यों, क्या हुआ?"

"सुन्दर लड़की से मैं ब्याह न करूँगा।"

"तो कैसी लड़की से ब्याह करोगे?"

"मैं एक काली-कुरूपा लड़की से ब्याह करूँगा।" भवतोष का स्वर वज्र की तरह दृढ़ था।

माँ सुनकर आश्चर्य में डूब गई। कहा—"पागल, सब ही तो सुन्दर लड़की से विवाह करना चाहते हैं। सबको सुन्दर लड़की मिलती भी नहीं।"

"सब करें, मैं काली-कुरूपा से ही ब्याह करूँगा"—कहते कहते भवतोष का मुखमण्डल आत्मगौरव से प्रदीप्त हो उठा। वह भी क्या सबकी ही तरह है। वह क्या सबकी तरह भोग-विलास के लिए ब्याह करता है?

माँ को कुछ दुःखित देखकर भवतोष ने सब बातें खोलकर कहीं। सुन्दर लड़की आदर्श हिन्दू गृहलक्ष्मी क्यों नहीं हो सकती, यह माँ को अच्छी तरह समझा दिया। अन्त में कहा कि उसकी प्रतिज्ञा स्थिर—अटल—अचल है।

उस दिन माँ ने और कुछ न कहा। भवतोष की भी छुट्टी बीत गई, वह भी कलकत्ते को चला।

दूसरा परिच्छेद

उपर्युक्त घटना के कई दिन बाद, एक दिन पालकी कर उपेन्द्र बन्द्योपाध्याय की स्त्री भवतोष की माता से मिलने आई।

पहले कुशल-प्रश्न के बाद उपेन्द्र बाबू की स्त्री ने पूछा—"दीदी, भवतोष राज़ी हुआ?"

भवतोष की माता ने कहा—"ब्याह करने को राज़ी हो गया है, परन्तु उसका एक और अजब मत है।"

"क्या?"

"पहले कहा था कि मैं देख-सुनकर ब्याह करूँगा। मैंने कहा था कि अच्छी बात है; एक ख़ासी सुन्दर लड़की है, देख आना। तब उसने कहा कि मैं सुन्दर लड़की से ब्याह न करूँगा। एक काली-कुरूपा लड़की से ब्याह करना चाहता हूँ।"

उपेन्द्र बाबू की स्त्री यह सुनकर विस्मित हुई। कहा—"ऐसी अजब ज़िद तो कभी सुनी नहीं। ऐसी ज़िद करने का कोई कारण भी बताया है।"

भवतोष की माता ने पुत्र से जो सुना था वह सब कहा। उपेन्द्र बाबू की स्त्री बैठी हुई सोचने लगी।

कुछ क्षण के बाद कहा—"देखो, तुम एक काम करो न, दीदी। भवतोष को इस शनिवार को आने को लिखो। लिखो कि तुम जैसी लड़की से विवाह करना चाहते हो, वैसी एक लड़की ठीक की है; उसे आकर देख जाओ। इसके बाद, आने पर, रविवार के दिन शाम को मेरे यहाँ भेज देना। मैं सब ठीक कर लूँगी।"

भवतोष की माता राज़ी हो गई। सोचा, शायद उपेन्द्र बाबू की स्त्री ने सोचा है कि पुलिना को देखने पर भवतोष विवाह करने से नट न सकेगा। असल में यह आश्चर्य की बात नहीं। कारण, लड़की बहुत ही सुन्दर है।

तीसरा परिच्छेद

भवतोष शनिवार को घर आया। दूसरे दिन शाम को गाड़ी कर, बाल बिखराये (क्योंकि प्राचीन काल में ऋषि-मुनि बालों को न सँवारते थे), दूसरे गाँव को, उपेन्द्र वंद्योपाध्याय के घर पर जा पहुँचा।

घर पहुँचने पर सुना कि उपेन्द्र बाबू घर में नहीं हैं, किसी काम से बाहर गये हैं। एक युवक ने उसको बड़े आदर

से गाड़ी से उतार कर बैठक में लेजाकर बिठाया। युवक उपेन्द्र बाबू का भतीजा है।

कुछ ही क्षणों के बाद नौकरानी ने आकर कहा कि भीतर चलना होगा। नौकरानी भवतोष के मुँह की ओर ताक कर ज़रा मुसकुराई।

युवक के साथ भवतोष भीतर चला। उसने देखा कि नौकर-चाकर सब मानो हँसी छिपाने की चेष्टा कर रहे हैं।

भवतोष एक कमरे में लाया गया। कमरा अच्छी तरह सजा हुआ था। उसके मध्य में एक आसन रक्खा था। आसन के आगे एक रकाबी में फल और मिठाई सुचारु रूप से रक्खी थी। पास ही एक और आसन रक्खा था।

अनुरोध के कारण भवतोष मिठाई की थाली के सामने बैठा। इसी समय बाहर कड़ों-छड़ों का रुनुक झुनुक स्वर सुनाई पड़ा। नौकरानी लड़की को लिये कमरे के भीतर पहुँची। लड़की दूसरे आसन पर बैठ कर वर के चारों ओर चकित दृष्टि से देखने लगी।

लज्जा से भवतोष का सिर नीचे झुका हुआ था। वह थोड़ा थोड़ा फल खा रहा था और कनखियों से लड़की को ताकता था। लड़की बैजनी रङ्ग की बम्बैया साड़ी पहने थी। सिर खुला हुआ था। बालों से तेल चू सा रहा था।

लड़की का वर्ण कोयले से अधिक काला था। आँखें दोनों छोटी छोटी और भीतर धँसी हुई थीं। फिर भी वे दोनों घूम रही

थीं। ललाट ऊँचा था। नाक चपटी थी। चिबुक तो था ही नहीं, यही कहना होगा। आगे के दाँत कुछ दिखाई दे रहे थे।

भवतोष ने सोचा कि रूप की दृष्टि से लड़की उसके आदर्श के अनुसार है। ज़रा गला साफ़ कर (खखार कर), साहस-संग्रह कर भवतोष ने पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है?"

लड़की ने एकाएक भवतोष की ओर देख, ज़रा जीभ निकालकर कहा—"आँय?"

"तुम्हारा नाम क्या है?"

"मेरा नाम जगदम्बा है।"

इसी समय युवक और उसी नौकरानी ने उसकी ओर घूर कर देखा। लड़की ने फ़ौरन कहा—"मेरा नाम जगदम्बा नहीं,—मेरा नाम पुलिना है।"

युवक ने कहा—"पहले इसका नाम जगदम्बा था पर अब बदल कर पुलिना रक्खा गया है।"

भवतोष ने सोचा—नाम ठीक तो नहीं बदला गया। पुलिना!—सुनकर देह जल उठती है। उसकी अपेक्षा जगदम्बा बहुत अच्छा है। पौराणिक नाम है, देवी का नाम है। विवाह हो जाने पर वह जगदम्बा ही नाम बहाल रक्खेगा।

भवतोष ने पूछा—"तुम कुछ पढ़ती-लिखती भी हो?"

बालिका ने पूर्ववत् जीभ निकाल कर कहा—"आँय?"

"तुम कुछ पढ़ती-लिखती भी हो?"

"मैं तो कुछ पढ़ती-लिखती नहीं। मेरा दादा पाठशाला में—"

नौकरानी और उस युवक के फिर आँखें दिखाने पर बालिका रुक गई।

सुनकर भवतोष और भी निश्चिन्त हुआ। यही ठीक है। इसको ही यथार्थ गृहिणी बनाना सम्भव होगा। देखने में ज़रा—होने दो। यही तो उसकी प्रतिज्ञा है। विवाह के समय गाँव के लड़कों को निमन्त्रण देकर बुला लाना होगा।

भवतोष ने कहा—"अच्छा, तुम जा सकती हो।"

बालिका ने जीभ निकाल कर पूर्ववत् कहा—"आँय ?"

"जा सकती हो।"

नौकरानी तब उसे अपने साथ लिवा ले गई।

क्रम से भवतोष का जलपान समाप्त हुआ। इसी समय तेरह वर्ष की एक बालिका चाँदी के डिब्बे में पान भर के ले आई। लड़की बहुत ही सुन्दरी थी, काली किनारे की देशी साड़ी पहने थी। पाँव में चार चार छड़े पड़े थे। हाथों में सोने के कड़े थे। भौंहों के बीच में एक बिन्दी लगी थी।

पान रख कर लड़की चली गई। जाते समय दूसरी ओर देख कर ज़रा मुसकुरा गई।

भवतोष ने मन ही मन सोचा कि देखो, यह एक सुन्दर लड़की है। मान लो, यदि इसके ही साथ मेरा विवाह हो जाता तो क्या कुशल था? मेरा सब आदर्श, सब सङ्कल्प

अतल जल में डूब जाता। विलास-विभ्रम में फँसना पड़ता, मेरा दिमाग़ फिर जाता। नहीं, नहीं, मैं सुख के लिए, आमोद के लिए, प्रणय के लिए विवाह नहीं करता हूँ,—मैं धर्म के लिए, संयम के लिए, आदर्श हिन्दू बन कर गार्हस्थ्य-जीवन बिताने के लिए विवाह करता हूँ। प्रतिज्ञा पूर्ण होने का आत्मगौरव भवतोष के मन में उछलने लगा।

युवक के साथ भवतोष बाहर आया।

नौकरानी ने आकर मुसकुराते हुए पूछा—"भीतर सब पूछती हैं कि लड़की पसन्द आई या नहीं?"

भवतोष ने गर्व के साथ कहा—"पसन्द आई है।"

चौथा परिच्छेद

गाड़ी से आते आते भवतोष मन ही मन शाम की घटनाओं की आलोचना करने लगा। गाँव होकर गाड़ी जा रही थी। कितनी ही युवती लड़कियाँ कलसी में पानी भर घर लौटी जा रही थीं। उन सब लड़कियों का मुँह भवतोष ज़रा गौर से देखने लगा। उनमें सुन्दर सुन्दर लड़कियाँ हैं, काली-कुरूपा भी अनेक हैं—किन्तु जगदम्बा की तरह कुरूप एक भी मुख न देख पड़ा।

गाड़ी क्रम से मैदान में आ पहुँची। उस समय भी

उसका मन आत्मजय के उत्साह से भर रहा था। तथापि मन ही मन सोचने लगा कि उसने काली-कुरूपा लड़की से विवाह करने की प्रतिज्ञा की थी, किन्तु एकबारगी ऐसी कुरूपा न होने पर भी कोई क्षति न थी। कुछ भी हो, जब कह आया हूँ कि पसन्द है तब अब इस प्रकार की आलोचना से क्या फल ?

इसी अवस्था में भवतोष घर पहुँचा। माँ ने पूछा—'क्यों बेटा, लड़की पसन्द आई ?"

"हाँ, पसन्द आई।"

"तो सब ठीक करूँ ?"

"करो।"

"इसी अगहन महीने में ही हो जाय तो कैसा ?"

"अच्छा है"—कह कर भवतोष अन्यत्र चला गया।

माँ ने देखा कि लड़के का मन कुछ भारी सा हो रहा है। सोचा, सुन्दर लड़की से विवाह न करने के लिए बहुत कूदता-फाँदता था, अब राज़ी हो गया है, इसी से मालूम होता है लड़का लजा गया है।

भवतोष ने रात में कुछ भोजन नहीं किया। कहा कि उन लोगों के घर से खूब खा आया है, भूख नहीं। उस समय उसके मन में आत्मजय और प्रतिज्ञा-पालन का उत्साह बहुत कुछ कम हो गया था।

रात में लेट कर वह जगदम्बा के मुँह का जितना ही ध्यान

करने लगा, उतना ही उसकी छाती के भीतर बर्फ़ सा जमने लगा। सोचने लगा कि इतनी कुरूपा न होकर ज़रा कुछ देखने योग्य होती तो बुरा न था।

सोमवार को सवेरे की गाड़ी से भवतोष ने कलकत्ते की यात्रा की। माँ ने उससे कह दिया कि विवाह के सिर्फ़ दस दिन और बाक़ी हैं। दो दिन पहले तुम घर पर आ जाना।

कलकत्ता पहुँचने पर सहपाठियों ने देखा कि भवतोष का मुँह मेघ की तरह अन्धकारमय हो रहा है। भवतोष अपने कमरे के भीतर जाकर बैठा।

"क्यों भवतोष बाबू क्या ख़बर है ?" कहते कहते रजनी बाबू, शरत् बाबू, सतीश बाबू, कुमुद बाबू, नृपेन्द्र बाबू प्रभृति आकर उपस्थित हुए। भवतोष घर जाते वक्त इन लोगों से सभी बातें कह गया था।

"क्या ख़बर है भवतोष बाबू ?"

भवतोष ने कुछ कष्ट की हँसी हँस कर कहा—"ख़बर अच्छी है।"

इसके बाद सबने प्रश्न कर लड़की का रूप-गुण, उम्र आदि सब जान लिया। शरत् बाबू हठात् पूछ उठे—"लड़की का नाम क्या है ?"

भवतोष ने नाम बतलाया।

नाम सुनने पर सबके मुँह पर मीठी मुसक्कराहट दिखाई

पड़ी। केवल नृपेन्द्र बाबू आत्मसंयम न कर सकने के कारण ज़ोर से हँस उठे—"हा—हा—हा—जगदम्बा—हि—हि—हि—नाम अच्छा तो है !"

शरत् बाबू ने कहा—"नृपेन्द्र बाबू, यह क्या इस प्रकार हँसी की बात है ? हँसते क्यों हैं ?"

नृपेन्द्र बाबू ने कहा—"नहीं, हँसता नहीं। हि–हि–हि—हँसूँगा क्यों ? हा–हा ?"

रजनी बाबू ने कहा—"नहीं, नाम क्या बुरा है ? पौराणिक नाम है। तुम लोगों को आज-कल के ज्योत्स्नामयी, सरसीबाला, तड़िल्लता, मणिमालिनी—ये सब नाटकी नाम ही शायद भले मालूम होते हैं ?"

भवतोष यह सुनकर गम्भीर भाव से सिर हिलाने लगा। इन सब विषयों में पहले सी उत्तेजना जैसी आज उसमें न हो।

विवाह के लिए नौ दिन और बाक़ी हैं। ये नौ दिन भवतोष के किस तरह से कटे, यह वही जाने। साथवाले भी कुछ कुछ समझ सके थे। भवतोष मन में जगदम्बा का जितना ही ध्यान करता था उतना ही उसके हृदय में अंधकार भर जाता था। भवतोष कालेज जाता था, किन्तु लेकचर में कुछ सुन न पाता था। भूख के लिए डेरे पर वह मशहूर था, आज-कल उसके पत्तल पर आधे से अधिक भोजन पड़ा रह जाता है। भवतोष किसी से हँसता-बोलता नहीं, सदा अनमना रहता है। साथ में रहनेवाले उसे कहने लगे—"भव-

तोष बाबू, प्रेम-व्याधि के समस्त लक्षण क्रम से आप में प्रकट हो रहे हैं।"

रात में बिछौने पर लेटने पर भवतोष को सहज ही नींद नहीं आती। केवल करवटें बदलता रहता। बड़े कष्ट से जब नींद आ जाती तो भयंकर भयंकर स्वप्न देखता। एक दिन स्वप्न में देखा कि जगदम्बा ने मानो काली की मूर्त्ति धारण की है। उसकी छोटी सी जीभ जो भवतोष ने देखी थी, वह आधी मानो बाहर निकल आई है। उसके मानो दो नये हाथ पैदा हो गये हैं। उसके एक हाथ में रक्तभरी एक तलवार है, दूसरे में एक कटा सिर सा हिल रहा है। सिर देखने में भवतोष का सा मालूम होता है। और एक दिन स्वप्न में देखा कि भवतोष एक कँटीले रास्तेवाले जङ्गल में मानो राह भूल गया है। घबराया हुआ राह खोजता फिर रहा था, उसी समय मानो एक भैंसा उसे मारने के लिए आया। महिष मानो बैंगनी रङ्ग की बंबैया साड़ी पहने है। उसके सिर की जगह मानो जगदम्बा का सिर है, उससे केवल दो सींग निकल आये हैं।

जब विवाह के लिए केवल तीन दिन बाक़ी रहे, तब भवतोष ने सोचा कि माँ को चिट्ठी लिख कर यह विवाह रोक दूँ। उस दिन वह तबीअत की नासाज़गी का बहाना कर कालेज न गया। दिन भर कमरे में अकेला बैठा एक एक कर अनेकों चिट्ठियाँ माँ को लिखीं और फाड़ फाड़ कर टुकड़े

टुकड़े कर दिये। साथी जब सुनेंगे कि विवाह तोड़ दिया है तब सब क्या कहेंगे? उनका चुटकियाँ मारना, बनाना आदि वह कैसे सह सकेगा।

उस दिन रात में वह लेटा लेटा सोचने लगा कि वह किसी से कुछ न कह कर पश्चिम भग जायगा। उठ कर बत्ती जलाई और टाइमटेबल उठा पन्ने पलटने लगा। किन्तु सवेरे फिर मत बदल गया। छिः छिः क्या इतना सब कुछ कर चुकने पर वह भीरु नाम ग्रहण करेगा? यह न होगा, वह प्रतिज्ञा पूर्ण करेगा ही, इसके बाद चाहे कुछ भी हो।

वह यथासमय घर पहुँच गया। यथासमय वह विवाह-मण्डप में उपस्थित हुआ। वहाँ के लोकसमागम, आलोक और कोलाहल से आज दश दिन के बाद उसका चित्त स्थिर हुआ। युद्ध-काल आ उपस्थित होने पर कायर सैनिक भी भय भूल जाते हैं।

विवाह आरम्भ हुआ। उस समय भवतोष का चित्त निर्विकार था। उस समय उसके मन में भय या भावना हर्ष या नैराश्य कुछ भी न था।

क्रम से स्त्री-आचार का समय आया। शुभ दृष्टि के लिए वर और कन्या के मस्तक पर कपड़ा डाल दिया गया। कन्या की ओर देख कर भवतोष चकरा गया। यह उसकी दश दिनवाली विभीषिका, निद्रा का दुःस्वप्न—जगदम्बा

नहीं। यह वही अपूर्व सुन्दरी लड़की है, जो चाँदी के डब्बे में पान रख गई थी।

× × × ×

फूलशय्या की रात को जब भवतोष नववधू से बातें कहलाने में सफल न हुआ तब एक उपाय किया। उसने सुना था कि जो नववधू किसी तरह बात नहीं करती, वह भी आत्मीय स्वजन की बुराई सुन कर उसका प्रतिवाद करती है। इसी से भवतोष ने कहा—"तुम्हारी माँ ने मेरे साथ ऐसी चतुराई क्यों की ?"

पुलिना तब बोली—"मुझे सुन्दर कह कर तुम शायद मुझसे विवाह न करना चाहते ? कहो कैसा छकाया !"

भवतोष अब तक इस प्रहेलिका की मीमांसा न कर सका था। इसी से पूछा—"जिसे देखा था, वह लड़की कौन थी ?"

"एक पड़ोसी की लड़की। कैसा छकाया !"

× × × ×

क्रम से ऐसा दिन भी आया जब भवतोष डाक आने के पहले बराण्डे में खड़ा हो डाकिये से भेंट करने लगा।

वकील की बुद्धि

पहला परिच्छेद

सुबोधचन्द्र हालदार आज चार बरस से वकालत कर रहे हैं, किन्तु अब तक उनकी वकालत वैसी नहीं चटकी। वे जिस समय क़ानून की परीक्षा में पास हुए थे उस समय सबने एक-वाक्य से कहा था—आदमी बड़ा काँइया है—इसे नाम कमाने में देर न लगेगी। किन्तु हाय, उन लोगों की भविष्यद्वाणी निष्फल हो गई। यथार्थ विद्या-बुद्धि न होने से सुबोध बाबू मालामाल नहीं हुए—ऐसा कहा नहीं जा सकता। विश्वविद्यालय के उपाधिधारी युवक हैं,—विद्या की छाप तो उनके नाम की सहचरी है। बुद्धि भी उनकी असाधारण थी। पास होने पर उन्होंने दिनाजशाही ज़िले में जाकर बसने का इरादा किया। सुना था, वहाँ काम भी ख़ूब है—और बार भी वैसा 'स्ट्रेन' नहीं। यात्रा करने के पहले, अपने गाँव के एक वकील से मिलने के लिए भवानीपुर गये। उनके हाथ में एक छोटा सा बेग था। वकील बाबू से प्रथम शिष्टाचार के बाद कहा—"आपसे मेरी एक विनती है।"

वकील बाबू ने कहा—"कहिए, क्या कहते हैं ?"

"आपके लिए कुछ भेंट लाया हूँ, आपको ग्रहण करना होगा।"

वकील बाबू को कुछ आश्चर्य हुआ। पूछा—"क्या भेंट लाये हैं ?"

सुबोध ने तब धीरे धीरे बेग खोला। उसके भीतर से निकला—अलपाके की एक नई भड़कीली चपकन और एक नई बढ़िया पगड़ी। दोनों चीज़ें निकाल कर सुबोध ने कहा—"ये आपको अनुग्रह कर लेना होगा।"

वकील बाबू ने सुबोध के इस अपूर्व प्रस्ताव से कुछ विस्मित हो कहा—"यह तो ठीक है। किन्तु इसका मतलब क्या है ?"

सुबोध ने अत्यन्त विनय के साथ कहा—"मतलब है।"

"कहो सुनें तो ?"

"ये आप ले लें और अपनी पुरानी चपकन और पगड़ी मुझे दे दें।"

अब वकील बाबू को अन्धकार में मानो प्रकाश दिखाई पड़ा। हा-हा हँस कर कहा—"ठीक है—ठीक है—अच्छी बुद्धि सूझी है।"

सुबोध ने कहा—"जी हाँ, एक नई जगह वकालत करने जा रहा हूँ। एक तो यों ही नये वकील हैं—दूसरे नई

पगड़ी और नया चपकन देख कर क्या मुवक्किल पास आयेंगे ?"

वकील बाबू ने कहा—देखो, मैं कहे देता हूँ। तुम जल्दी ही नामवर हो सकोगे। तुम्हीं बार के उपयुक्त मनुष्य हो।

इस प्रकार पुराना चपकन और पगड़ी मिल गई। अपना नयापन अच्छी तरह छिपाने के लिए सुबोधचन्द्र एक वैद्य-राजी दूकान से ऐसे तेल की एक शीशी खरीद लाये थे जिसे लगाने से बाल पक जाते हैं। इच्छा थी कि सिर पर लगा कर आगे के कुछ बालों को सफ़ेद कर लेंगे। किन्तु एक दुर्बलता के समय स्त्री से यह बात कह डाली। दूसरे दिन सुना कि बिल्ली ने न मालूम किस तरह टेबल पर से शीशी गिरा दी; शीशी टूट जाने से तेल गिर गया।

किन्तु समय कैसा भयानक उपस्थित हुआ। जो इतना बुद्धिमान् है वह भी, दिनाजशाही की बार-लाइब्रेरी में जाकर चार वर्ष तक मुवक्किल न जुटा सका।

सुबोधचन्द्र का मकान लबे-सड़क है। छोटा सा दोमञ्ज़िला घर है, रास्ते पर फाटक है—उसके बाद साधारण सा एक कम्पाउण्ड है—फिर घर का बराण्डा है। घर का किराया बीस रुपया माहवार है। किन्तु चार महीने का किराया बाक़ी पड़ गया है। जिस मोदी की दूकान से चावल-दाल आदि खाने की चीज़ें आती हैं, उसका भी सौ रुपया उधार

हो गया है ! मकान-मालिक और मोदी दोनों ही सुबोध बाबू को बहुत अधिक तङ्ग करने लगे हैं। दिनाजशाही आकर सुबोध धन-रत्न तो उपार्जन नहीं कर सके पर दो कन्या-रत्न उपार्जन करने में अवश्य समर्थ हुए हैं। और उपार्जन किया है एक बन्धुरत्न; नाम है जगत्प्रसन्न बाबू। जगत् बाबू के साथ उनकी विशेष मित्रता है। जगत् बाबू यद्यपि नये वकील हैं, तथापि उनकी दशा सुबोधचन्द्र की तरह शोचनीय नहीं। उनके पिता स्थानीय वकील थे। पिता की मृत्यु के बाद पुराने मुवक्किलों में से किसी ने उनके पुत्र का परित्याग नहीं किया।

दूसरा परिच्छेद

शीतकाल का प्रभात है। दफ़्र में बैठे सुबोध बाबू चीनी की जगह गुड़-पड़ी चाय पी रहे थे। 'स्वदेशी' की कृपा से अब उनको इसमें लज्जा नहीं। वे गर्व के साथ लोगों से कहा करते हैं—दूकानदारों का विश्वास नहीं है जनाब, देशी चीनी कह कर जो चीनी देते हैं वह जावा की चीनी है। लोग समझते हैं कि पीलापन लिये जो चीनी होती है वही देशी चीनी है। किन्तु सादी दानेदार चीनी ही को विदेशी समझना बड़ी भूल है। जावा, मारिशस आदि देशों से

पीली चीनी बहुत अधिक आती है। ऐसी चीनी की अपेक्षा मैं गुड़ को ही अच्छा समझता हूँ।

सुबोध बाबू चाय पी चुके। प्याला उठा ले जाने के लिए नौकरनी को पुकारा किन्तु किसी ने जवाब न दिया। तब लाचार हो खुद ही प्याला घर के भीतर ले गये। स्त्री से सुना कि आज नौकरनी बाक़ी तनख़्वाह के लिए बहुत लड़-झगड़ कर चली गई है। कह गई है कि नालिश कर तनख़्वाह ले लूँगी।

ठण्ढी साँस लेकर, और अपने हाथ से चिलम में तम्बाकू भर कर सुबोध बाबू बाहर आये। कालेज में पढ़ते वक़्त ये भी दूसरे नवयुवकों की तरह तम्बाकू नहीं पीते थे। बार में आकर देखा कि सभी बड़े बड़े वकील हुक़्क़ा पीते हैं। थोड़ा-बहुत 'और कुछ भी' पीते हैं। केवल नये वकील ही 'कुछ' नहीं पीते। यह देख कर सुबोध बाबू ने तुरन्त दो रुपये से एक हुक़्क़ा ख़रीद लिया। आठ आने की एक सेर तम्बाकू पन्द्रह दिन तक चलने लगी। पूछने से मालूम हुआ कि 'और कुछ भी' का दाम अधिक है—तीन रुपये से कम में एक बोतल नहीं मिलती। इसलिए 'और कुछ भी' पीने से वञ्चित रहे। महीने में एक रुपये की तम्बाकू पी जाने पर भी जब प्रसिद्धि नहीं हुई तब सुबोध बाबू ने ग़ुस्से से एक दिन तम्बाकू पीना छोड़ दिया। किन्तु दो दिन बीतते न बीतते फिर तम्बाकू पीने लगे। फिर भी, इस समय जो तम्बाकू

पीते हैं वह आठ आने सेर की नहीं, चार आने सेर की है।

जाड़े का मौसिम है। सवेरा हो गया है। आज रविवार है। कचहरी की तातील है। निश्चिन्त मन से सुबोधचन्द्र धूम्र-पान करने लगे। उनकी जो सामान्य पैत्रिक पूँजी थी वह उड़ चुकी थी। इसके बाद स्त्री के गहनों की पारी आई और वे भी एक एक कर जाने लगे हैं। इस तरह और कितने दिन चलेगा? आगे क्या किया जायगा? अब विज्ञापन देख कर नौकरी के लिए कितनी ही जगह दरख्वास्तें भेजीं पर कुछ फल न हुआ। दिन दिन खर्च बढ़ता ही जाता है--और के नाम फूटी कौड़ी की भी आमदनी नहीं है। बीच बीच में कमीशन के नाम से कुछ मिल जाता है पर उससे किसी तरह गुज़र नहीं चलता। सुबोध सोचने लगे—और हुक्का गुड़गुड़ाने लगे। बाहर फेरीवाला मोहनभोग और ताज़ा गाय के घी की आवाज़ लगाता जा रहा है। मुवक्किलहीन निर्जन कमरे में बैठे सुबोध बाबू ने चार आने सेर की एक चिलम तम्बाकू बिलकुल भस्म कर दी।

इस समय बाहर अहाते से पैरों की आहट आई। कौन आता है! कोई मुवक्किल तो नहीं? पास की आलमारी के ऊपर से सुबोध बाबू जल्दी से एक पुराना ओफ़ उठा कर पढ़ने लगे।

पैरों की आहट अहाते से बराण्डे में सुनाई पड़ी। तहमे

भर में जगत्प्रसन्न बाबू ने प्रवेश किया। उनके हाथ में एक अख़बार था।

ब्रीफ़ को अलग रख कर सुबोध बाबू ने मित्र का स्वागत किया। कहा आइए, आइए, आज इतने सवेरे कैसे निकल पड़े।

"भाई, बैठा बैठा क्या करूँ, गपशप करने चला आया।"

"अच्छा किया। मैं भी अकेला छटपटा रहा था। क्या आज का 'बंगली' है? देखूँ।"

"अख़बार लेकर सुबोध बाबू 'आवश्यकता' का विज्ञापन खोजने लगे। जगत् बाबू ने कहा—तुमने नहीं सुना? परसों सवेरे सात बजे फुलर साहब आ पहुँचेंगे।

सुबोध ने कहा—सात बजे? सुनकर खुशी हुई। तो मेरे घर तो न आयेंगे?

जगत् बाबू ने हँस कर कहा—क्या मालूम? यदि आ ही जायँ—इतना डर क्यों?

"नहीं भाई, हम लोगों का स्वदेशी कारबार है—इस पर भी नौकरनी भग गई है। आख़िर उनकी ख़ातिर कैसे करूँगा?"

"सुबोध, समझ लो कि यदि ख़ातिरदारी कर सको तो रास्ता साफ़ हो जाय। बेचारे यहाँ आ रहे हैं। कोई बात तक करनेवाला नहीं। कोई म्युनिसिपेलेटी भी अभ्यर्थना नहीं

करती। कई जगहों के डिस्ट्रिक्ट बोर्डों में अभिनन्दनपत्र देने का प्रस्ताव उपस्थित किया गया था, पर ग़ैर-सरकारी सदस्यों के विरोध से प्रस्ताव पास नहीं हुआ।"

सुबोध ने हँसी में कहा—ख़ातिर करने से यदि चाकरी-वाकरी मिल जाय तो मैं ही एक अभिनन्दनपत्र दे डालूँगा।

"सुना नहीं, पूर्व बंगाल का एक वकील फुलर साहब की प्रशंसा में कविता बनाने से सरकारी वकील बना दिया गया है।

सुबोधचन्द्र के जीवन में यह अच्छा सुयोग आया। हँसी में जो प्रस्ताव किया था, उसी की एकाएक गम्भीर भाव से पर्यालोचना होने लगी। थोड़ी देर ठहर कर सुबोध ने कहा—जो सरकारी वकील की जगह भी मिल जाय तब तो मेरा उद्धार हो जाय। बतलाओ क्या करूँ?

किन्तु जगत् बाबू ने इसे भी दिल्लगी ही समझा। कहा—तो अँगरेज़ी में कविता बना सकोगे?

"नहीं। आज तक कभी तुकबन्दी नहीं की।"

"कोशिश करने में हर्ज ही क्या है। एक कविता बना कर सुनहरी स्याही से छपा लो। जिस दिन फुलर साहब आवें उस दिन उसी कविता को बाँटो और फुलर साहब के पास भी एक कापी भेज दो। इस फ़रीदसिंह म्युनिसिपेलिटी के चेयर-मैन एक सरकारी वकील हैं। फिर भी वे लाट साहब को

अभिनन्दनपत्र नहीं देते। इसी पर गोलमाल हो रहा है। उनका पद तुमको मिल सकता है।"

कुछ उत्तर न देकर सुबोध कपार पर हाथ रख गहरी चिन्ता में डूब गये।

जगत्प्रसन्न पहले की ही तरह परिहास के स्वर में कहने लगे—लाओ, काग़ज़-क़लम निकालो। मैं ही तुम्हारी मदद करता हूँ। लड़कपन में मुझे कविता करने का अभ्यास था। हाँ तो किस तरह आरम्भ किया जाय? Hail Fuller—Lord of East Bengal इसके बाद क्या लिखा जाय, बोलो तो?

सुबोध बाबू उत्तर न देकर पहले की ही तरह सोचते रहे।

जगत् ने पहले की तरह दिल्लगी के स्वर में कहा—इससे तो Hail Bamfylde Fuller—Lord of half Bengal—सुनने में अच्छा मालूम होता है। तो लिख दिया जाय न? बंगाल के साथ 'all.' 'call,' fall अनेक शब्दों की तुक मिलती है। हाँ-हाँ-ठीक हो गया—

Hail Bamfylde Fuller—Lord of half Bengal
How glad are Dinajshahi people all.
To—to—

इसके बाद क्या हो? बोलो न! सारी कविता अकेला मैं बना दूँ—और तुम मुफ़्त में सरकारी वकील हो जाओ क्यों?

सुबोध ने कहा—नहीं जी। कविता की ज़रूरत नहीं। मैं एक और ही बात सोच रहा हूँ।

"हाँ—ठीक हो गया।

To welcome thee to their most ancient town

The worthy representative of the Crown.

नहीं। 'worthy' निकाल कर 'glorious' रक्खो। पूरा सुनो—लिख लो।

Hail Bamfylde Fuller—Lord of half Bengal
How glad are Dinajshahi people all
To welcome thee to their most ancient town
The glorious representative of the Crown.

लिख लो—लिख लो। ऐसी भावमयी कविता जो भूल जायगी तो फिर न बन सकेगी।

सुबोध ने कहा—अच्छा, तो तुम मुझे पचास रुपया उधार दे सकते हो?

जगत् ने कृत्रिम रोष दिखाकर कहा—तुम तो ख़ासे अरसिक हो! बात हो रही है कविता की; आप कहते हैं, 'पचास रुपया उधार दे सकते हो।' जाओ, मैं कविता बनाने में तुम्हारी मदद न करूँगा।

सुबोध के ओठों पर नाम लेने को भी हँसी नहीं है। उनके माथे पर बल पड़ रहे हैं। उन्होंने कहा—नहीं जी, मैं हँसी नहीं करता। पचास रुपया दो। मैंने एक हिकमत सोची है।

"क्या बात है, मैं भी तो सुनूँ ?"

"बड़ा अच्छा दाँव है। मेरे मन में तुमने एक विचार पैदा कर दिया है। सरकार को ठग कर मैं एक सुभीता कर लूँगा। देखें ऊँट किस करवट बैठता है।"

जगत् ज़रा विस्मित होकर बोले—तो क्या करना चाहते हो ?

"फुलर साहब की अभ्यर्थना।"

"पागल हुए हो! तुम हो कौन? राजा नहीं, ज़मीदार नहीं, किसी बड़े ओहदे पर भी नहीं—फिर फुलर साहब तुम्हारी अभ्यर्थना क्यों क़बूल करने लगे ? मजिस्ट्रेट साहब क्या तुमको स्टेशन चलने के लिए निमन्त्रण देंगे ? तुम्हें दर्बार का कार्ड दिया जायगा ? 'प्राइवेट इंटरव्यू' का भी मौक़ा मिलेगा ?"

"यह न हो तो न सही। किन्तु मैं ऐसी राह लूँगा कि फुलर साहब की नज़र पड़ ही जायगी। बस इतने से ही काम बन जायगा।"

जगत् बाबू के मुँह पर से हँसी-दिल्लगी का भाव जाता रहा। उन्होंने कहा—कैसा पागलपन करते हो! देश भर का कोई आदमी तो फुलर की अभ्यर्थना नहीं करता। एक तुम्हीं तैयार होते हो ? तुम देशद्रोही की तरह अपने स्वार्थ के लिए देश के नेताओं के विरुद्ध काम करोगे ?

सुबोध ने कहा—जगत्, तुम तो बच्चों की सी बातें करते

हो। मैं जो चार साल से पड़ा पड़ा सड़ रहा हूँ। स्त्री के गहने बेंच कर गिरस्ती चलाता हूँ इसके लिए किसी ने मेरी बात भी पूछी ! देश के नेताओं ने किसी दिन मुझे बुलाकर क्या यह भी पूछा कि आज तुम्हारे घर में खाने को है या नहीं ? छोटे बच्चों के लिए मैं दूध मोल नहीं ले सकता—केवल गोदी की लड़की के लिए एक सेर दूध लेता हूँ—मेरी स्त्री सूजी पका कर और उसमें शक्कर मिला कर और बच्चों को खिलाती है—इसकी भी तुम्हें ख़बर है ? समय पर महीना न मिलने से कोई नौकरनी मेरे यहाँ अधिक दिन नहीं ठहरती—कुएँ से पानी खींचते खींचते और बासन मलते मलते मेरी स्त्री के हाथ कड़े पड़ गये। मैं यदि सुयोग पाकर अपनी उन्नति कर सकता हूँ, तो क्यों न करूँ ? आसाम-सरकार पर कुछ मेरी भक्ति उछली नहीं पड़ती है। सरकार हम लोगों का सर्वस्व लिये जाती है—मैं सरकार को भुलावा देकर यदि सरकारी वकील की जगह ले सकूँ, तो क्या हर्ज है ? कब तक इस तरह महाजनों का अपमान सहूँ—और फटे जूते, तथा फटे कपड़े पहनता रहूँ ?

जगत्प्रसन्न कुछ देर तक चुप रहे। अन्त में पूछा—तो क्या करना चाहते हो ?

"घर को अच्छी तरह सजाऊँगा।"

"इसी से तुम्हारा अभिप्राय सिद्ध हो जायगा ?"

"नहीं, इससे न होगा। यह तो उपक्रमणिका-मात्र है।

इसके बाद सब बन्दोबस्त अपने आप हो जायगा। ऐसी हालत हो जायगी कि फ़ुलर साहब की नज़र मुझ पर पड़ जायगी—बस, काम साध लूँगा।"

"काम भी सिद्ध होगा या केवल बदनामी ही हाथ लगेगी?"

"सिद्ध हो जायगा। किन्तु तुम्हारी मदद के बिना नहीं।"

"मुझे क्या करना होगा?"

"जब जैसा कहूँ तब वैसा ही करना। कम से कम इतना ज़रूर कर देना कि जब मैं घर को सजा लूँ तब तुम हाट-बाट में मेरी निन्दा कर देना।"

"यह काम कठिन नहीं है। यह कर दूँगा।"

"और ख़ूब सावधान रहना। किसी को यह मालूम न हो कि हमारे तुम्हारे बीच यही षड्यन्त्र हो रहा है।"

"इसके लिए भी कोई डर की बात नहीं।"

"बस तो ठीक है। किन्तु रुपया तो आज ही चाहिए।"

"अच्छा, मैं घर जाकर मुहर्रिर के हाथ भेज देता हूँ।" कह कर जगत्प्रसन्न उठे।

सुबोध उनके साथ साथ बाहर आये। जाते समय जगत् ने कहा—देखो, षड्यन्त्र में कुछ नशा होता है। मालूम होता है मानो मुझको नशा चढ़ आया है। यह खेल बुरा नहीं। हार होगी या जीत—यह संशय की बात है।

सुबोध बोले—ईश्वर की इच्छा से यदि आसाम-सरकार को इसी तरह की उन्माद व्याधि बनी रही तो हमारा षड्यन्त्र सफल हो जायगा। आगे मेरा भाग्य है।

"और मेरे हाथ यश" कह कर मुसकुराते हुए जगत् बाबू ने सुबोध बाबू से हाथ मिलाने के लिए अपना हाथ बढ़ाया।

तीसरा परिच्छेद

आज सोमवार है। कल सवेरे लाट साहब आयेंगे। पर शहर के लोग ख़ुशी मनाने का कुछ भी बन्दोबस्त नहीं कर रहे हैं। वंग-भंग के कारण सबके हृदय में शोक और अपमान जाग रहा है। नये लाट साहब को सभी लोग द्वेष-दृष्टि से देख रहे हैं। म्युनिसिपेलटी के ग़ैर-सरकारी सभ्यों ने अभिनन्दन किये जाने का विरोध किया है। डिस्ट्रिक्ट-बोर्ड की सभा में भी मजिस्ट्रेट साहब विशेष चेष्टा करने पर भी लाट साहब का अभिनन्दन कराने में कृतकार्य न हो सके। वहाँ अभिनन्दनपत्र देने का प्रस्ताव पेश होने पर गवर्नमेंट के पक्ष का वोट गिर गया है। स्थानीय ज़मींदारों में से, जो सब साधारण कामों में आगे बढ़ते थे, अधिकांश लोग बीमार होकर हवा-पानी बदलने के लिए अन्यत्र चले गये हैं। अभी, हाल मे ही, एक मुसलमान डिप्टी मजिस्ट्रेट और सब-रजिस्ट्रार की

विशेष चेष्टा से "अंजुमन-इसलामिया" (सभा) सङ्गठित हुई है। बीस बाईस मुसलमान इसके मेम्बर हैं। इस अंजुमन की ओर से दरबार में लाट साहब को अभिनन्दन-पत्र दिया जायगा। खेद की बात यह है कि अंजुमन के ग़ैर-सरकारी मेम्बरों में से कोई भी अँगरेज़ी भाषा अच्छी तरह नहीं जानता। दरबार में अभिनन्दन-पत्र कौन पढ़े? तार-द्वारा इस मुसीबत की ख़बर पाकर शान्तिनगर के नवाब बहादुर ने अँगरेज़ी जाननेवाले एक मुसाहिब को भेज दिया है।

सोमवार को सवेरे उठकर नगरवासियों ने एक अजीब बात देखी। देखा कि सुबोध बाबू का घर सजाने में दस बारह आदमी लगे हुए हैं। झाऊ और देवदारु की ढेर की ढेर पत्तियाँ आई हैं। हाल के कटे हुए कई केले के पेड़ भी रक्खे हैं। देखते ही देखते सुबोध बाबू के फाटक के ऊपर बाँस की मेहराब तैयार हो गई और देवदारु की पत्तियों से सजा दिया गया। दोनों ओर केले के पेड़ खड़े किये गये। प्रत्येक पेड़ के नीचे पूर्णघट रक्खा गया जो कि पञ्च-पल्लवों से शोभित था। घर की खिड़कियों के चारों ओर गेंदे के फूलों की मालायें लटका दी गईं। बाहर की दीवार में जगह जगह झाऊ के पत्तों से वृत्त बना कर केन्द्र में रङ्ग-बिरङ्गे फूलों के गुच्छे रख दिये गये। फूल-पत्तियों को ताज़ा रखने के लिए एक व्यक्ति, क्रम क्रम से, उनमें पानी छिड़कने लगा।

यह सब करते कराते एक बज गया। इसके बाद भोजन

करके सुबोध बाबू एक दरख़्वास्त लेकर पुलिस-दफ़्तर की ओर चले। दरख़्वास्त में प्रार्थना की गई थी कि छोटे लाट साहब बहादुर के शुभागमन के उपलक्ष्य में कल शाम को उनको अपने घर के सामने आतिशबाज़ी जलाने की आज्ञा दी जाय। कहना नहीं होगा कि यह दरख़्वास्त आनन-फ़ानन मंज़ूर कर ली गई।

सुबोध बाबू ने घर लौट कर, कपड़े बदले और घर को सजाने की ओर फिर ध्यान दिया। एक लम्बा सा तख़्ता लाकर उन्होंने उस पर सफ़ेद काग़ज़ मढ़ा, अब वे लाल काग़ज़ के कटे अक्षरों से लाट साहब के प्रति स्वागतसूचक शब्द तैयार करने लगे। इसी समय जातीय विद्यालय के कुछ युवकों और बालकों ने उनसे भेंट की। एक युवक ने नम्रतापूर्वक नमस्कार करके उनसे कहा—आप यह क्या करते हैं महाशय?

सुबोध ने बहुत भले आदमी की तरह उत्तर दिया—कल लाट साहब आ रहे हैं—इसी से ज़रा घर को सजाता हूँ।

"और तो कोई भी घर नहीं सजाता—आपही क्यों ऐसा कर रहे हैं?"

"क्यों, इसमें क्या हानि है?"

"बंग-भंग के कारण इस समय सभी शोक मना रहे हैं—यह क्या ख़ुशी मनाने का वक्त है?"

"शोक मना रहे हैं?—क्यों, शोक किस बात का? सभी को तो हँसते-खेलते-घूमते देखता हूँ।"

"तो क्या बंग-भंग को आप आनन्द की बात समझते हैं?"

सुबोधचन्द्र ज़रा उलझन में पड़ गये। कार की पूर्णिमा को जो सभा हुई थी, उसमें उन्होंने उच्चकण्ठ से कहा था—भाई बंगालियो! माता के अंग में यह तलवार की चोट है—यह रुधिरपात है—जब तक इसका प्रतिविधान न हो तब तक हम लोग किसी प्रकार के विलास-विभ्रम में न फँसें—इत्यादि।

सुबोधचन्द्र चुप रहे। बालकों ने बहुत बिनती की। एक ने कहा—आपके पाँव पड़ता हूँ—यह सब अलग कीजिए।

सुबोधचन्द्र ने कहा—इतना खर्च करके जो यह किया-कराया है सो सब नष्ट हो जायगा।

लड़कों ने कहा—बतलाइए, इसमें आपका क्या खर्च हुआ है। हम लोग स्कूल से चन्दा कर, अपने अपने मिठाई खाने के पैसे बचा कर, आपको हर्जाना देंगे। आज्ञा दीजिए, हम लोग इस सजावट को अलग कर दें।

इससे सुबोधचन्द्र के हृदय में भक्त से चोट लगी, किन्तु एक मुहूर्त के लिए ही। उन्होंने ज़रा गुस्सा दिखाते हुए कहा—जाओ जाओ, तंग मत करो। तुम लोगों ने

सब कामों में हाथ डालना सीख लिया है। जाओ, लिखो-पढ़ो।

अब लड़के हताश होकर लौट गये। सुबोध ने सोचा कि ये लड़के बड़े उद्दण्ड हैं, कहीं रात में आकर सब किया-कराया चौपट न कर दें। इससे वे तुरन्त ही कपड़े पहन कर पुलिस-अफ़सर के बँगले की ओर लपके।

वहाँ पहुँचने पर सुना कि साहब बँगले में नहीं हैं। मजिस्ट्रेट के बँगले पर गये हैं। इससे सुबोध बाबू ने मजिस्ट्रेट के बँगले पर जाकर पुलिस साहब के पास अपना कार्ड भेज दिया।

शीघ्र ही वे भीतर बुलाये गये। मजिस्ट्रेट साहब और पुलिस के साहब एक ही जगह बैठे थे। सुबोध बाबू ने दोनों को सलाम किया।

पुलिस के साहब ने पूछा—क्यों बाबू, क्या चाहिए ?

"हुज़ूर, लाट साहब के कल आने की ख़ुशी में मैंने अपने घर को थोड़ा-बहुत सजाया है। अब सुना है कि स्कूल के लड़के रात में आकर सब बिगाड़ देंगे।"

पुलिस के साहब ने पूछा—तो क्या आज आपने ही आतशबाज़ी जलाने की आज्ञा माँगी थी ?

"जी हाँ।"

मजिस्ट्रेट साहब से पुलिस के साहब ने कहा—"मैं आपसे इन्हीं की बात कह रहा था।" सुबोध से कहा—

अच्छा, इसके लिए आप कोई चिन्ता न कीजिए। आपके घर के सामने सारी रात पहरा देने के लिए मैं चार काँस्टेबलों को हुक्म देता हूँ।

मजिस्ट्रेट साहब ने मुसकुराते हुए पूछा—क्या आप वकील हैं?

"जी हुज़ूर।"

"अच्छा। आपकी राजभक्ति देखकर मैं बहुत ख़ुश हूँ। आप कल दरबार में आना चाहते हैं?"

सुबोध ने बड़ी नम्रता से कहा—हुज़ूर, मेरे लिए यह तो बड़े सौभाग्य की बात होगी।

"आलराइट। मैं आपको निमन्त्रण-कार्ड देता हूँ। आपका नाम?"

सुबोध ने नाम बतलाया। मजिस्ट्रेट ने एक कार्ड उठाया और उस पर सुबोध का नाम लिख कर उनको दे दिया।

सुबोध बाबू ने झुक कर सलाम किया और कार्ड ले बड़े आनन्द से घर का रास्ता लिया।

\+ \+ \+ \+

दूसरे दिन यथासमय लाट साहब का आगमन हुआ। सुबोध बाबू कचहरी की पोशाक पहन कर अपने घर के दरवाज़े पर खड़े हुए। लाट साहब की फिटन-गाड़ी क्रम से समीप पहुँची। कमिश्नर साहब और मजिस्ट्रेट साहब उसी गाड़ी पर थे। फ़ुलर साहब को देखते ही सुबोध बाबू ने

झुक कर सलाम किया। लाट साहब ने मुसकुराते हुए हाथ उठा कर उनके सलाम का बदला दिया; केले के पेड़ और फूल-पत्तियों की सजावट देखी। फाटक के ऊपर सफ़ेद तख़्ते पर लिखा था—

Long Live Fuller

Welcome to Dinagshahi

देखकर लाट साहब मुसकुराये। धीरे धीरे फ़िटन नज़रों से ओझल हो गई।

× × × ×

घुड़दौड़ के मैदान में शामियाना खड़ा करके दरबार का इन्तज़ाम किया गया है। सवेरे दस बजे दरबार है। नौ बजने पर, गाड़ी मँगाकर, सुबोध बाबू दरबार में पहुँचे। पैसा बचाने के लिए गाड़ी को विदा कर दिया। पैदल ही घर लौटने का विचार है।

दरबार में इने-गिने लोग हैं। राजा और ज़मींदारों में से सिर्फ़ दो ही तीन जन उपस्थित हैं। बाक़ी तो डिप्टी, मुंसिफ़ आदि सभी सरकारी मुलाज़िम हैं। स्थान भरने के लिए कचहरी के अमलों को भी निमन्त्रण-कार्ड दिया गया है। इससे ग़रीब अमले बड़े संकट में पड़ गये हैं। उनकी तनख़्वाह बहुत थोड़ी है। किसी प्रकार महीने के तीस दिन बिताते हैं। कचहरी जाने के लिए उनके पास कुल एक सूट है। वह दरबार के योग्य नहीं। कुछ लोगों ने चोग़ा-

चपकन माँग-जाँच कर दरबार में जाने का बन्दोबस्त किया है। जो अच्छी पोशाक का बन्दोबस्त नहीं कर सके वे वही फटा चपकन और मैली पगड़ी बाँधकर आये हैं। न आते तो बर्खास्तगी का डर था। डिप्टी, मुंसिफ़, अमला आदि सरकारी नौकरों के सिवा,—हिन्दू या मुसलमान—ग़ैर सरकारी लोगों की संख्या बहुत ही कम है। अंजुमन-ई-इसलामिया के कोई पन्द्रह मेम्बर उपस्थित हैं।

यथासमय शुभ्रकेश प्रसन्नवदन फुलर साहब दरबार में पधारे। हिन्दू चुपचाप खड़े होगये। मुसलमानों ने ज़ोर से "मरहबा" कह कर आनन्द प्रकट किया। अंजुमन-ई-इसलामिया का अभिनन्दन-पत्र पढ़ा गया। फुलर साहब ने अँगरेज़ी और उर्दू में वक्तृता दी। इसके बाद "इंट्रोडक्शन" की पारी आई।

मजिस्ट्रेट ने एक एक कर बड़े बड़े लोगों को लाट साहब का परिचय कराया। सुबोध बाबू भी साहस करके मजिस्ट्रेट साहब के पास जा खड़े हुए। मजिस्ट्रेट ने उनका भी लाट साहब से परिचय करा दिया। फुलर साहब ने सुबोध बाबू से हाथ मिला कर कहा—तुम्हीं ने रास्ते पर आते वक्त मुझको सलाम किया था?

"जी हुज़ूर।"

"तुम्हारा घर अच्छा सजा हुआ था। मैं तुम्हारी बड़ी प्रशंसा करता हूँ। तुम वकील हो?"

"'जी हाँ, हुज़ूर।"

"'वकील बड़े राजद्रोही होते हैं—मैं उनसे बहुत नाराज़ हूँ। खुशी की बात है कि तुम्हें सुरेन्द्र बाबू के इशारे पर बन्दर की तरह नाचना पसन्द नहीं।"

"लोगों के बहकाने से मैं अपने कर्तव्य को नहीं भूलता।"

"अच्छा। तुम शाम के वक़्त सर्किट-हाउस में मुझसे प्राइवेट इंटरव्यू करने आना।" कह कर फ़ुलर साहब ने सुबोध को बिदा किया। फिर अन्यान्य लोगों को लाट साहब का परिचय दिया गया।

यथासमय दरबार बरखास्त हुआ। सुबोध बाबू जब बाहर आरहे थे, तब मजिस्ट्रेट ने जल्दी जल्दी आकर जेब से 'प्राइवेट इंटरव्यू' का, बिना नाम का, कार्ड सुबोध बाबू को दिया और कहा—तुम्हारी क़िस्मत अच्छी है। His Honor ने स्वयं तुमको बुलाया है। समय पर पहुँचना।

सुबोध बाबू 'जो हुकुम' कह कर चलते हुए।

अचानक यह क्या हो गया। परसों जगत्प्रसन्न ने मज़ाक़ मे कहा था कि 'दरबार का कार्ड मिलेगा?' 'प्राइवेट इंटरव्यू करने भी बुलाये जाओगे?' सो सभी तो हुआ। अब क्या सरकारी वकील की जगह ही न मिलेगी? आश्चर्य है! जो स्वप्न से भी बाहर था वही हुआ। तो क्या अच्छे दिन आ गये? इतने दिनों के बाद क्या ग्रहदशा बदली?

इस प्रकार सोचते विचारते हुए सुबोध बाबू धीरे धीरे घर की ओर चले।

घर के समीप पहुँच गये। बाहर ठहर कर वे फूल-पत्तियों की सजावट देखने लगे। लाट साहब ने सजावट की बड़ी तारीफ़ की है। सुबोध बाबू टकटकी लगा कर अपनी करामात देखने लगे। इसी समय सहसा एक अचेती विपत्ति आई।

वे जिस घर के पास ठहर कर मुग्ध नेत्रों से अपने घर की शोभा देख रहे थे वह एक वकील का घर था। उसी घर के कुछ नटखट बालकों ने, छत के ऊपर से, एक तसला भर गोबर और कीचड़ मिला पानी सुबोध बाबू का सिर ताक कर डाल दिया।

सुबोध बाबू ने अकचका ऊपर नज़र डाली। कोई मज़ाक़ के स्वर से चिल्ला उठा—Long live Subodh Babu—

गोबर और कीचड़ मिला पानी उनकी पगड़ी पर से बह कर चपकन पर गिरा और चपकन को तर करता हुआ पत-लून से बह कर जूतों में भर गया। सुबोध बाबू जूते पचपच करते करते जल्दी जल्दी अपने घर चले गये।

चौथा परिच्छेद

वहाँ एक पोशाक थी, सो ख़राब हो गई। अब क्या पहन कर सुबोध बाबू प्राइवेट इंटरव्यू करने जायँ।

स्नान-भोजन कर वे डिप्टी अनाथ बाबू के घर गये। उनको अपनी सब हालत बता कर उनसे एक सूट मँगनी माँगा।

डिप्टी साहब ने कहा—अच्छा जनाब, पोशाक नहीं है तो ले जाइए। किन्तु आपको ऐसी क्या पड़ी है? हम लोग गुलामी करते हैं—इससे हमें सभी कुछ करना पड़ता है। परन्तु आपने किसलिए घर सजाया? दरबार में ही क्यों गये, और अब प्राइवेट इंटरव्यू करने का इतना आग्रह क्यों है?

सुबोध बाबू का चेहरा फीका पड़ गया। कहने लगे—साहब ने ख़ुद कहा है। न जाऊँगा तो नाराज़ न होंगे?

डिप्टी साहब ने अकस्मात् मन में सोचा कि इस आदमी से ये बातें कहना ठीक नहीं। यदि यह मजिस्ट्रेट के पास जाकर कह दे तो मेरी नौकरी रहना मुश्किल हो जाय। इसलिए अपने को सम्हाल कर उन्होंने ने कहा—जी नहीं—मैं यह नहीं कहता। जाइए ज़रूर! साहब ने जब ख़ुद ही बुलाया है तब आपको ज़रूर ही जाना चाहिए। अच्छा तो पोशाक ला दूँ।

प्राइवेट इंटरव्यू हो गया। आतिशबाज़ी भी जला दी गई। सिर पर शाल लपेट कर सुबोधचन्द्र रात को नौ बजे जगत् बाबू के घर पहुँचे।

उनको देख कर जगत् बाबू ने कहा—शाबाश-शाबाश। तुमने जो कहा था वही हुआ। हाँ तो लाट साहब से सरकारी वकील की जगह के सम्बन्ध में चर्चा छेड़ी थी ?

सुबोध बोले—वाह! भला यह भी कहने की बात है। ऐसा करने से वे सन्देह न करते। बहुत पिलैया-दण्डवत् करना भी तो धूर्तता का लक्षण है। उसके लिए अभी देरी है। अभी तो बहुत कुछ करना धरना है।

अब क्या करोगे ?

"तार का फ़ार्म है ?"

"है।"

"दो चार निकालो।"

जगत् बाबू ने तार के फ़ार्म निकाले। सुबोध ने कहा—'बंगाली' 'अमृतबाज़ार-पत्रिका' और 'बन्दे मातरम्' को तार भेजना है।

"किस बात का ?"

"मेरी कीर्ति का।"

"वह तो हो गई। 'बंगाली' के संवाददाता सुकुमार बाबू ने तुम्हारा नाम भी लिख दिया है; और लिखा है कि "वकीलों में एक तुम्हीं ने घर सजाया था। और एक तुम्हीं दरबार में गये थे।"

"और उस गोबर-मिले पानी की बात ?"

"वह तो शायद नहीं लिखी।"

"असल बात तो वही थी। यह देखो, मैं तार का मसवदा लिख लाया हूँ। सुकुमार बाबू के तार में मुझे खूब गालियाँ नहीं दी गई हैं। इसकी बहुत ज़रूरत है। गोबर-मिले पानी का और Welcome to Pandemonium का विशेष रूप से उल्लेख करना होगा। वह तो बड़ा dramatic. (आनन्द-दायी) हुआ है।"

जगत् बाबू ने तार की नकल कर उसी दम तार रवाना कर दिये।

दूसरे दिन सवेरे सुबोध बाबू ने बिस्तरे से उठ कर बाहर आते ही कोतवाली के दो दारोगाओं को दरवाज़े पर देखा। एक दारोग़ा ने कहा—वकील साहब, सुना है कि कल जिस समय आप दरबार से लौटे थे उस समय किसी ने छत पर से आप पर गोबर-मिला पानी फेंका था। क्या यह सच है ?

"जी हाँ, सच है।"

"यह बात साहब के कानों तक पहुँची है। उन्होंने हमको हुक्म दिया है कि यदि आप मुक़दमा चलाना चाहते हों तो हम लोग गवाह और सुबूत जुटा कर आपकी मदद करें। खेद की बात है कि यह मुक़दमा पुलिस की दस्तन्दाज़ी का नहीं है। नहीं तो हम लोग उस घर के लड़कों-बच्चों तक को

गिरफ़ार करके कल ही हिरासत में बन्द कर देते। आप आज नालिश कर दें।"

सुबोध बाबू—मैंने तो किसी को देखा नहीं, किसकी नालिश करूँ ?

"इस घर में जो लड़के-बच्चे हैं, उनके नाम हम पूछ कर लिख लावेंगे। उनके बाप, वकील बाबू ने ज़रूर ही उनको Abet किया है। इसलिए उनका नाम भी शामिल कर लीजिए।"

सुबोध बाबू ने सोच-विचार करके कहा—साहब से आप मेरा सलाम कहिए। मैंने किसी को गँदला पानी डालते देखा नहीं है, किसी को शिनाख़्त भी न कर सकूँगा। ऐसी दशा में नालिश करने से कोई फ़ायदा न होगा।

दारोग़ा उदास होकर चल दिये।

सुबोध बाबू तम्बाकू पीने लगे। सोचा—जिन लड़कों ने मुझ पर गँदला पानी फेंका है, उन्होंने मेरा अपार उपकार किया है। मालूम होता है, ख़बर अब तक कलकत्ते पहुँच गई होगी। अब ऐसा गोल-माल होगा, जिससे मेरा काम सिद्ध हो जायगा।

सचमुच वैसा ही हुआ। तीन ही दिन में देश भर में धूम मच गई। अँगरेज़ी अख़बारों से इस ख़बर की नक़ल कर बँगला-पत्रों के सम्पादकों ने बड़े बड़े लम्बे चौड़े लेख लिख मारे जिनमें गालियों की भरमार थी। किसी ने लिखा—"ऐसे देश-

द्रोही को तुरन्त समाजच्युत कर देना चाहिए।" एक रसिक लेखक ने "सुबोध बाबू की पापमुक्ति" शीर्षक कविता में लिखा है कि गोबर-मिला हुआ पानी बहुत पवित्र पदार्थ है। लाट साहब के दरबार में फुलर साहब से हाथ मिलाने के कारण सुबोध बाबू को जो पाप लग गया था वह, गोबर-मिले जल से, धुल गया। इस घटना के कारण अँगरेज़ों के "इँग्लिशमैन" आदि पत्रों में भी सुबोध बाबू का नाम छप गया। अँगरेज़-सम्पादकों ने लिखा—"पूर्व-बंग में सचमुच अभी बहुत से राजभक्त शिक्षित लोग वर्तमान हैं; केवल बदमाशों की लाञ्छना के डर से वे अपनी राजभक्ति प्रकाशित नहीं कर सकते।" सुबोध बाबू के सत्साहस की प्रशंसा भी की गई। इधर दीनाजशाही में सुबोध बाबू बुरी तरह धिक्कारे गये। बार-लाइब्रेरी के भीतर पैर रखते ही दूसरे वकील उन्हें ताने देने लगे। सुबोध की गैरमौजूदगी में एक वकील ने जगत् बाबू से कहा—क्योंजी, तुम्हारे मित्र का मतलब क्या है? दारोगा होना चाहता है या डिप्टी, या और ही कुछ?

जगत् बाबू ने नाराज़ होकर कहा—अजी कुछ न पूछिए, मैं तो उसका मुँह भी नहीं देखना चाहता।

"तुमसे तो उसका बड़ा मेल-जोल है?"

"अजी ऐसे मनुष्य से मेल-जोल होना स्वीकार करने में अपमान मालूम होता है।"

"तुमसे कुछ बातचीत हुई है? आखिर उसने ऐसा किया क्यों? पागल तो नहीं हो गया है?"

जगत् बाबू ने मुँह फुला कर कहा—मैंने उसी दिन से उससे बोलना बन्द कर दिया है।

पाँचवाँ परिच्छेद

लाट साहब को गये एक हफ्ता हो गया। अब बार के प्रधान वकील बाबू किशोरीमोहन के पुत्र का विवाह होने को है। बूढ़े किशोरी बाबू बड़े क्षमाशील, और निष्कपट हैं। सुबोध को और तो सभी छोड़ते हैं, एक किशोरी बाबू ही सुबोध का पक्ष लेकर कभी कभी एक आध बात कह देते हैं। वे कहते हैं—"सुबोध ने जो काम किया है वह निस्सन्देह निन्दनीय है। लेकिन लड़का है, बिना समझे-बूझे कर बैठा है। इसलिए उस पर ऐसा जुल्म करना ठीक नहीं। बेचारे को अख़बारों ने जैसी कुछ गालियाँ दी हैं, उनको सुन कर और कोई होता तो पागल हो जाता। बहुत भोग चुका, अब न सताओ। अब उस बात को जाने भी दो।" फलतः दो चार आदमियों की सलाह पर ध्यान न देकर उन्होंने सुबोध को भी विवाह का निमन्त्रण दिया।

सन्ध्या का समय है। दफ़्तर के कमरे में बैठे सुबोधचन्द्र

हुक्का पी रहे हैं। सिर पर शाल लपेटे हुए जगत् बाबू ने आकर दर्शन दिये।

"आओ—आओ। अब तो दिखाई ही नहीं पड़ते। दिल की दो बातें कहने को मौक़ा नहीं मिलता।"

जगत् बाबू—भाई, तुमने बात यहाँ तक बढ़ा दी है कि तुम्हारे यहाँ आने में यह डर लगता है कि कहीं लोग बाग देख न लें। किन्तु असली बात का तो कोई लक्षण नहीं दिखाई देता। क्या केवल गालियाँ ही बदी थीं?

"असली काम ज़रूर होगा। पहले अच्छी तरह बुनियाद तो डाल लेने दो। सब्र का फल मीठा होता है।"

"अख़बार में देखा है कि फ़रीदसिंह के सरकारी वकील की जगह ख़ाली होनेवाली है। एक दरख़्वास्त दे दो न।"

"नहीं भाई, इस खण्डप्रलय के बाद बार में अब सुभीता न होगा। मान लो, सरकारी वकील हो गया, किन्तु फिर बार-लाइब्रेरी में मुझसे कोई बात तक न करेगा। इससे क्या सुख होगा?"

"तो क्या इरादा है।"

"यदि डिप्टी की जगह मिल जाती तो अच्छा होता। महीना बीतते ही बँधी तनख़्वाह मिलती। मेरी तो हाकिम के ओहदे पर नज़र है।"

"तो भाई अर्ज़ी-पुर्ज़ा दो न।"

"नहीं जी, अभी नहीं। अभी और बुनियाद डालनी होगी।"

"अब और क्या बुनियाद डालोगे ?"

"समाज से च्युत हो लेने दो। तुम लोग मुझे समाजच्युत कर दो तो बस डिप्टी की जगह मिली ही समझो।"

"एक मेरे ही च्युत करने से तो तुम च्युत हो नहीं सकते।"

"किशोरी बाबू ने लड़के के विवाह का निमन्त्रण दिया है।"

"तो जाओगे ?"

"मैं कब चूकनेवाला हूँ।"

"तुम्हारा निमन्त्रण होने देने में लोगों ने पहले कुछ ऐतराज़ किया था। किन्तु किशोरी बाबू ने उनको समझा-बुझा कर शान्त कर दिया।"

"यह तो मुश्किल हुई। तुम एक काम करना। सब लोग जब भोजन करने बैठें, तब तुम गोलमाल करने लगना।"

"फिर।"

"फिर मैं उठ कर चला आऊँगा। इसके बाद अख़बारों में लम्बे लम्बे तार छपवाऊँगा।"

जगत् बाबू—नहीं जी, ऐसे काम की ज़रूरत नहीं। काम भी मुश्किल है। मुझ से न होगा।

"करना ही होगा। यही मुख्य काम है—इसी पर सारा दार-मदार है। ऐसा होने से ही गवर्नमेन्ट के यहाँ मेरी क़दर होगी।"

बहुत कहा-सुनी के बाद जगत् बाबू राज़ी होगये। चाय का एक प्याला ख़ाली करके वे विदा हुए।

दूसरे दिन न्यौते में पहुँचने पर सलाह के अनुसार काम हुआ। जगत् ने ठीक समय पर कहा—महाशय, आप लोग मुझे क्षमा करें। मैं इस समय यहाँ पर भोजन न कर सकूँगा। सुबोध बाबू जैसे देशद्रोही के साथ बैठ कर भोजन करने से मेरी जाति नष्ट हो जायगी।

इस पर और भी कई लोग—"यहाँ हम भी नहीं खा सकते।" कह कर उठ खड़े हुए।

सुबोध बाबू ने उठ कर कहा—"महाशय, एक आदमी के लिए आप इतने आदमी बिना भोजन किये क्यों उठते हैं? लीजिए, मैं ही उठा जाता हूँ।" यह कह कर वे हवा हो गये।

इस गोलमाल से किशोरी बाबू बहुत दुखी हुए। वे झट-पट बाहर आ गये और सुबोध का हाथ पकड़ कर कहने लगे—भाई, जाओ नहीं। आओ तुमको अलहदा बिठा कर खिला दूँ।

सुबोध ने हाथ छुड़ा लिया और यह कह कर चल दिये कि रहने दीजिए, इतना अपमान सहा नहीं जाता।

घर आकर, अखबारों को लम्बे लम्बे तार दूसरे नाम से भेज दिये। अखबारों में फिर धूम मच गई। बँगला-भाषा के पत्र-सम्पादकों ने लिखा—इस प्रकार का सामाजिक शासन कर दीनाजशाही ने जो दृष्टान्त दिखाया है वह देशवासियों के अनुकरण-योग्य है।

छठा परिच्छेद

एक सप्ताह और बीत गया। दफ़्र के कमरे मे बैठे सुबोध बाबू जगत् बाबू से बातें कर रहे हैं। सामने आज का इंग्लिश-मैन खुला रक्खा है। उसमें लिखा है—हमें विश्वस्त सूत्र से मालूम हुआ है कि दीनाजशाही के वकील सुबोधचन्द्र हालदार को आसाम की गवर्नमेन्ट ने पुलिस के डिप्टी सुपरेंटेंडेंट का पद देने का संकल्प किया है। पुलिस-विभाग में इस प्रकार के क़ानूनदाँ का पहुँचना वाञ्छनीय है।

सुबोध ने कहा—अरे! यह तो उलझन में डाल दिया। इतना परिश्रम करने पर—इतनी गालियाँ खाने पर—अन्त में पुलिस की नौकरी मिली!

जगत् बाबू—गवर्नमेंट ने सोच-समझ कर ही यह नौकरी दी है। ढाई सौ रुपये से वेतन आरंभ होगा। डिप्टी की जगह पर तो दो सौ रुपये ही मिलते।

"माना कि वेतन अच्छा है। किन्तु आज-कल के ज़माने के मुताबिक मुझे यह ओहदा घड़ी भर के लिए भी पसन्द नहीं। देखो, नक़ली देशद्रोही बनने से एक महीने से प्राण होंठों पर आ गये हैं। पुलिस की नौकरी करूँगा तो असली देशद्रोही बनना होगा। 'कहाँ किसने विलायती नमक फेंक दिया है, जाओ उसे गिरफ़ार करो। कहाँ कौन लड़का वन्दे मातरम् कहता है—उसके सिर पर रेगूलेशन की लाठी

मारो'। भैया, यह रोग मेरे बूते का नहीं। इससे तो बार में मेरा उपवास करना ही भला है।"

जगत् बाबू ने कहा—मैं समझता हूँ कि यदि गवर्नमेंट को यह मालूम होता कि तुम डिप्टी की जगह पाने से सन्तुष्ट होगे तो वह तुम्हें डिप्टी की ही जगह देती। इसलिए गवर्न-मेंट के यहाँ इसकी सूचना दे देनी चाहिए। जाओ, न हो तो एक बार शिलाँग में सेक्रेटरी से मुलाक़ात कर आओ।

"अब तक सरकारी चिट्ठी-पत्री तो कुछ मिली नहीं है—केवल इंग्लिशमैन का यह पैरा देख कर ही दौड़ पड़ूँ ?"

"इंग्लिशमैन का यह पैरा ग्राफ़ और सरकारी चिट्ठी एक ही चीज़ है।"

अन्त में यही तय हुआ। उसी दिन, रात की गाड़ी से, सुबोध बाबू शिलाँग को रवाना हो गये।

दूसरे हफ़्ते के आसाम-गज़ट में देखा कि सुबोध बाबू आठवें ग्रेड के डिप्टी मजिस्ट्रेट मुकर्रर हुए हैं।

सुबोध बाबू आज-कल ढाके में डिप्टी मजिस्ट्रेट हैं। सौभाग्य से उनको अब तक स्वदेशी का कोई मुक़दमा फ़ैसल नहीं करना पड़ा। अब वे गुड़ डाल कर चाय नहीं पीते। काशीपुर की बढ़िया चीनी इस्तेमाल करते हैं। अब उनके यहाँ आठ आने सेर की तम्बाकू आती है।

नक़द सौदा

पहला परिच्छेद

शाम हो गई है। सिराजपुर स्टेशन के तारघर में बैठे डाक्टर हरगोविन्द चट्टोपाध्याय तारबाबू से कह रहे थे—तो कुछ डर नहीं है। मेरे साथ एक आदमी कर दीजिए। एक पाउडर और मिकसचर अभी भेजता हूँ। दो दो घंटे के बाद खिलाइएगा।

तारबाबू कह रहे थे—आपकी बातों से बहुत ढाढ़स हो गया है। यही एक बच्चा है। मेरी स्त्री तो रोते रोते बावली हो रही है। हम लोग बहुत डर गये थे।

यह कह कर तारबाबू ने दो रुपये फ़ीस के और एक अठन्नी गाड़ी-भाड़े की डाक्टर बाबू के हाथ देनी चाही।

डाक्टर बाबू ने कहा—यह क्या ? नहीं-नहीं—रहने दीजिए, रहने दीजिए।

तारबाबू ने कहा—यह तो बड़ा अन्याय होगा।

"जी नहीं। कुछ भी अन्याय नहीं है। मैं आपके बच्चे

को आराम किये देता हूँ। आराम हो जाने पर यदि आपका जी चाहे तो एक दिन—अमावास्या या पूर्णिमा को—मेरा निमन्त्रण कर ब्राह्मण-भोजन करा दीजिएगा—और क्या ?" यह कह कर डाक्टर बाबू ठठाकर हँसने लगे। ग़रीबों से ये कभी फ़ीस नहीं लेते थे।

इसी समय बाहर प्लेटफ़ार्म पर बहुत से आदमियों की 'वन्दे मातरम्' की आवाज़ सुनाई दी। डाक्टर बाबू ने पूछा—यह क्या है ?

"कलकत्ते से एक स्वदेशी-प्रचारक आये थे। मालूम होता है, लोग उन्हीं को गाड़ी पर बिठाने आये हैं।"

दोनों ही बाहर निकले। प्रचारक महाशय विख्यात "वीरभारत" समाचारपत्र के सम्पादक श्रीयुत विनयकृष्ण सेन थे।

डाक्टर बाबू सरकारी नौकर होने पर भी दूसरे सरकारी नौकरों की तरह भीतर ही भीतर पूरे स्वदेशी हैं। लोग काना-फूसी किया करते हैं कि ये रात को देशी दूकान में जाकर कपड़े आदि ख़रीद लाते हैं। विनय बाबू के साथ बात करने की साध को डाक्टर साहब न रोक सके। दो चार बातें हुई थीं कि गड़गड़ाती हुई रेलगाड़ी आ पहुँची।

वकील, मुख़्तार और छात्रों से घिरे हुए प्रचारक महाशय गाड़ी की ओर बढ़े। उनके पास दूसरे दर्जे का एक रिटर्न टिकट था। एक कमरा खोलकर वे जैसे ही उसमें घुसने लगे

वैसे ही एक साहब ने कहा—यू–यह काले आदमी की गाड़ी नहीं है।

क्यों साहब, तो क्या मेरा रुपया भी काला है? मेरा भी टिकट दूसरे दर्जे का है। यह कह कर और दरवाज़ा खोल कर प्रचारक महाशय भीतर घुस गये।

एक तो हुक्म-उदूली, दूसरे ज़बाँ-दराज़ी करना—यह "बादशाह के दोस्त" को सहन न हुआ। उसने उठकर धोती-कमीज़ और रेशमी चादर धारण करनेवाले मूर्तिमान् राजद्रोह को धक्का देकर प्लेटफ़ार्म पर ढकेल दिया। विनय बाबू "वीर-भारत" पत्र के सम्पादक होने पर भी बहुत ही दुबले-पतले थे। अपना सारा स्वास्थ्य-बल कलकत्ता-विश्वविद्यालय को अर्पण करके उन्होंने प्रसाद स्वरूप कई एक कागज़ प्राप्त किये थे। और दूसरी जगह से सोने का चश्मा मिला था जिसके लिए अलग दाम देने पड़े थे। प्लेटफ़ार्म पर आ गिरने से उनको तो विशेष चोट नहीं आई, पर चश्मा चकनाचूर हो गया।

यह देख कर उनके साथी वन्दे मातरम् की गर्जना करने लगे। दो-तीन व्यक्ति साहब बहादुर को बाहर खींचकर बेतरह मारने लगे। घूँसा, तमाचा और लाठी सभी का मज़ा साहब ने चक्खा। गोलमाल सुन कर गार्ड साहब उसी ओर जा रहे थे, किन्तु मामला देखते ही हाँफते हुए दौड़ कर, (भाग कर नहीं)—ब्रेकवान पर चढ़ गये। पास के भले आदमियों ने किसी तरह बीच-बचाव

कर साहब को छुड़ाया;—उसका सिर फट जाने से रक्त बहने लगा।

गोलमाल सुन कर डाक्टर साहब उस स्थान पर पहुँचे। साहब की दशा देख कर, उसे मरहम-पट्टी के लिए अस्पताल ले जाने का प्रस्ताव किया। साहब राज़ी हो गया। इस बीच में विनय बाबू शरीर की धूल झाड़ कर ड्योढ़े दर्जे में बैठ गये थे। दूसरे दिन निर्विघ्न कलकत्ते पहुँच कर उन्होंने "वीरभारत" में एक भीषण प्रबन्ध लिख मारा।

दूसरा परिच्छेद

हरगोविन्द बाबू स्थानीय अस्पताल के सरकारी डाक्टर थे। वे बूढ़े हो गये थे;—नेटिव डाक्टर होते हुए भी यथेष्ट प्रतिष्ठित थे। शहर में दो एम० बी० और कई एल० एम० एस० होते हुए भी डाक्टर हरगोविन्द की प्रैक्टिस ख़ूब चलती थी। उन पर लोगों का गहरा विश्वास था। डाक्टर साहब को लोगों के यहाँ (private call) भी मरीज़ देखने बहुत जाना पड़ता था। काम की अधिकता के मारे कभी कभी उन्हें नहाने-खाने का भी समय न मिलता था।

हरगोविन्द बाबू के दो लड़के थे। एक का नाम अजयचन्द्र था। वह कलकत्ते के रिपन-कालेज में बी० ए० में पढ़ता था। हाल में गरमी की छुट्टियों में घर आया था। छोटे लड़के

का नाम सुशील था। वह स्थानीय ज़िला-स्कूल में पढ़ता था। अजय का विवाह हो गया है। पिछले वैशाख महीने में बहू भी आ गई है।

रात को दस बजे के बाद हरगोविन्द बाबू अस्पताल से लौटे। अजय ने पूछा—बाबूजी, साहब कैसा है?

"अच्छा है। सिर में अधिक चोट लग गई थी, किन्तु डर की कोई बात नहीं। बेचारा बुरी तरह पीटा गया है।"

अजय ने कहा—उसने जैसा किया था, वैसा उसे फल मिला। गोरा चमड़ा होने से अपने को लाट साहब समझ लिया। अच्छा हुआ।

डाक्टर साहब ने कहा—देखो, उसके अन्याय करने में तो कोई सन्देह नहीं। किन्तु एक आदमी को पाँच आदमियों का मिल कर मारना भी कोई वीरता है? इसको तो न्याय-युद्ध नहीं कहते!

अजय ने कहा—अँगरेज़ के साथ भला बंगाली का कभी न्याययुद्ध हो सकता है?

"क्यों?"

"सभी तो अन्याय है। यदि इसका मुक़दमा चलाया जाय तो हाकिम क्या न्याय करेगा?"

डाक्टर साहब ने मुसकुरा कर कहा—तुम्हारी युक्ति तो बढ़िया है! दूसरा अन्याय करे तो क्या हम भी अन्याय करने लग जायँ।

इस बात का उत्तर अजय तुरन्त न दे सका। ज़रा विचार करके उसने कहा—देखिए, ऐसे स्थलों में संख्या-द्वारा ही न्याय-अन्याय का निश्चय हो सकता है। बंगाली मनुष्य है। अँगरेज़ भी मनुष्य है; वह राजजातीय है और संभवतः राज-पुरुष। इसलिए एक अँगरेज़ तीन बंगालियों के समान और उनकी अपेक्षा भी अधिक है। अतएव यदि एक आततायी अँगरेज़ को तीन बंगाली पीटें तो इसमें कोई दोष नहीं।

डाक्टर साहब ने कहा—इस युक्ति का सहारा लेकर तुम अपनी जाति का अपमान करते हो। अँगरेज़ भी आदमी है, भले ही वह राजपुरुष हो अथवा राजजातीय। राजपुरुष और राजजातीय होने से क्या उसके शरीर में अधिक बल बढ़ जाता है?

अजय ने कहा—शरीर में चाहे न भी बढ़े, पर मन में तो ज़रूर बढ़ जाता है। मानसिक बल के ही बूते शारीरिक बल है।

पुत्र की इस युक्ति की सारवत्ता डाक्टर साहब को स्वीकार करनी पड़ी। उन्होंने कहा—ठीक है। मानसिक बल पर ही शारीरिक बल निर्भर है। 'बलं बलं ब्रह्मबलं।' मालूम होता है, मानसिक बल को ही उपलक्ष्य करके शास्त्रकारों ने ब्रह्मबल कहा है। किन्तु फिर भी मैं यह नहीं मान सकता कि यदि तीन बंगाली न हों तो एक अँगरेज़ की बराबरी नहीं की जा सकती। इधर, बंगालियों में मन के ऊपर आधिपत्य करने

योग्य क्या कोई विशेष भाव नहीं है ? बंगाली जब आत्म-मर्यादा की रक्षा करने के लिए, अत्याचार को दूर करने के लिए, और माँ-बहन की इज़्ज़त बचाने के लिए, किसी अत्याचारी अँगरेज़ पर बलप्रयोग करेगा, तब क्या ये भाव उसकी भुजाओं में बल की वृद्धि न करेंगे ?

इसी समय नौकर ने भोजन तैयार होने की ख़बर दी। पिता-पुत्र भोजन करने गये।

तीसरा परिच्छेद

दूसरे दिन सवेरे साहब के पिटने की घटना से राजपुरुषों में खलबली फैल गई। मजिस्ट्रेट साहब एकदम आग-बबूला हो गये। पुलिस को हुक्म दिया कि तीन दिन के भीतर असामियों को गिरफ्तार करके कचहरी में हाज़िर करो। तहक़ीक़ात का भार कोतवाली के दारोग़ा वदनचन्द्र घोष को दिया गया। दारोग़ा साहब खाना-पीना छोड़ बस्ती में चक्कर लगा कर प्रमाण जुटाने लगे। कई नवयुवक वकील और मुख़्तार गिरफ़्तार कर लिये गये। स्कूल के कुछ संड-मुसंड लड़के भी हिरासत में भेज दिये गये।

एक ही दिन में बहुत कुछ तहक़ीक़ात हो गई। दूसरे दिन सवेरे छः बजे डाक्टर साहब बिस्तरे से उठ कर बरांडे में बैठे हुक़्क़ा पी रहे थे कि—धोती-चादर से सजे, चाँदी की मूठ लगे

हुए बेत को घुमाते घुमाते, हिलते-डोलते—दारोग़ा बदनचन्द्र ने आकर दर्शन दिया।

इधर-उधर की दो-चार बातों के बाद दारोग़ा ने कहा—"अब तो जनाब नौकरी नहीं बचती।"

डाक्टर साहब ने उत्सुकता के साथ पूछा—क्यों, क्या हुआ?

"परसों उस साहब के पिटने के मामले के कारण बड़ी आफ़त में फँस गया हूँ।"

"क्यों? सुना है कि असामी तो बहुत से गिरफ़्तार किये गये हैं।" कह कर डाक्टर साहब ज़रा मुसकुराये। मुसकुराहट व्यंग्यसूचक थी।

दारोग़ा ने मुसकुराहट की ओर ध्यान न देकर कहा—असामी तो गिरफ़्तार किये गये हैं, किन्तु गवाही और प्रमाण अच्छा नहीं मिलता।

"गवाह और प्रमाण नहीं तो गिरफ़्तारियाँ कैसे हुईं?" कह कर डाक्टर साहब फिर मुसकुराये।

"गिरफ़्तारी ठीक ही लोगों की हुई है। ये सब लड़के बड़े उद्दंड हैं। सभी गुण्डे हैं। मैंने स्वयं कई बार देखा है कि मजिस्ट्रेट साहब रास्ते से टमटम हाँकते जा रहे हैं और इन लोगों ने सामने आते हुए सलाम तक नहीं किया।"

"तो इसी से गिरफ़्तारियाँ की गई हैं?"

"जी नहीं, यह बात नहीं है। उन्हीं लोगों ने साहब को

मारा है इसमें सन्देह नहीं। गवाह हैं, किन्तु मातबर गवाह नहीं मिलते।"

"तब क्यों भले आदमियों के लड़कों को नाहक़ हिरासत में बन्द कर रक्खा है, छोड़ दीजिए।"

दारोग़ा साहब अकड़ कर बोले—सब चौपट हो जायगा। ऐसा करने से फिर नौकरी रहेगी? पेशी को सिर्फ़ एक ही दिन रह गया है। परसों मुक़दमा है। इसी अरसे के भीतर सब प्रमाण जुटाना है। इसी से इस समय आपके पास आया हूँ।

डाक्टर साहब ने आश्चर्य में आकर कहा—मेरे पास! मैं क्या करूँगा?

"सुना है कि उस दिन आप वहाँ मौजूद थे—गवाही देनी होगी।" कह कर दारोग़ा ने घनी डाढ़ी-मूँछों के बीच से दाँतों की शुभ्र शोभा दिखा कर डाक्टर साहब के मुँह की ओर प्रेम-भरी दृष्टि से देखा।

डाक्टर साहब ने कहा—मैं उस दिन स्टेशन पर था तो ज़रूर, परन्तु घटनास्थल पर न था—अर्थात् जिस समय की घटना है, उस समय मैं वहाँ न था। मारपीट हो जाने के बाद मैं वहाँ पहुँचा था। मैंने नहीं देखा कि साहब को किसने मारा है।

दारोग़ा साहब ने खेद के साथ कहा—ठीक है! बड़ी मुश्किल हुई! यदि यह बात पहले मालूम होती—

"क्यों, क्या हुआ?"

गरदन हिलाते हिलाते दारोग़ा ने भौंहें सिकोड़ कर कहा—पहले से दरियाफ़्त न करके मैंने बड़ा अन्याय किया है। आपको बड़ी विपत्ति में फँसा दिया है।

"क्या बात है, खुलासा कहिए न।"

"कल शाम को मुझे मजिस्ट्रेट साहब ने क्लब-घर बुला भेजा था। पूछा—'दारोग़ा, गवाह और सुबूत क्या क्या मिला ?' मैंने कहा—'हुजूर, एक काँस्टेबल और दो चौकीदारों ने यह घटना देखी है और सब असामियों को पहचान लिया है।' इस पर साहब ख़फ़ा होकर बोले—'नानसेन्स ! काँस्टेबल और चौकीदार ! कोई और अच्छा गवाह नहीं है ?'—साहब की नीली-पीली आँखें देख कर मैंने डर से कह दिया—'हाँ हुजूर, है तो। सरकारी डाक्टर हरगोविन्द बाबू उस जगह मौजूद थे। उन्होंने सब असामियों को पहचान लिया है।' 'आल राइट !'—कह कर साहब टेनिस खेलने चले गये।"

यह सुन कर हरगोविन्द बाबू ज़रा रुष्ट होकर बोले—बिना समझे-बूझे आपने यह बात साहब से क्यों कह दी ?

"वाह ! मैं कैसे समझता साहब ? आप वहाँ मौजूद थे। खुद साहब को अस्पताल लाये—यह मैं कैसे जानूँ कि आपने कुछ देखा नहीं ?"

"तो जाइए, साहब से अब सभी बात कह आइए।"

दारोग़ा साहब ने ज़ोर से हँस कर कहा—यह कैसे हो

सकता है ? एक मुँह से दो तरह की बातें कैसे कहूँ ? वैसा मेरा स्वभाव भी नहीं।

"तो मैं ख़ुद जाकर साहब से कह दूँ ?"

दारोग़ा साहब ज़ोर से हँस पड़े। अन्त में कहा—क्या आप पागल हो गये हैं ? वह बात कहने से साहब क्योंकर विश्वास करेंगे ? वे सोचेंगे कि आप स्वदेशी का पक्ष लेकर गवाही देना स्वीकार नहीं करते। आपके लिए भी विपत्ति है और मेरे लिए भी। साहब के कानों तक यह बात भी पहुँच गई है कि आप देशी नमक खाते हैं, और आपके घर में देशी कपड़ा काम में लाया जाता है।

डाक्टर साहब ने तनिक चिढ़ कर कहा—हाँ, देशी नमक खाता हूँ और स्वदेशी कपड़ा पहनता हूँ, इससे क्या मैं राजद्रोही हो गया ?

दारोग़ा ने गंभीर स्वर से कहा—आप गुस्सा क्यों होते हैं ? आज-कल कैसा ज़माना है, सो तो आप देख ही रहे हैं। वे लोग यही समझते हैं।

डाक्टर साहब ने कुछ सोचकर कहा—तो अब उपाय क्या है ? आप अच्छा काम कर बैठे हैं !

"उपाय और क्या है ? गवाही देनी होगी। घूमते-घामते थाने की ओर चलिए। असामियों को बैठा रक्खा है, देख लीजिए। कोर्ट में यदि सबको शिनाख़्त न कर सकें, थोड़े लोगों को ही कर सकें तो भी काम चल सकता है।

पुलिस-डायरी से और और गवाहों की जवाबबन्दी भी पढ़ कर सुना दूँगा।"

यह बात सुनते ही हरगोविन्द बाबू की आँखें क्रोध से लाल हो गईं। एक-दम कुर्सी छोड़कर, काँपते काँपते, उन्होंने गरदन टेढ़ी करके कहा—अयँ! जितना बड़ा मुँह नहीं है उतनी बड़ी बात आप कहते हैं! झूठी गवाही देने के लिए क्या और कोई नहीं मिला? चलो हटो, यहाँ से! कोई है रे? उठा तो दो इसे कान पकड़ कर।

वदनचन्द्र खड़ा हो गया। गले में डुपट्टा डालते डालते उसने कहा—तो आपको इसका फल भोगना होगा।

हरगोविन्द बाबू ने गरज कर कहा—जा, अपने बाप मजिस्ट्रेट से कह दे। जो कर सके, कर ले।

दारोग़ा वहाँ से जल्दी जल्दी क़दम बढ़ा कर चलता हुआ।

चौथा परिच्छेद

गुस्से से आगबबूला होकर हाँफता हाँफता दारोग़ा थाने में पहुँचा। उसने हाफ़िजअली हेड कांस्टेबल को बुला कर कहा—जमादार, ठाकुर के दोनों लड़कों का क्या नाम है?

"कौन ठाकुर?"

"हरगोविन्द—हरगोविन्द, जोकि सरकार का नमक खाकर नमकहरामी करता है।"

"जी नहीं—मुझे मालूम नहीं।"

"तो जाइए, जल्दी पता लगा लाइए"।

"क्यों?"

"उनको गिरफ़्तार करना है। साहब को पीटने के मुक़दमे मे वे भी असामी हैं, सुबूत मिला है।"

"जो हुक्म" कह कर जमादार चला गया। अब दारोग़ा भूखे बाघ की तरह थाने के बरामदे में जल्दी जल्दी टहलने लगा। इतना अपमान! नौकर मुझे कान पकड़ कर उठा देंगे। दारोग़ा के साथ ऐसी हुज्जत! क्यों हरगोविन्द! मन में क्या समझ रक्खा है!

दारोग़ा सोचने लगा—दोनों लड़कों को तो इसी दम गिरफ़्तार करवाता हूँ। किन्तु ठाकुर को और भी मज़ा चखाना होगा। उसके नाम एक मुक़दमा खड़ा करना पड़ेगा। चोरी का माल रखता है—ठाकुर चोरों से आधे दाम पर चोरी का माल ख़रीदता है। ख़ानातलाशी करके उसके घर से बहुत सा चोरी का माल अभी बरामद करूँगा—इसका उपाय है। तो हाकिम को विश्वास हो जायगा? होगा क्यों नहीं? दारोग़ा ठहरे डिप्टी साहबों के गुरुपुत्र। छोड़ देंगे? मजाल है! पुलिस कप्तान की मार्फ़त ऐसी लम्बी रिपोर्ट कराऊँगा कि डिप्टी बचा की तीन बरस के लिए तरक़्क़ी बन्द हो जाय।

दारोगा की इतनी ख़ातिर डिप्टी लोग क्यों किया करते हैं ? इसी लिए तो ! किन्तु यदि जज साहब अपील में छोड़ दे तो ? अगर कहें कि इतना बड़ा डाक्टर है, इतना रुपया पाता है, क्या उसके यहाँ चोरी का माल निकलना सम्भव है ? इससे तो रिशवत लेने का मामला खड़ा करना अच्छा है। उस दिन मार-पीट के मुक़दमे के जो कई ज़ख़मी अस्पताल में जाँच के लिए भेजे गये थे, उनके ज़ख़मों को मामूली बताकर डाक्टर ने सर्टिफ़िकेट दिया है। उन्हीं में से एक से नालिश कराये देता हूँ कि उसके ज़ख़्म का तार शदीद होने पर भी डाक्टर ने ३००) रिशवत में लेकर—मामूली बता दिया है। अब बचाजी कहाँ जायँगे ? मेरे हुक्म से क्या वह आदमी नालिश न करेगा ? मजाल क्या है !—पकड़ कर ११० दफ़ा में चालान कर दूँगा, इसका डर नहीं है क्या ?

इसी समय जमादार ने आकर कहा—डाक्टर के बड़े लड़के का नाम अजयचन्द्र और छोटे का सुशीलचन्द्र है।

अब दारोग़ा ने काग़ज़-क़लम लेकर मुंशी के पास मजिस्ट्रेट साहब के नाम एक कान्फिडेंशल रिपोर्ट लिख भेजी। उसकी नक़ल यह है;—

श्रीयुत मजिस्ट्रेट साहब बहादुर समीपेषु—

सरकार ! हुज़ूर के हुक्म के मुताबिक साहब के पीटे जाने के मुक़दमे की तहक़ीक़ात करते करते दो

असामियों का नाम और भी मालूम हुआ है—अजयचन्द्र चट्टोपाध्याय और सुशीलचन्द्र चट्टोपाध्याय। इनका पिता सरकारी डाक्टर हरगोविन्द है। अजय बड़ा हैकड़ है। कलकत्ते में सुरेन्द्र बाबू के कालेज में पढ़ता है। मालूम हुआ है कि उसी के हुक्म से दूसरे असामियों ने साहब को मारा-पीटा है। दोनों को दफ़ा ५४ के अनुसार आज ही गिरफ़्तार करने का बन्दोबस्त किया है।

२—ख़ास तहक़ीक़ात से यह भी मालूम हुआ है कि उक्त अजयचन्द्र कलकत्ते के वीडनस्कायर के झगड़े में शामिल था। उसने यहाँ आकर एक समिति स्थापित की है जिसमें लाठी चलाने की तालीम दी जाती है। यहाँ के अनेक लोग उक्त समिति को चन्दा देते हैं। डाक्टर का छोटा लड़का सुशील, कम उम्र होने पर भी, बड़ा दुष्ट है। उसने यहाँ ढेला फेंकने की एक समिति खोली है जिसके मेम्बर बहुत से लड़के हैं। साहब-मेमों को देखते ही ढेला फेंकना इनका उद्देश्य है।

३—गुप्त रीति से पता लगाने पर मालूम हुआ कि डाक्टर के मकान में वह ख़ून लगी लाठी छिपा कर रक्खी गई है, जिससे साहब पीटे गये हैं। लाठी चलाने की समिति के चन्दे के रजिस्टर से मेम्बरों की सूची देख कर अनेक असामियों का पता सहज ही लग सकता है। इसलिए प्रार्थना है कि दफ़ा ९६ के अनुसार, हरगोविन्द

डाकूर के घर की खानातलाशी के लिए, वारंट निकालने की कृपा की जाय।

आज्ञाधीन सेवक

श्रीवदनचन्द्र घोष, एस० आई०*

१—प्रकट हो कि हरगोविन्द डाकूर स्वदेशी के विशेष पक्ष में होकर सदा देशी चीनी और देशी नोन ही खाते हैं। भारत-काटन-मिल का ५००) रुपये का शेयर इसने स्त्री के नाम से ख़रीदा है। इसके सिवा उसके लड़के मुलज़िम हैं। इस कारण डाकूर के सच्ची बात कहने में सन्देह है। इसलिए उसे गवाह बनाने का मैं साहस नहीं करता।

२—सुना है, उक्त हरगोविन्द ने कहा है कि वह जज मजिस्ट्रेट की कुछ परवा नहीं करता।

+ + + +

जमादार इसी समय अजय और सुशील को गिरफ़ार कर लाया। थोड़ी ही देर में दो वकीलों ने आकर उनको ज़मानत पर छुड़ाना चाहा किन्तु दारोग़ा ने कहा—साहब का हुक्म नहीं।

पाँचवाँ परिच्छेद

ऊपर लिखी रिपोर्ट पाकर मजिस्ट्रेट ने सर्च-वारंट पर दस्तख़त कर दिये। चपरासी ने आकर थाने में दारोग़ा को

* S. I. Sub-Inspector.

वारंट दिया। उस समय एक गाय की चोरी के असामी से दारोग़ा के दर-दस्तूर का सौदा हो रहा था। असामी कहता था, हल-बैल बेंच कर दारोग़ा साहब के पान खाने को बड़ी मुसीबत से सौ रुपया इकट्ठा कर लाया हूँ। यही लेकर असामी को छोड़ने की मेहरबानी हो जाय। दारोग़ा कहता था, दो सौ से एक कौड़ी भी कम न हो सकेगी। इसी समय सर्च-वारंट मिला। तब दारोग़ा ने ख़ुश होकर सौ रुपये ही ले लिये और आख़िरी रिपोर्ट यों लिख दी—तहक़ीक़ात से मालूम हुआ कि असामी निर्दोष है। मुद्दई के घर से उक्त गाय भाग कर असामी की गोशाला में घुस कर सानी खा रही थी। इसी से असामी ने नाराज़ होकर गाय को बाँध लिया था।

गाय चुरानेवाले को बिदा कर बदनचन्द्र सावधानी से सर्च-वारण्ट को पढ़ने लगा। होठों में हँसी नहीं रुकती थी।

उस समय दिन के तीन बजे थे। जल्दी जल्दी वर्दी पहन कर, दस बारह कांस्टेबलों के साथ, दारोग़ा अकड़ता हुआ डाक्टर साहब के मकान की ओर बढ़ा।

तलाशी की गवाही के लिए पड़ोस के दो भले आदमियों को बुलाकर दारोग़ा डाक्टर साहब के दरवाज़े पर पहुँच आवाज़ देने लगा। हरगोविन्द बाबू बाहर निकल आये। दारोग़ा ने उनको सर्च-वारंट दिखा कर स्त्रियों को दूसरी जगह हटा देने का हुक्म दिया।

ख़ाना-तलाशी शुरू हुई। दारोग़ा ने कांस्टेबलों से कहा—

"बक्स, ट्रंक सब यहाँ आँगन में उठा लाओ।" जिनकी चाबी थी उनको खोल कर, बाक़ी के ताले तोड़ कर उनमें की सब चीज़ें आँगन में धूल में डाल दी गईं। जूते की ठोकर से चीज़ों को बखेर बखेर कर दारोग़ा तलाशी लेने लगा। शाल, अलवान, साड़ी, कोट, कमीज़, कुर्ता, मोज़ा, रूमाल, वग़ैरह दारोग़ा के जूते की ठोकर से फटकर इधर-उधर उड़ने लगे। डाक्टर साहब की बहू के सन्दूक से अजयचन्द्र की लिखी चिट्ठियों का बंडल निकला। दारोग़ा ने गर्व के साथ उनको अपनी जेब में जगह दी। अजय के सन्दूक से बङ्किम बाबू का "आनन्द-मठ" निकला। उसे देख कर दारोग़ा आनन्द से चिल्ला उठा। काँस्टेबल के हाथ से लेकर उसे अपने कब्ज़े में कर लिया। अब प्रत्येक कमरे में घुस कर सन्दूक और आलमारियाँ तोड़ कर तलाशी ली गई। डाक्टर साहब के प्रिस्क्रिप्शन का रजिस्टर, चिट्ठियों की दो-तीन फ़ाइलें, बाज़ार-खर्च के हिसाब की किताब, सुरेन्द्र बाबू की चौखटा जड़ी तसवीर, और विपिनचन्द्र पाल, लाजपत राय आदि के चित्रों से युक्त एक मासिक पत्र—सब कुछ दारोग़ा ने अपने कब्ज़े में कर लिया। दवा की आलमारी खोलकर दारोग़ा ने एक जगह से एक सफ़ेद बोतल निकाली। बोतल के आधे हिस्से में कोई पदार्थ भरा था। लेबिल पर हरिण का चित्र था। बोतल का काग खोल कर दारोग़ा ने सूँघा। फिर गवाहों से कहा—डाक्टर शौक़ीन है। थोड़ी सी लीजिए न?

गवाहों ने कहा—नहीं जनाब, हम लोग शराब नहीं पीते।

तब दारोगा एक मेज़र-ग्लास में थोड़ी सी उँड़ेल कर, बिना पानी मिलाये उसे पी गया। कुछ क्षण में मुँह सिकोड़ कर पूछा—यह क्या है ? ब्रांडी है न ?

गवाहों ने लेबल पढ़ कर कहा—जी हाँ, ब्रांडी ही है।

अब सोने के कमरे में जाकर दारोगा ने कहा—

गद्दी तकिया सब फाड़ डालो। कभी कभी तकिये के भीतर से माल बरामद होता है।

कॉंस्टेबलों ने घर के बिछौनों का आँगन में ढेर लगा दिया। एक एक करके गद्दी-तकिया फाड़-चीर कर सब रुई बाहर निकाल डाली। हवा में उड़ उड़ कर रुई महल्ले भर में फैल गई। लेकिन कुछ भी माल न निकला।

इस प्रकार खाना-तलाशी की लीला पूरी हुई। अब दारोगा कागज़ कलम लेकर चीज़ों की फ़ेहरिस्त बनाने लगा।

थोड़ा सा लिखकर दारोगा ने एकाएक कहा—हाँ—हाँ—लाठी है कि नहीं, देखो तो।

तब कॉंस्टेबल चारों ओर लाठी खोजने लगे। नौकर शिव-रतन की सम्पत्ति दो लाठियाँ,—जो बढ़िया पके बाँस की थी और जिनको वह मुज़फ़्फ़रपुर ज़िले से लाया था,—निकल आईं। उनको हाथ में ले, आँखों पर चशमा लगा, दारोगा साव-धानी से परीक्षा करने लगा किन्तु कहीं रक्त का चिह्न दिखाई

न पड़ा। फेहरिस्त में लिखा—लम्बी लम्बी, बाँस की दोनों लाठियों में से रक्त का चिह्न पहले से ही धो दिया गया मालूम होता है।

फेहरिस्त पर गवाहों के दस्तखत लेकर और हरगोविन्द बाबू को व्यंगसूचक सलाम करके अपने दलबल के साथ दारोगा चलता हुआ।

डाक्टर साहब अब तक रसोई-घर में बराण्डे के एक कोने में कुर्सी पर चुपचाप बैठे थे। रसोई-घर में स्त्रियाँ बन्द थीं। इसी से डाक्टर साहब एक क्षण के लिए भी वहाँ से नहीं हिले।

दारोगा के चले जाने पर हरगोविन्द बाबू बाहर आये। दोनों गवाह अब तक वहीं खड़े थे।

हरगोविन्द ने उनसे कहा—देख लिया जनाब ?

दोनों गवाहों ने कहा—जी हाँ, देखा तो।

"आप मेरे साथ मजिस्ट्रेट के पास तक चल सकते हैं ?"

एक ने कहा—क्या करना होगा ?

"एक बार साहब से जाकर सब बातें कहूँगा। देखें, कुछ सुनवाई होती है या नहीं।"

दोनों गवाह चुप हो रहे।

तब हरगोविन्द बाबू ने अधीर होकर कहा—बतलाइए, आप लोग चलेंगे ?

एक ने कहा—बेहतर तो यह होगा कि आप

अकेले ही जाकर एक बार साहब से कह देखिए। ऐसी दशा में हम लोगों का वहाँ जाना तो—। दूसरे गवाह स्पष्टवक्ता थे। वे बीच में ही बोल उठे—इन बातों की कोई ज़रूरत नहीं। डाक्टर साहब, मैं असल बात कहता हूँ। न तो मजिस्ट्रेट के पास जाने से कुछ फ़ायदा होगा और न हमीं लोग पुलिस के विरुद्ध गवाही दे सकेंगे। ग़रीब आदमी हैं। किसी तरह बाल-बच्चों को पालते हैं। आपकी दुर्गति तो अपनी आँखों देख ली है। आप सरकारी नौकर हैं, अच्छे ओहदे पर हैं। आप पर जब ऐसा जुल्म किया है तब हम लोगों के हाथों में तो हथकड़ी पहना देगा और डण्डे मारते मारते रास्ते से घसीट ले जायगा।

हरगोविन्द ने ठण्ढी साँस लेकर कहा—अच्छा तो रहने दीजिए।

"प्रणाम!" कहकर दोनों गवाह चले गये।

अब डाक्टर साहब अकेले ही मजिस्ट्रेट के बँगले की ओर चले। साहब उस समय टेनिस खेलने की पोशाक पहन कर, हाथ में रैकेट ले, बाइसिकल की सवारी से क्लब की ओर जाने को तैयार थे। बराण्डे में साहब से भेंट हुई।

हरगोविन्द बाबू सलाम कर खड़े हुए।

साहब ने पूछा—क्या है बाबू?

"साहब, आज मुझ पर दारोग़ा बदनचन्द्र घोष ने

बड़ा अत्याचार किया है। खाना-तलाशी का बहाना कर—"

साहब ने बीच में ही बात काट कर कहा—आपके दोनों लड़के साहब के झगड़ेवाले मुक़दमे में मुलज़िम हैं न ?

"जी हाँ, दारोग़ा ने झूठमूठ की बन्दिश बाँध कर उनको मुलज़िम क़रार दिया है। आज सबेरे ही—"

सुनकर साहब लाल लाल आँखें करके झल्ला कर बोले How dare you ! दो दिन के बाद मेरे इजलास में आपके लड़कों का मुक़दमा है। आज आप मुक़दमे के सम्बन्ध में biassed करने आये हैं ?

यह कह कर साहब बाइसिकल पर चढ़ कर चलते बने।

हरगोविन्द बाबू ठण्डी साँस लेकर धीरे धीरे घर को लौट आये।

छठा परिच्छेद

शाम हुई। डाक्टर साहब घर के भीतर स्त्री और बेटियों के पास बैठे थे। एक तो दोनों लड़के अकारण ही हवालात में बन्द थे, उस पर यह अपमान और लाञ्छना—इससे सभी बहुत ही उदास थे।



शाम बीत गई। आज अभी तक रसोई का कुछ बन्दोबस्त नहीं हुआ। किसी को भूख नहीं, कोई भी कुछ न खायगा। डाक्टर साहब के सिर में दर्द है। वे फ़र्श पर बिछौना बिछा कर लेट गये। लड़की पाँव दाबने लगी। बहू पंखा झलने लगी।

इसी समय किसी ने बाहर से पुकारा—डाक्टर साहब हैं?

नौकर शिवरतन बाहर गया। उसने लौट कर ख़बर दी—एक रोगी है—कोई बुलाने आया है।

डाक्टर साहब ने कहा—आज मेरी तबीअत ख़राब है। कह दो, आज न चल सकूँगा। किसी दूसरे डाक्टर को बुला ले।

शिवरतन ने जाकर यही कह दिया।

आधा घंटा बीत गया। किसी ने फिर आवाज़ दी—डाक्टर साहब—डाक्टर साहब।

शिवरतन ने फिर बाहर जाकर देखा और लौट कर कहा—वही आदमी फिर आया है। कहता है कि डाक्टर साहब से भेंट किये बिना मैं न जाऊँगा।

डाक्टर साहब ने कहा—मैं तो उठ नहीं सकता। जा, उसको यहीं बुला ला।

बहू और कन्या वहाँ से उठ गईं। उस आदमी ने आकर डाक्टर साहब को प्रणाम किया और कहा—बड़ी आफ़त है। आपके बिना चले काम नहीं बनता।

"कौन बीमार है ?"

वह मनुष्य चुप हो रहा।

"कौन बीमार है ? क्या बीमारी है ?"

"क्या बताऊँ ! कौन मुँह लेकर बताऊँ !"

डाक्टर साहब ने अचरज करके पूछा—आप कौन हैं ?

"मैं थाने का मोहर्रिर हूँ। मेरा नाम हाराधन सरकार है। दारोग़ा साहब बहुत बीमार हैं। आज जो काम हो गया है उसके लिए वे लज्जा के मारे मरे जाते हैं। उस पर यह विपत्ति।

"बीमारी क्या है ?"

"छाती और सिर में बड़ा दर्द है। आपके चले बिना न बनेगा।"

डाक्टर साहब ने कहा—मेरे चले बिना क्यों न बनेगा ? बस्ती में क्या एक मैं ही डाक्टर हूँ ?

तब मुंशी ने जेब से सौ रुपये निकाल कर डाक्टर साहब के पैर के पास रख दिये और कहा—कृपा कीजिए।

रुपया देखकर डाक्टर साहब क्रोध के मारे तलमला उठे। बिस्तरे पर बैठ कर उन्होंने कहा—मुझे रुपये का लोभ दिखाने आये हो ? क्या पुलिस की तरह सभी लोग रुपये के ग़ुलाम होते हैं ? सौ रुपये तो कोई चीज़ ही नहीं, लाख रुपया मिलने पर भी मैं न जाऊँगा। जाइए—अपना रास्ता देखिए।

रुपया उठा कर नीचा सिर किये हुए मुंशी चला गया। बहू-बेटी आकर फिर सेवा करने लगीं।

रात के नौ बजे। गृहिणी ने कहा—"थोड़ा सा गरम दूध ला दूँ?" डाकृर साहब ने कहा—लाओ।

वे रसोई-घर में जाकर दूध गरम करने लगीं। इसी समय खिड़की के दरवाज़े पर एक गाड़ी आ लगी।

तुरन्त ही नौकरनी के साथ एक युवती भीतर घर में आई। उसने पूछा—माँजी कहाँ हैं?

"कौन हो तुम?"

नौकरनी ने कहा—"ये वदनचन्द्र दारोगा की स्त्री हैं।" साथ ही युवती ने गृहिणी के पाँव पकड़ लिये।

गृहिणी ने पाँव छुड़ाने की चेष्टा करके कहा—क्यों—क्यों?

युवती ने रोते रोते कहा—माँ, मेरे स्वामी की जान निकल रही है। मेरे हाथ की चूड़ियों की रक्षा करो।

गृहिणी ने कहा—ऐसी सख़्त बीमारी है?

"हाँ, माँ। डाकृर साहब कहते हैं कि दूसरे डाकृर को क्यों नहीं बुला ले जाते? सो माँजी, उनकी बीमारी को दूसरे डाकृर जब समझेंगे ही नहीं तब बचायेंगे कैसे! वे यहाँ न मालूम क्या पी गये हैं, उसी से यह दशा हुई है।"

गृहिणी ने पूछा—यहाँ क्या पी लिया है? यहाँ तो कुछ भी खाया-पीया नहीं।

युवती ने कहा—मुझे एक बार डाक्टर साहब के पास ले चलिए। वे मेरे बाप हैं—इस समय मुझे लज्जा नहीं है।

गृहिणी उसे हरगोविन्द बाबू के पास ले गई। युवती ने डाक्टर साहब के पाँव पकड़ कर कहा—बाबूजी, मेरी रक्षा करो!

गृहिणी ने सब बातें खोल कर कह दीं।

अब युवती ने कहा—उन्होंने बताया है कि खानातलाशी करते समय दवा की आलमारी में ब्रांडी की एक बोतल थी। ब्रांडी जान कर उन्होंने ज़रा सी पी ली थी। अब उनको सन्देह होता है कि वह ब्राण्डी नहीं कोई विष है।

यह सुन कर डाक्टर साहब ने कहा—दवा की आलमारी में और ब्रांडी की बोतल!

सुनते ही डाक्टर साहब का मुँह सूख गया। उन्होंने युवती से पूछा—क्या आप गाड़ी पर आई हैं?

"जी हाँ।"

"तो मैं इसी गाड़ी पर थाने को जाता हूँ। आप यहीं ठहरिए। गाड़ी लौट आने पर आप आइयेगा।"

युवती की आँखें डबडबाई हुई थीं। उसने खड़ी होकर कहा—बाबूजी, मेरा सौभाग्य बचाना आपके हाथ है।

"यह ईश्वर के हाथ की बात है बेटी"। कह कर डाक्टर साहब दवा और यन्त्र आदि ले कुछ क्षण के भीतर चल पड़े।

सारी रात जागकर उन्होंने दवा की। इस बार दारोग़ा की जान जाते जाते बच गई।

यथासमय साहब के पीटने के मामले का भी फ़ैसला हो गया। कोई गवाह न मिलने से अजय और सुशील बेदाग़ छूट गये। बाक़ी सबको छः छः महीने की क़ैद हुई।

रिहाई

पहला परिच्छेद

बड़े दिन की छुट्टियों में नगेन्द्र बाबू कलकत्ते आये हैं। कलकत्ते में उनकी ससुराल है।

नगेन्द्र बाबू पूर्व-बंगाल में डिप्टी मजिस्ट्रेट हैं, हाल में फ़रीदसिंह ज़िले के सदर मुक़ाम को उनकी बदली हुई है। पहली जगह से बदली होने पर अपने स्त्री-पुत्र को ये कलकत्ते छोड़ गये थे; बड़े दिन की छुट्टियों में अब उनको लेने आये हैं।

इस बार कलकत्ते में बड़ी चहल-पहल है। कांग्रेस का अधिवेशन है। शिल्प-प्रदर्शिनी तो पहले ही खुल गई है।

नगेन्द्र बाबू की ससुराल भवानीपुर में है। उनके ससुर पेंशन-याफ़्ता सबजज हैं। उनके तीन साले हैं जिनमें एक हाईकोर्ट के वकील हैं, एक गवर्नमेण्ट-आफ़िस में क्लर्क हैं और एक कुछ भी व्यवसाय नहीं करते, सिर्फ़ सभा-समितियों में वक्तृता देते फिरते हैं।

नगेन्द्र बाबू की उम्र सत्ताईस वर्ष की है। इनको डिप्टी हुए पाँच वर्ष हो गये। ये एम० ए० परीक्षा में प्रथम हुए थे। विद्याबुद्धि यथेष्ट ही है। इसी से इनकी साली और सलहजें 'बुद्धूराम' कहती हैं। दीनबन्धु बाबू ने मूर्ख डिप्टियों का

नाम 'बुद्धूराम' रक्खा था। लँगड़े को लँगड़ा, और काने को काना कहने से उन लोगों को क्रोध और दुःख होता है। आँख-पाँववाला तो उसे हँसी ही समझता है। बुद्धूराम कहने से नगेन्द्र बाबू क्रुद्ध नहीं होते थे।

कल कांग्रेस का अधिवेशन होनेवाला है। डिप्टी साहब चाय पीकर बैठे हैं। छोटा साला और सालियाँ उनको घेर कर बातें कर रही हैं।

गिरीन्द्रनाथ ने कहा—फ़रीदसिंह में आज-कल और कोई झगड़ा-बखेड़ा तो नहीं खड़ा हुआ है?

"आज-कल झगड़ा-बखेड़ा कुछ भी नहीं है।

इन्दुमती—स्वदेशी आन्दोलन कैसा चल रहा है?

"अच्छा चलता है। पर फ़रीदसिंह में मैंने वैसा आन्दोलन तो नहीं देखा जैसा कि वहाँ पहुँचने से पहले अख़बारों में पढ़ा करता था।"

सत्येन्द्र—ऐसा तो होता ही है। हमेशा एक ही तरह की तेज़ी नहीं रहती। इसी कलकत्ते में जैसा पहले देखा था—

डिप्टी बाबू ने कहा—तुम्हारे कलकत्ते की अपेक्षा फ़रीदसिंह में स्वदेशी का आन्दोलन अधिक ज़ोरों पर है। किसकी मजाल है जो खुल्लमखुल्ला बाज़ार से विलायती कपड़ा ख़रीदे। कन्धे पर लाठी रक्खे लड़के रास्ते रास्ते पहरा देते हैं।

छोटे साले ने कहा—जातीय विद्यालय के लड़के?

"हाँ अधिकांश वही हैं। अन्य स्कूलों के भी लड़के हैं।"

"मास्टर कुछ नहीं कहते ?"

"मास्टर हार मान कर चुप हो रहे हैं।"

"और पुलिस ?"

"वे पुलिस की परवाह कब करते हैं। शाम को बाज़ार में घूमते समय मैंने देखा है कि पुलिस देखती है, और लड़के कहते हैं—"एजी सिपाहीजी, देखो, हम पिकेट करते हैं—" और पिकेटिंग करने लगते हैं।"

यह सुन कर सभी हँसने लगे। सत्येन्द्र ने कहा—अच्छा नगेन्द्र बाबू आप फ़रीदसिंह जाकर बच्चे को जातीय विद्यालय में भरती करा दीजिएगा।

नगेन्द्र बाबू ने हँस कर कहा—अरे सब चौपट हो जायगा ! चाकरी चली जायगी।

"चाकरी न जाती तब तो आप भरती करा देते।"

"बेशक।"

गिरीन्द्र बाबू ने कहा—तो ऐसी चाकरी क्यों करते हो ?

"चाकरी न करें तो खायँ क्या ?"

"क्यों, आपके ला-लेकचर्स तो कंप्लीट (पूर्ण) हो गये हैं। आप वकालत पास कर मज़े में बड़े दादा के साथ हाईकोर्ट जाया करें।"

"अब क्या बुढ़ापे में इम्तहान पास किया जा सकता है ?"

इन्दुमती बोली—तो यही कहिए न कि अँगरेज़ों की

नौकरी न छोड़ेंगे। अच्छा, बतलाइए तो आप स्वदेशी के पक्ष में हैं या विपक्ष में ?

"पक्ष में ! यह देखिए पचास रुपये का देशी कपड़ा ख़रीद लाया हूँ। साथ ले जाऊँगा।"

"क्यों, वहाँ क्या देशी कपड़ा नहीं मिलता ?"

"मिलता है किन्तु दाम अधिक देने पड़ते हैं।"

सत्येन्द्र ने हँसकर कहा—समझती नहीं इन्दु ! वहाँ ख़रीदें तो अँगरेज़ हाकिमों को ख़बर लग सकती है। इस भय से यहाँ से ख़रीद कर ले जा रहे हैं।

नगेन्द्र ने हँस कर कहा—इसमें हानि क्या है। छिपकर पुण्य करने में क्या कोई हानि है ?

"हानि तो कुछ भी नहीं। किन्तु प्रकट रूप में पाप न कीजिएगा।"

इसी समय कई कण्ठों से निकलती हुई संगीत-ध्वनि सुनाई पड़ी। सभी ने कहा—यह मातृपूजक समिति कांग्रेस के लिए भिक्षा माँगने आई है।

सभी बाहर जा खड़े हुए। देखा, कोई पचास युवक और बालक हैं। कोई कोई सिर पर पीली पगड़ी बाँधे हैं। कोई ढोल बजा रहे हैं, कोई 'पंचम' बजा रहे हैं और किसी के हाथ मे ऐसी ध्वजा है जिस पर 'वन्दे मातरम्' अङ्कित है। एक के हाथ में बड़ी सी थाली है, उसमें बहुत सा रुपया-पैसा है—

सभी मिल कर एक स्वर में गीत गा रहे हैं--

आओ दो माता को दान।
कौन कहाँ है अब तो रक्खो आकर मा का मान॥
धन्य दिवस यह मा की होगी क्या ऐसी सन्तान।
जिसे न होगा जननी की पूजा का कुछ भी ध्यान॥
यही दिवस है मा को होगा सन्तति का अभिमान।
जननी का आंचल भर दो सब दीन और धनवान॥

घर के सब लोग कोई रुपया कोई अठन्नी चवन्नी देने लगे नगेन्द्र बाबू ने दस रुपये का नोट थाली में रख दिया।

नोट देख कर हाथ में कागज़--पेंसिल लिये एक युवक आकर पूछा---आपका शुभ नाम ?

नगेन्द्र बाबू---नाम की क्या ज़रूरत है ?

"पाँच रुपये से अधिक देनेवाले का नाम लिख लेने क नियम है।"

"तो लिख लीजिए एक मित्र।"

सत्येन्द्र---अरे लिख लो एक डिप्टी। ये पूर्व-बंगाल : डिप्टी हैं।

गिरीन्द्र बाबू---नहीं जी नहीं। 'एक मित्र' ही लिख लो युवक वही लिख कर गाते गाते चले गये।

दूसरा परिच्छेद

शाम हो गई। फ़रीदसिंह के बाज़ार के रास्ते में विद्याल के बालक घूम रहे हैं। देखा कि एक सौदागर की दूका

से हाथ में बिस्कुटों का डिब्बा लिये एक आदमी बाहर निकला।

देखते ही लड़के उसके साथ हो लिये। एक ने पूछा—देखें तो सही कैसे बिस्कुट हैं ?

उस आदमी ने बिस्कुट का डिब्बा दिखा दिया।

लड़के बोले—छिः ! छिः ! ये तो विलायती हैं।

"क्यों बाबू, विलायती तो अच्छे होते हैं।"

"तुम हिन्दू हो या मुसलमान ?"

"मुसलमान।"

एक लड़का बोला—विलायती चीज़ लेना हराम है।

वह मनुष्य बोला—तोबा ! तोबा ! ऐसी बात मत कहिए बाबू।

"दाम कितना दिया ?"

"डेढ़ रुपया।"

"अयँ डेढ़ रुपया ! इससे अच्छा, ताज़ा देशी बिस्कुटों का डिब्बा एक रुपये में मिलता है।"

वह आदमी साहब का चपरासी था। उसका मालिक एक चाय के बाग़ का मालिक है। अभी हाल में आसाम से आकर डाक-बँगले में ठहरा है। उसने सोचा, साहब ने तो बिस्कुट के लिए मुझे डेढ़ ही रुपया दिया है। यदि इससे अच्छा बिस्कुट एक रुपये में मिल जाय तो आठ आने का मुझे फ़ायदा हो। हानि क्या है ? इसी से उसने पूछा—सचमुच ?

लड़के उत्साहित होकर बोले—हाँ, सच बात है। चलो, देशी बिस्कुट का डिब्बा दिखा दें। इस डिब्बे को लौटा दो।

चार-पाँच बालक उस चपरासी को सौदागर की दूकान में ले गये। किन्तु सौदागर डिब्बा लौटाने को किसी तरह राज़ी न हुआ। वह बोला—स्वदेशी के मारे विलायती डिब्बा नहीं बिकता। माल पड़ा पड़ा बर्बाद होता है। एक बेचा है। उसे मैं अब किसी तरह वापस नहीं ले सकता।

तब लड़कों ने दूकान के बाहर आकर आपस में सलाह करके यह निश्चय किया कि हम सब मिल कर अपनी गाँठ से दाम दे बिस्कुट का डिब्बा ख़रीद दें। चपरासी से कहा—लाओ, अपना डिब्बा हमें दे दो। हम देशी बिस्कुटों का डिब्बा तुम्हें ख़रीद देते हैं।

चपरासी को स्वदेशी बिस्कुट की दूकान में ले जाकर लड़कों ने देशी बिस्कुटों का डिब्बा ख़रीद दिया।

चपरासी बोला—बाबू इसका दाम तो एक रुपया है। हमारे बाक़ी आठ आने ?

लड़कों ने दूकानदार से कहा—"आठ आने पैसे दे दीजिए। हम लोगों के नाम पूरा डेढ़ रुपया लिख रखिए, कल दे जायँगे।" आठ आना लेकर लड़कों ने चपरासी को दे दिये।

जेब में पैसे डालकर चपरासी बोला—बाबू, बिस्कुट अच्छा तो है न ?

"बहुत अच्छा है। खाकर देख लो। अब कभी विलायती बिस्कुट मत खाना। हराम है।"

"तोबा! तोबा!" कहकर चपरासी डाक-बँगले की ओर चला।

लड़कों ने कहा—भाई आओ, इस डिब्बे को वन्दे मातरम् कर दें। डिब्बा खोल कर सड़क पर बिस्कुटों को बखेर दिया। सब लड़के वन्दे मातरम् गीत के साथ बिस्कुटों को पैरों से कुचलने लगे। दो-एक मिनट में ही बिस्कुटों ने चूर-मूर होकर सड़क के उस हिस्से को सफ़ेद कर दिया। एक ने टीन के डिब्बे को पैरों से रौंद कर नाली में फेंक दिया। सबके सब अपने अपने घर चले गये।

चपरासी ने कुछ दूर से यह लीला देखी। वह आसाम से नया नया आया था। कुछ भी समझ न सका। एक राहगीर से पूछा—ये बाबू पागल हो गये हैं?

उसने कहा—जब से वन्दे मातरम् का प्रचार हुआ है, लड़के किसी को विलायती चीज़ ख़रीदने नहीं देते।

"क्या कहते हो, बन्दूक मारम्?"

"नहीं जी, वन्दे मातरम्।"

"यह क्या है?"

"क्या जानें भाई। कोई गाली होगी। साहबों को देखते ही लड़के वन्दे मातरम् चिल्लाते हैं।"

तीसरा परिच्छेद

नक़द आठ आने पैसे पाकर चपरासी खुशी खुशी डाक-बँगले लौट आया। देखा, साहब बराण्डे में घूम रहे हैं।

चपरासी को देख, अत्यन्त क्रुद्ध होकर साहब ने कहा—"क्यों, इतनी देरी किया ?" फिर बिस्कुट का डिब्बा हाथ में लेकर देखने लगे। हिन्दू बिस्कुट देखते ही फ़ौरन वह डिब्बा चपरासी के सिर से दे मारा। चपरासी बराण्डे के किनारे खड़ा था। चोट खाकर नीचे गिर पड़ा। टीन के डिब्बे की चोट से उसके सिर से रक्त बहने लगा।

चपरासी के गिरने की परवा न करके साहब बोले—डैम, सुअर का बच्चा—यह देशी बिस्कुट क्यों लाया ?

चपरासी डर से काँपता काँपता बराण्डे में उठकर आया और बोला—हुज़ूर, मैंने तो पहले विलायती बिस्कुट ही लिया था। लेकिन—

"क्या हुआ ?"

"लेकिन स्कूल के लड़के—" चपरासी आठ आने की माया छोड़ कर कहने जा रहा था कि लड़कों ने धोखा दिया है, उन्होंने देशी बिस्कुट को अच्छा बताया इसी से लाया हूँ। किन्तु साहब लाल लाल आँखें कर बीच में ही बोल उठे—स्कूल के लड़के ? वन्दे मातरम् ? छीन लिया ?

अब चपरासी को अपार समुद्र का पार मिला। बोला—हाँ हुजूर, छीन लिया।

"क्यों दिया ?"

"हुजूर, वे बीस-पच्चीस थे, मैं अकेला क्या करता ?"

साहब समझ गये कि अखबारों में जो पढ़ा है वही बात हुई है। बोले—यू ड्याम कावर्ड, पुलिस को क्यों नहीं बुलाया ?

चपरासी बोला—हुजूर, मैं पुलिस पुलिस कह कर बहुत चिल्लाया, पर कोई सिपाही न आया। लड़कों ने बिस्कुटों को तोड़ ताड़ कर रास्ते में फैला दिया और 'बन्दूक मारो' या न जाने क्या था कह कहकर बिस्कुटों को पाँव से चूर चूर कर दिया। मैं क्या करता, हुजूर की चाय ठण्डी हो रही थी, मेरे पास एक रुपया था, सो उसका एक देशी डिब्बा खरीद लाया। एक रुपये को तो विलायती डिब्बा मिलता नहीं ग़रीब-परवर।

"अच्छा, मैं अभी मजिस्ट्रेट के पास जाता हूँ। लड़कों को जेल भेजेगा।" कहकर टोपी ले चा-कर साहब क्रोध से काँपते काँपते क्लब की ओर बढ़े।"

मजिस्ट्रेट साहब, जज साहब, पुलिस साहब आदि वहाँ उपस्थित थे। कई मेम साहबाएँ भी थीं। जज और मजिस्ट्रेट बिलियर्ड खेल रहे थे। ज्वाइण्ट साहब, पुलिस साहब और उनकी मेमें ताश खेल रही थीं।

चा-कर साहब ने मजिस्ट्रेट के पास अपना कार्ड भेज दिया। कार्ड पहुँचते ही बुलावा हुआ। उन्होंने भीतर पाँव रखते ही कहा—"Very sorry to intrude—" इसके बाद सब बातें खोलकर कह सुनाईं।

सब क़िस्सा सुनकर मजिस्ट्रेट आग की तरह जल उठे। पुलिस-कप्तान से कहा—" I say—this is serious."

"मैं अभी जाता हूँ।" कहकर पुलिस-कप्तान हाथ का ताश डाक्टर साहब को दे बिदा हुए। अर्दली से कहा—कोतवाली के दारोग़ा को अभी डाक-बँगले में भेजो।

दोनों साहब तब डाक-बँगले में पहुँचे। चा-कर ने कहा—"'Tis really very good of you to take so much trouble."

पुलिस-कप्तान ने कहा—'रोज़ रोज़ वन्दे मातरम्' असह-नीय हो उठा है। यह ज़रूर जातीय विद्यालय के छोकरों का काम है।

चा-कर साहब ने कहा—"While we wait for your Daroga, may I offer you a peg."

Thanks, I don't mind.

बोतल, गिलास और सोडावाटर निकाला गया। हवाना चुरुट भी टेबल पर रक्खा गया। दोनों साहब देश की वर्तमान दशा, बंगालियों की बे-अदबी, और गवर्नमेण्ट की शिथिलता के सम्बन्ध में बातें करने लगे।

अब दारोग़ा क़ासिमुल्ला ने आकर सलाम किया।

पुलिस-कप्तान ने पूछा—दारोग़ा, बाज़ार में आज जो दंगा हुआ है, उसकी ख़बर है ?

"हाँ हुज़ूर, अभी ख़बर मिली है।"

"क्या action लिया है ?"

"हुज़ूर, फ़रियादी की तलाश में जमादार को तैनात किया है।"

"फ़रियादी यही है। इत्तला लिख लो।"

"जो हुक्म हुज़ूर"—कहकर दारोग़ा चपरासी को ले बराण्डे पर गया। वहाँ रोशनी का इन्तज़ाम कर इजहार लिखने लगा। चपरासी ने मालिक से जैसा कहा था, दारोग़ा से भी वैसा ही कहा। लिखते लिखते दारोग़ा ने पूछा—कहीं ज़ख़्म है।

साहब के प्रहार से सिर पर जो चोट लगी थी उसी को चपरासी ने दिखा दिया।

यह देख कर चा-कर साहब ने मन में सोचा—"डैम, नेटिव इसी तरह झूठ बोलते हैं।" दारोग़ा ने लिख लिया—फ़रियादी ने सिर पर ज़ख़्म और कपड़े पर ख़ून का दाग़ दिखाया।

इत्तला लिखने का काम पूरा हो जाने पर पुलिस साहब ने हुक्म दिया—"आज रात में ही, जैसे हो सके, असामी गिरफ़्तार करने होंगे। रात में किसी की ज़मानत मन्जूर न

की जाय।" हुक्म देकर और चा-कर से Good night करके पुलिस साहब ने प्रस्थान किया।

दारोग़ा ने चा-कर साहब से कहा—हुजूर, अपने चपरासी को असामी की शिनाख्त करने के लिए छुट्टी देनी होगी।

"All right चपरासी, दारोग़ा के साथ जाओ। असामी दिखला दो।"

चपरासी बोला—हुजूर एक तो बहुत से लड़के थे, और अब रात हो गई है। किस तरह पहचानूँगा?

साहब ने गरज कर कहा—सुअर, नहीं पहचान सकेगा तो हम तुमको डिसमिस करेगा।

"बहुत अच्छा हुजूर"—कह कर चपरासी रवाना हुआ।

चपरासी के साथ दारोग़ा और कहीं भी तलाश करने नहीं गया। वह सीधा जातीय विद्यालय के बोर्डिङ्गहाउस में पहुँचा। एक कमरे में दिया जला कर चार-पाँच लड़के पाठ रट रहे थे। उनमें से तीन को चपरासी ने प्रसन्नतापूर्वक शिनाख्त किया और दारोग़ा ने उनको गिरफ़्तार कर लिया।

इन बालकों में से किसी को कुछ भी ख़बर न थी। तीनों लड़कों ने कहा—दारोग़ा साहब आप हम लोगों को क्यों गिरफ़्तार करते हैं? हम लोगों ने क्या किया है?

"जो किया है वह अदालत में ही मालूम होगा।" कह कर दारोग़ा ने तीन कांस्टेबलों के सुपुर्द कर उन्हें थाने को भेज दिया।

इसके बाद दारोग़ा ने चपरासी को अस्पताल ले जाकर सरकारी डाक्टर को उसका ज़ख्म दिखाया और सर्टिफ़िकेट लिखा लिया। आख़िर को कहा—थाने चलो।

"क्यों ?"

"असामी पहचानने के लिए।"

"असामियों को तो पहचान लिया।"

"नहीं जी—नहीं। लड़कों को अच्छी तरह पहचानकर चले जाना। कल कोई डिप्टी आयेंगे; दूसरे बहुत से लड़कों के बीच उनको खड़ा कर देंगे। उस समय तुमको असामियों की शिनाख़्त करनी होगी। न पहचान सकोगे तो मुक़दमे में फँस जाओगे। चालान न होगा। थाने चलो, उन तीनों को अच्छी तरह पहचान लो।"

"देर होने से साहब नाराज़ न होंगे।"

"तो जाओ साहब से छुट्टी ले आओ।"

चपरासी ने साहब के पास जाकर सब बातें कहीं और छुट्टी माँगी। साहब ने छुट्टी दी और मन ही मन कहा— डैम, नेटिव पुलिस इसी प्रकार dishonest होती है।

दारोग़ा तब बाज़ार से और अन्य स्थान से और भी दो-तीन आदमियों और सौदागरों को गवाही के लिए बुला लाया। पुलिस के प्रताप के मारे उन्होंने जो कुछ देखा था वह भी और जो नहीं देखा था वह भी गवाही में लिखाना

स्वीकार किया। बहुत रात तक थाने में बैठे बैठे तीनों लड़कों को भी पहचान लिया।

चौथा परिच्छेद

इस मुक़दमे की पेशी डिप्टी नगेन्द्र बाबू के इजलास मे होगी।

शाम हो गई है। डिप्टी बाबू कचहरी से लौट कर जल-पान के बाद अन्तःपुर के बराण्डे में आराम कर रहे हैं।

नगेन्द्र बाबू की स्त्री बीस वर्ष की युवती हैं। उनका नाम चारुशीला है।

चारुशीला पति के बग़ल में आकर बैठ गईं। कहने लगीं—आज तुम्हारा मन उदास क्यों है?

नगेन्द्र बाबू ने कहा—नहीं, ऐसी तो कोई बात नहीं है।

किन्तु गृहिणी ने नहीं माना। बताने के लिए ज़िद करने लगीं। अन्त में डिप्टी साहब ने कहा—लड़कोंवाला मामला है। इतने आदमियों के होते हुए मेरे ही गले पड़ा है।

चारुशीला ने कहा—तुम्हारे पास मुक़दमा है? यह तो अच्छा ही हुआ। चलो, मेरी चिन्ता दूर हुई।

"कैसी चिन्ता?"

"यही कि न मालूम मुक़दमा किसको सुपुर्द किया जाय और सिर्फ़ साहब को ख़ुश करने के लिए अविचार कर तीनों

लड़के जेल भेजे जायँ। तुम्हीं मुकदमा सुनोगे, यह सुन कर मैं निश्चिन्त हुई।"

स्त्री के इस सरल विश्वास पर डिप्टी बाबू मन ही मन हँसे। उन्होंने कहा—मामला यदि प्रमाणित हो जायगा तो लड़कों को सज़ा देनी होगी। अविचार करके मैं उनको छोड़ न सकूँगा।

चारुशीला ने कहा—छिः! अविचार क्यों करोगे! यदि सचमुच मुकदमा साबित हो जाय तो—जो वे मेरे सगे लड़के भी होते तो भी—मैं रिहा कर देने के लिए न कहती। किन्तु जैसा सुना गया है, वैसा यदि हो तो लड़कों का कोई दोष नहीं।

"तुमने कहाँ सुना?"

"मैं उस दिन मुंसिफ़ साहब के घर बहूभात के निमन्त्रण में गई थी। वहाँ स्त्रियों ने कहा था कि लड़कों ने चपरासी को राज़ी करके उससे विलायती बिस्कुट का डिब्बा माँग लिया था। माँग करके बिस्कुटों को चकनाचूर किया था। छीना भी नहीं, किसी को मारा पीटा भी नहीं। इसके सिवा जिन तीन लड़कों को पुलिस ने गिरफ़ार किया है वे तो वहाँ थे भी नहीं; उन लड़कों को इस विषय में कुछ मालूम भी नहीं।"

डिप्टी बाबू ने ठण्ढी साँस लेकर कहा—यह सब प्रमाणित हो जाय तब न।

"अच्छी तरह प्रमाणित हो जायगा। बहुत लोगों ने देखा है, कितने ही लोग जानते हैं।"

"साबित हो जाय तो अच्छा ही है।"

"अच्छा, यदि प्रमाणित न हो तो कुछ जुरमाना करके बरी कर देना। लड़के हैं, यदि बिना समझे-बूझे कोई बेजा काम भी कर बैठे हों, तो क्या उनको जेल भेज दोगे, जैसा कि कई जगह हो चुका है!"

किन्तु डिप्टी बाबू की उदासी दूर न हुई। इसी समय अर्दली ने आकर एक चिट्ठी दी। मजिस्ट्रेट ने लिखा था—कल सबेरे ६ बजे डिप्टी साहब उनसे भेंट करें।

दूसरे दिन यथासमय कपड़े पहन कर नगेन्द्र बाबू साहब के बँगले पर हाज़िर हुए। साहब से मिलने के लिए और भी कई आदमी बाहर बराण्डे में एक बेंच पर बैठे इन्तज़ार कर रहे थे। नगेन्द्र बाबू ने अपना कार्ड भेज दिया। एक मिनट में चपरासी ने आकर उनको आफ़िस के कमरे में बिठाया और कहा—"साहब जलपान कर रहे हैं, अभी आते हैं।

साहब ने आकर नगेन्द्र बाबू से हाथ मिलाया और कुरसी देकर कहा—आज-कल टाउन की क्या हालत है?

"मामूली हालत मालूम होती है।"

"स्वदेशीवालों में कोई विशेष उत्तेजना तो नहीं है?"

"जी नहीं, ऐसा तो कुछ मालूम नहीं होता।"

"This Swadeshi is a damned rat नगेन्द्र बाबू स्वदेशी के सम्बन्ध में आपकी क्या राय है ?"

"जी—"

"वास्तविक स्वदेशी—अर्थात् देशी शिल्प की उन्नति के लिए यथार्थ चेष्टा करना बहुत अच्छी बात है। उसके साथ हम सबकी सहानुभूति है। किन्तु यह उपद्रव;—कपड़ा जलाना, यह सब क्या है ?"

नगेन्द्र बाबू ने अपराधी की तरह कहा—यह तो अच्छी बात नहीं।

By the way—वही बिस्कुटवाला मुक़द्दमा तो आपके पास है न।"

"जी हाँ।"

"आह ! छोकरों की हुज्जत तो देखिए। मार-पीट कर ग़रीब चपरासी का सिर फोड़ दिया है। बिस्कुटों को रास्ते में बखेर दिया और उन पर पैशाचिक नाच किया है। जो अभी से इन लड़कों को कठोर शिक्षा न दी जायगी तो बड़े होने पर ये चोर-डकैत हो जायँगे। इनको सख़्त सज़ा होनी चाहिए ताकि दूसरों को नसीहत मिले।"

नगेन्द्र बाबू फ़र्श को ताकते हुए चुप बैठे रहे।

साहब ने कहा—नगेन्द्र बाबू, फ़रीदसिंह कैसी जगह मालूम होती है ? मेरी समझ में तो यहाँ सभी चीज़ें महँगी हैं।

बातचीत का सिलसिला बदल जाने से नगेन्द्र बाबू ख़ुश होकर बोले—जी हाँ, यहाँ सभी चीज़ें महँगी हैं। दूध चार आने सेर है।

"मैं जब भागलपुर में ज्वाइन्ट मजिस्ट्रेट था तब रुपये की छः मुर्ग़ियाँ मिलती थीं। यहाँ रुपये में ढाई तीन से ज़्यादह नहीं मिलतीं। वहाँ आठ रुपये में बावर्ची, बेहरा आदि मिल जाता था। यहाँ पन्द्रह रुपया देना पड़ता है।"

"हाँ साहब, नौकर-चाकर भी यहाँ महँगे हैं। हम लोगों की तनख़्वाहें थोड़ी हैं। किसी तरह इन्तज़ाम नहीं कर सकते।"

"अब आपका कौन सा ग्रेड है?"

"ढाई सौ का।"

"कब से?"

"कोई तीन साल से।"

"तीन—साल—से!—Shame! 'Tis a down-right shame! आपकी सर्विस-बुक देख कर तीन सौ रुपये के ग्रेड की तरक़्क़ी के लिए मैं शीघ्र ही कमिश्नर साहब को लिखूँगा।"

नगेन्द्र बाबू ने अत्यन्त कृतज्ञ होकर साहब को धन्यवाद दिया। अब साहब उठ कर खड़े हुए और "Well Nagendra Babu, I won't detain you longer." कह कर अपना हाथ बढ़ाया।

जाते समय कहते गये—स्वदेशी के सम्बन्ध

का कोई विशेष समाचार मिलते ही मुझे सूचना दीजिएगा। This Swadeshi must be stamped out at any cost."

वेतन-वृद्धि की सम्भावना से उत्फुल्ल होकर नगेन्द्र बाबू ने कहा—हाँ हुज़ूर, मैं अपना काम करूँगा।

बाहर जो लोग साहब से मिलने के लिए बैठे थे, उन पर गर्वित दृष्टि फेंकते हुए नगेन्द्र बाबू गाड़ी में जा बैठे।

पाँचवाँ परिच्छेद

निश्चित तारीख़ को तीनों बालकों का मुक़दमा पेश हुआ। जिस दिन वे गिरफ़्तार किये गये थे उसके दूसरे दिन कई प्रधान वकीलों ने ज़ामिन होकर उनको छुड़ा लिया था। वही लोग अपने ख़र्च से, अपना ही बहुमूल्य समय लगा कर, मुक़दमे की पैरवी कर रहे थे।

चपरासी ने पहले की तरह अपना इजहार दिया। जिरह में असामियों के वकील ने पूछा कि साहब ने बिस्कुट-वाला टीन का डिब्बा मार कर तुम्हारा सिर फोड़ दिया था या नहीं? किन्तु उसने क़बूल नहीं किया। कहा कि लड़कों ने ही थप्पड़ और घूँसों से यह घाव कर दिया है।

सड़क पर बिस्कुट तोड़ने के सम्बन्ध में बाज़ार के कई आदमियों ने, गवाही दी परन्तु असामियों की शिनाख़्त कोई

भी न कर सका। बिस्कुटों का टूटा-फूटा डिब्बा और धूल मिला बिस्कुटों का चूर्ण पुलिस ने दिखाया।

सौदागर ने असामियों की शिनाख़्त करके कहा कि "ये और कई और भी लड़के चपरासी के साथ मेरी दूकान पर बिस्कुट लौटाने आये थे। लड़कों के चले जाने पर, कुछ ही देर में, दूर पर 'वन्दे मातरम्' की ध्वनि बार बार सुनाई पड़ी थी।" जिरह में कहा कि "स्कूलों के लड़कों ने मेरी दूकान के सामने पिकेट करके मेरी बहुत हानि की है" किन्तु इस विषय में उसने लड़कों पर अपना क्रोध या शत्रुता नहीं बतलाई।

अस्पताल के डाक्टर ने कहा—"सिर में ज़ख़्म किसी तेज़ धारवाली चीज़ से हुआ है।" जिरह में कहा—घूँसे या थप्पड़ से ऐसा घाव होना सम्भव नहीं।

स्वदेशी दूकान के कर्मचारियों ने आकर सच्ची घटना का विवरण कह सुनाया और यह भी कहा कि जो विद्यार्थी दूकान में आये थे उनमें से यहाँ एक भी नहीं।

एक डाक्टर ने कहा—मैं उसी रास्ते से जा रहा था। मैंने चपरासी को राज़ी-ख़ुशी से विलायती बिस्कुटों का डिब्बा लड़कों को देते देखा है। मैंने देखा है कि देशी बिस्कुट ख़रीदने के लिए यह लड़कों के साथ स्वदेशी दूकान पर गया था। पुलिस की जिरह में डाक्टर बाबू ने स्वीकार किया कि "स्वदेशी की दूकान में मेरा दो सौ रुपये का शेयर है और मैं स्वयं पक्का 'स्वदेशी' हूँ।"

डाक-बँगले के ख़ानसामा ने आकर गवाही दी। उसने बताया कि चा-कर साहब ने चपरासी को टीन का डिब्बा मारा था, उसी की चोट से सिर पर ज़ख़्म हो गया है। जब चपरासी बाज़ार से आया था, तब उसको ज़ख़्म न था। पुलिस की जिरह में ख़ानसामा ने स्वीकार किया कि बाबू लोग कभी कभी नौकर भेज कर मुर्ग़ी का रोस्ट, काटलेट आदि की फ़रमाइश करते हैं। सन्ध्या के बाद ज़रा अँधेरा होते ही नौकर आकर सब खाद्य ले जाते हैं। इससे हर महीने उसे कुछ प्राप्ति हो जाती है।

मुक़दमा पूरा हो गया। हुक्म हुआ कि एक सप्ताह के बाद फ़ैसला सुनाया जायगा।

इस बीच में देखा कि डिप्टी साहब दो तीन दिन सज-धजकर मजिस्ट्रेट को सलाम करने गये। लोग कानाफ़ूसी करने लगे।

फ़ैसले के दिन अदालत में ठसाठस भीड़ हुई। अनेक स्कूलों के लड़के आये थे। और और लोग भी थे।

फ़ैसला सुनाया गया। असामी दोषी माने गये हैं। प्रत्येक को तीन तीन महीने की कड़ी क़ैद और पचास पचास रुपये जुर्माने की सज़ा सुनाई गई।

फ़ैसला सुनकर लड़कों ने ज़ोर से 'वन्दे मातरम्' का घोष किया। पुलिस ने बड़े प्रयत्न से शोर-ग़ुल बन्द करके बालकों को अदालत से हटा दिया।

असामियों के प्रधान वकील कालीकान्त बाबू ने फ़ैसला

माँग कर पढ़ा। अदालत ने लिखा है कि वादी के गवाहों की बहुत सी बातों में अन्तर है। किन्तु वे सब minor discrepancies हैं—उनसे यही प्रमाणित होता है कि गवाह सिखलाये नहीं गये हैं। यह सच है कि किसी किसी गवाह ने कहा है कि झगड़े के वक़्त पन्द्रह-बीस लड़के थे, और किसी किसी ने उनकी संख्या पचास-साठ तक बतलाई है, किन्तु किसी ने भी घटनास्थल पर गिनती नहीं की है। अनुमान में भूल होना संभव है। वादी का बयान है कि लड़कों ने थप्पड़ घूँसे मार कर उसका सिर फोड़ दिया है, किन्तु डाक्टर ने किसी तेज़ धारवाली चीज़ से घाव का होना माना है; थप्पड़-घूँसों से घाव होना वे नहीं मानते, इस पर असामियों के वकील ने बहुत ज़ोर देकर मामले को झूठ बतलाया है। किन्तु मेरे ख़याल में वादी उस समय बेतरह मूढ़ और भीत हो गया था तथा उसे यह याद रखना असंभव हो गया कि बालकों ने उसे किस तरह मारा। सफ़ाई के गवाहों की सारी बातें निःसन्देह झूठी हैं। सभी गवाह स्वदेशी-दल के हैं। वकील ने कहा है कि डाक-बँगले का ख़ानसामा चश्मदीद गवाह है, उसकी बातें झूँठ नहीं हो सकतीं। किन्तु जिरह से मालूम हुआ कि ख़ानसामा वकील-बाबुओं का विशेष अनुगृहीत है। वह बारहों महीने के ख़रीदार को नाराज़ कर आसाम से आये हुए साहब का पक्ष नहीं ले सकता। इत्यादि।

वकील ने फ़ैसले की नक़ल लेकर जज के कोर्ट में अपील दायर की और ज़मानत की आज्ञा प्राप्त कर ली।

यह ख़बर पाकर लड़कों ने बड़े ज़ोर से 'वन्दे मातरम्' की आवाज़ लगाई। उन्होंने एक गाड़ी लाकर उस पर तीनों बालकों को बिठाया और घोड़े को खोल कर बस्ती में स्वयं गाड़ी खींची।

छठा परिच्छेद

उस दिन डिप्टी साहब मुँह लटकाये घर पहुँचे। खूनी जैसे खून करके आया हो। डिप्टी साहब झेंपे हुए थे। चेहरा फीका पड़ रहा था।

घर में आकर देखा कि चारुशीला बराण्डे के कोने में चुपचाप सुस्त बैठी है। डिप्टी साहब ने इस उदासी का कारण समझ लिया।

कपड़े बदल कर वे स्त्री के पास आये और पूछने लगे—क्योंजी, इस तरह सुस्त क्यों हो? कैसी तबीयत है?

चारुशीला ने कुछ जवाब न दिया।

"क्या हुआ है?"

"सिर दुखता है।"

"सिर दुखता है! कब से? लाओ देखें तो सही, रूमाल में ज़रा ओडिकलोन भिगो कर सिर से बाँध दें।"

चारुशीला ने स्वामी से आँखें चुरा कर कहा—रहने दो, कोई ज़रूरत नहीं।

रंग-ढंग देख कर नगेन्द्र बाबू वहाँ से खसक गये।

दासी ने उनके लिए, चाय और जल-पान की सामग्री ला दी। और दिन गृहिणी चारुशीला इस समय उपस्थित रहती थीं, किन्तु आज वे नहीं आईं। नगेन्द्र बाबू जलपान की चीज़ें खाने लगे, पर मानो वे गले के नीचे न उतरती थीं। छाती के भीतर मानो किसी ने पत्थर लाद दिया हो। खाने की चीज़ें छोड़ कर उन्होंने केवल चाय-पान किया।

इसके बाद देर तक धूम-पान किया। अन्त में उठ कर, अपराधी की तरह, फिर स्त्री के पास आये। चारुशीला अभी तक वैसी ही सुस्त बैठी थीं।

डिप्टी बाबू ने धीरे से पूछा—दर्द कुछ हलका हुआ?

चारुशीला ने इशारे से प्रकट किया—नहीं।

नगेन्द्र बाबू ने चारुशीला का हाथ पकड़ कर कहा—आओ। आज एक अच्छी ख़बर सुनाने के लिए बड़ी ख़ुशी से आया हूँ और यहाँ देखा कि तुम नाराज़ हुई बैठी हो।

स्वामी के अत्यन्त आग्रह से, चारुशीला खड़ी होगईं। नगेन्द्र बाबू ने कहा—आज साहब ने पचास रुपया वेतन बढ़ाने के लिए कमिश्नर को मेरी सिफ़ारिश लिख भेजी है।

यह सुनते ही चारुशीला की आँखों में आँसू छलछला आये।

"यह क्या! आँखों में आँसू क्यों?" कह कर नगेन्द्र बाबू ने एक हाथ से स्त्री का हाथ पकड़ा और दूसरे हाथ से आँसू पोछने की चेष्टा की।

चारुशीला ने हाथ छुड़ा कर कहा—मुझे माफ़ करो। आज मेरे पास मत आओ, मुझसे कोई बात मत कहो। यह कह कर वे चली गईं।

नगेन्द्र बाबू बाहर बरामदे में आकर बैठे। एक बार और तमाखू भर लाने के लिए नौकर को हुक्म दिया। तमाखू पीते पीते उनकी मानसिक अशान्ति और भी बढ़ गई। सोचा कि जिस दिन नौकर हुआ था उस दिन कैसा था और आज क्या से क्या हो गया हूँ। आज चारुशीला ने पास आने और बातें करने को मना कर दिया है। आज मैं पतित हूँ, कलंकित हूँ। न्यायकर्ता के पवित्र आसन पर बैठ कर,—अच्छी तरह सोच-विचार करके—आज मैंने अविचार किया है। क्या पहले पहल आज ही? किसके लिए? केवल पापी पेट के लिए। बहुत वर्षों की शिक्षा-साधना के फल, धर्म-बुद्धि, विवेक और कर्तव्यनिष्ठा, सबको—केवल पेट के लिए—डुबो दिया। छिः! छिः! पूर्व काल मे अशिक्षित डिप्टी लोग घूस लेते थे। किन्तु वे क्षन्तव्य थे। सुशिक्षाभिमानी नगेन्द्र बाबू ने गवर्नमेण्ट से

तरक्की-रूपी घूस ली है। उनके लिए क्षमा का क्या उपाय है ?

ये बातें सोच सोच कर डिप्टी साहब अनुताप से दग्ध होने लगे। अन्त में अधीर हो उठे। इससे चादर लेकर घूमने के लिए बाहर निकले। अँधेरी अँधेरी सड़कें खोज कर उन्हीं पर कुछ देर तक टहलते रहे।

सारी रात अच्छी तरह नींद न आई।

दूसरे दिन तातील थी। सवेरे उठकर नौकर से कहा—आज देहात जाऊँगा। सवेरे ही भोजन करके तैयार हो गये।

यह खबर पाकर चारुशीला आईं। स्वामी के मुँह की ओर देख कर वे उनके मन की अवस्था को समझ गईं। अब सती का मन करुणा से पिघल गया। वे पास आकर बोलीं—कब तक लौटोगे ?

"कल सवेरे लौट आऊँगा।"

"देरी न करना।"

"क्यों, देरी होने से तुम्हें क्या !"

स्वामी के इस अभिमान वाक्य से चारुशीला का कोमल हृदय व्यथित हुआ। वे स्वामी की छाती में मुँह छिपा कर चुपचाप रोने लगीं।

नगेन्द्र बाबू ने कहा—अरे यह क्या—चुप हो जाओ—कोई आजायगा।

किन्तु चारुशीला का दुःख दूना बढ़ गया।

नगेन्द्र बाबू ने कहा—तुम्हारा यह दुःख मुझसे देखा नहीं जाता। जो होना था सो तो हो चुका। अब क्या करने से तुम सुखी होगी, बतलाओ।

चारुशीला ने स्वामी की छाती से मुँह हटाकर कहा—मुझे एक भिक्षा दोगे ?

"क्या ?"

"यह नौकरी छोड़ दो। जिस नौकरी के लिए अधर्म करना पड़ता है, उस नौकरी की क्या ज़रूरत ? मैं तुम्हारे तीन सौ रुपया नहीं चाहती। मुझे यह धन-दौलत, सोना-चाँदी भी न चाहिए। यदि तुम मास्टरी करके पचास रुपया भी ला दोगे तो मैं उतने में ही गृहस्थी चला लूँगी।"

इस पर डिप्टी साहब एक क्षण तक सोच कर बोले—'अच्छी बात है। यही सही।'

बाहर गाड़ी तैयार खड़ी थी। ट्रेन का वक़्त अनक़रीब था। "अच्छा, ऐसा ही होगा। तुम रोओ मत।" कह कर डिप्टी साहब पत्नी को स्नेह के साथ चूम कर बाहर आये।

× × × ×

दूसरे दिन चपरासी डाक ले आया। डिप्टी साहब अभी तक देहात से न लौटे थे। चारुशीला ने देखा कि कई चिट्ठियों के सिवा अख़बारों का एक ढेर भी है। उनके यहाँ इतने अख़बार कभी न आये थे। एक अख़बार को खोलकर देखा, "सन्ध्या" पत्रिका है। फ़रीदसिंह में 'बुद्धूराम की लीला'

शीर्षक एक प्रबन्ध उसमें छपा है। उसके चारों ओर लाल स्याही की लकीरें हैं। लड़कों के मुकदमे का उल्लेख करके "सन्ध्या" ने नगेंद्र बाबू को खूब गालियाँ सुनाई हैं। सारा प्रबन्ध पढ़ने का चारुशीला को धैर्य्य न रहा। एक और पत्रिका खोलकर देखी। वह भी उसी तारीख की "सन्ध्या" थी। इसका प्रबन्ध लाल पेंसिल की लकीरों से अङ्कित है। इस प्रकार गिन कर देखा कि भिन्न भिन्न पैकेटों में भिन्न भिन्न व्यक्तियों ने उसी तारीख की "सन्ध्या" कलकत्ते से नगेंद्र बाबू के नाम भेजी है। ऐसे पैकेट सत्रह आये हैं। पति की नज़रों से बचाने के लिए चारुशीला ने उन पैकेटों को आग में फूँक दिया।

डिप्टी साहब सवेरे ९ बजे लौटे और जल्दी जल्दी खा-पी कर कचहरी गये।

चारुशीला ने लड़के से पूछा—आज स्कूल नहीं गया?

"नहीं; आज न जाऊँगा।"

"क्यों, क्या छुट्टी है?"

"नहीं।"

"तो फिर?"

"स्कूल जाने से लड़के हमें—" इसके आगे वह कह न सका। उसकी आँखों से आँसू बहने लगे। इस बीच में ही अन्य लड़कों ने घाट-बाट में उसका अपमान किया।

चारुशीला समझ गईं। उन्होंने कहा—अच्छा, मत जाओ। मेरा भी कुछ काम है।

दोपहर को गाड़ी मँगाकर पुत्र के साथ वे बाहर गईं। कालीकान्त बाबू के घर जाकर उनकी स्त्री से उन्होंने भेंट की।

उस दिन वहाँ और भी दो तीन वकीलों की स्त्रियाँ एकत्र हुई थीं। चारुशीला को देखकर अन्य महिलाओं ने उनसे बात तक न की, वे मुँह फुलाये बैठी रहीं। कालीकान्त बाबू की स्त्री ने चारुशीला को आव-भगत के साथ बिठाया। किन्तु वह अभ्यर्थना पहले बार जैसी आदर-भरी न थी।

चारुशीला ने बैठकर इधर-उधर की बातों के बाद लड़कों के मुक़दमे की चर्चा छेड़ी।

एक स्त्री ने कहा—यह तो बड़े ही खेद की बात हो गई है।

कालीकान्त बाबू की स्त्री बोलीं—वे कहते थे। अपील मे जीत जायँगे।

एक ने कहा—यदि स्वदेशी मुक़दमे के कारण साहब लोग अविचार करें?

चारुशीला ने पूछा—अपील की पेशी कब होगी?

"ठीक नहीं कह सकती। पर शीघ्र ही होगी।"

"लड़के कलकत्ते से किसी अच्छे बारिस्टर को बुलवा लें।"

"इसके लिए बहुत सा रुपया चाहिए। इतना रुपया लड़के कहाँ पायँगे? अब तो यही पैरवी करेंगे"

चारुशीला ने नीचा सिर करके कहा—रुपया मैं दे दूँगी।

इस बात से सबकी सब ज़रा चकरा गईं। कालीकान्त बाबू की स्त्री ने पूछा—आप क्यों देंगी ?

चारुशीला के मन में जो था, उसे उन्होंने प्रकट नहीं किया। प्रकट करने से पति की निन्दा जैसे होती। किन्तु उनकी आँखों में आँसू भर आये। उन्होंने कहा—"आप सबने इस मुक़दमे में, लड़कों की सहायता में बहुत कुछ ख़र्च किया है, बहुत कुछ त्याग स्वीकार किया है। मुझे क्या इसके लिए कुछ भी करने का अधिकार नहीं ? मैं एक जोड़ी कंगन और बॉक लाई हूँ। इनके बेचने से हज़ार रुपये से ऊपर मिल जायँगे। इस रुपये से लड़कों की अपील के दिन कलकत्ते से किसी बड़े बारिस्टर को बुलाने का बन्दोबस्त कर लीजिए। ऐसा उपाय कीजिए, जिससे मेरे मन को कुछ शान्ति मिले। यह कहते कहते चारुशीला के गालों पर से आँसुओं की धार बह चली।

कालीकान्त बाबू की स्त्री ने गहने लेकर कहा—अच्छा, वे घर आवें तो उनसे कहूँगी।

इस घटना से अन्य महिलाओं का हृदय भी पसीज उठा। वे चारुशीला से हँस हँस कर बातें करने लगीं।

थोड़ी देर में चारुशीला अपने घर लौट आईं।

सातवाँ परिच्छेद

लड़कों की अपील हो गई। कलकत्ते से एक नामी बारिस्टर बुलाये गये थे, किन्तु सब टायँ टायँ फिस हुआ। जज साहब ने अपील डिसमिस कर दी। लड़कों को जेल हो गया। हाईकोर्ट में अपील करने का इन्तज़ाम हो रहा है।

इधर नगेन्द्र बाबू की स्त्री के गहने बेंच कर, लड़कों की सहायता करने की ख़बर शहर में फैल गई। मजिस्ट्रेट के कानों में भी यह बात पड़ी। जब से उन्होंने यह ख़बर सुनी है तब से नगेन्द्र बाबू के साथ कड़ा बर्ताव करते हैं। एक दिन किसी काम से मजिस्ट्रेट साहब ने नगेन्द्र बाबू को ख़ास कमरे में बुला भेजा। परन्तु पहले की तरह उनसे बैठने के लिए नहीं कहा। नगेन्द्र बाबू को मुंशी की तरह खड़े रह कर साहब को इस बार काम समझा देना पड़ा।

कई दिन के बाद, नगेन्द्र बाबू का एक फ़ैसला जज साहब ने बदल दिया। इस उपलक्ष में, नगेन्द्र बाबू का दोष न होने पर भी; साहब ने भूल दिखा कर अहलकारों के आगे ही नगेन्द्र बाबू को अभद्रतापूर्वक कड़ी कड़ी बातें कहीं।

इधर नगेन्द्र बाबू काम छोड़ने के लिए तैयार ही थे। अब वे कलकत्ते जा, क़ानून की परीक्षा दे, वकालत करेंगे। इस विषय में स्वामी और स्त्री से कभी कभी बातें होती हैं। यह स्थिर हो चुका है कि एक आध महीने के भीतर ही नौकरी छोड़ देंगे।

जज के यहाँ से लड़कों की अपील ख़ारिज होने के दो-एक दिन बाद मजिस्ट्रेट ने नगेन्द्र बाबू को अपने बँगले पर बुला भेजा। पहले वे अपनी इच्छा से ही कभी कभी मजिस्ट्रेट को सलाम करने जाते थे; पर अब नहीं जाते।

उस दिन सवेरे पोशाक पहन गाड़ी पर चढ़ कर नगेन्द्र बाबू साहब के बंगले पर जा पहुँचे। उन्होंने अपना कार्ड भेज दिया। मजिस्ट्रेट का नियम था कि हाकिम या किसी बड़े ज़मींदार के आने पर दफ़्र के कमरे में उनको बैठने का हुक्म देते थे। साधारण लोगों को बरामदे में बेंच पर बैठना पड़ता था। आज चपरासी ने वापस आकर उनको दफ़्र के कमरे में न ले जा उसी बेंच पर बैठने के लिए कहा।

कई साधारण मनुष्य बेंच पर पहले से ही बैठे हुए थे। उनके साथ एक ही बेंच पर नगेन्द्र बाबू नहीं बैठे, वे वहीं पर घूमने लगे। वे समझ गये कि साहब जान-बूझ कर हमारा अपमान कर रहा है।

उन्हें टहलते थोड़ी ही देर हुई थी कि भीतर से एक चपरासी ने दौड़ते हुए आकर कहा—बाबू जूते की आवाज़ मत कीजिए, साहब ग़ुस्सा होते हैं। बेंच पर बैठिए।

होंठ चबा कर नगेन्द्र बाबू बेंच पर बैठ गये। रूमाल निकाल कर वे बार बार माथे का पसीना पोंछने लगे। क्रोध से उनका गला रुँधने लगा।

छोटी हाजिरी खाकर साहब कमरे में आये। बुला भेजा—

नगेन्द्र बाबू को नहीं जो लोग पहले आये थे वे एक एक कर बुलाये गये। जो पीछे आये थे उनका भी बुलावा हुआ। अन्त में नगेन्द्र बाबू बेंच पर अकेले रह गये।

यह समय उन्होंने किस तरह बिताया यह वे या उनके इष्ट-देवता ही जानें। इस समय नगेन्द्र बाबू ने दाँत पीसते हुए प्रतिज्ञा की कि नौकरी छोड़ देंगे—एक महीने के भीतर नहीं,—आज ही।

अन्त में नगेन्द्र बाबू का बुलावा हुआ। क्रोध से, मतवाले की तरह हिलते-डोलते, उन्होंने साहब के कमरे के भीतर पैर रक्खा।

साहब हमेशा मुलाक़ात के वक्त इनसे उठ कर हाथ मिलाते थे। किन्तु आज चुपचाप बैठे रहे।

"गुड मार्निंग सर।"

"गुड मार्निंग बाबू।"

बाबू! पहले साहब नगेन्द्र बाबू कहते थे। साहब को अच्छी तरह मालूम था कि सिर्फ़ बाबू कहने से उच्च पदस्थ बंगाली अपना अपमान समझते हैं।

नगेन्द्र बाबू ने इस पर भी ध्यान किया। किन्तु उनके मन ने अपना कर्तव्य स्थिर कर लिया था, इसलिए इस चोट से कोई नया दर्द पैदा नहीं हुआ।

साहब ने मुँह में सिगरेट दबाये हुए कहा—शहर मे आज-कल स्वदेशी की क्या ख़बर है?

नगेन्द्र बाबू ने कहा—अच्छी है।

"सुनकर मुझे ख़ुशी हुई। बिस्कुटवाले मुक़दमे में कठिन दंड देने का यह फल है।"

नगेन्द्र बाबू मन ही मन ज़रा मुसकराये। उन्होंने कहा—मालूम होता है, आपने मेरी बात का कुछ और ही अर्थ समझ लिया है। 'अच्छी है' शब्द स्वदेशी के लिए है। सरकार के लिए नहीं। इस मुक़दमे के बाद से लोगों का स्वदेशीपन दृढ़ हो गया है।

साहब ज़रा चकराये और नगेन्द्र बाबू के मुँह की ओर देखने लगे। उन्होंने कहा—तो 'अच्छी है' क्यों कहा? आप भी तो स्वदेशी के पक्ष में नहीं हो गये?

नगेन्द्र बाबू ने कहा—जब से स्वदेशी का आन्दोलन हो रहा है तब से आज तक मेरे घर में एक पैसे की भी विलायती चीज़ नहीं आई।

साहब का चेहरा लाल पड़ गया। उन्हें मालूम था कि बहुत से सरकारी नौकर छिपे छिपे स्वदेशी के भक्त हैं, पर साहब के सामने ऐसी जुरत किसी ने भी न की थी। उन्होंने समझा कि नगेन्द्र बाबू हाल के अपमान का बदला ले रहे हैं। 'जो गुड़ दीन्हें ही मरे तो माहुर काहे देय।' की नीति से साहब ने कहा—"हाँ मैंने सुना है कि पुरुषों की अपेक्षा बंगाली स्त्रियाँ स्वदेशी की अधिक भक्त हैं।" यह कह कर उन्होंने मुसकुराहट का आभास दिखाया। फिर बोले—

"By the way सुना है कि शायद आपकी स्त्री ने हज़ार रुपया देकर लड़कों की सहायता की थी। क्या यह सच है?"

"जी हाँ, बिलकुल सच। हाईकोर्ट में मुक़दमा दायर करने के लिए भी मेरी स्त्री खर्च देने को तैयार है।"

अब साहब का रहा सहा धैर्य जाता रहा। फिर उनका चेहरा सुर्ख़ हो गया। उन्होंने कहा—यह क्या सरकार के प्रति विरुद्धाचरण नहीं है?

नगेन्द्र बाबू ने अत्यन्त गंभीरभाव से कहा—हो सकता है, किन्तु ईश्वर को धन्यवाद है कि मेरी स्त्री सरकार की नौकर नहीं।

क्रोध के साथ विस्मय का भाव भी साहब के मन में जमने लगा। उन्होंने इतने दिन से सरकारी नौकरी की है पर बंगाली के मुँह से ऐसी बात तो कभी सुनी नहीं। साहब समझ गये कि आज नगेन्द्र बाबू मेरा अपमान करने के लिए तैयार हैं। अच्छा, उसकी अमोघ ओषधि भी साहब के पास है। उसका प्रयोग करने पर बंगाली झुककर अभी माफ़ी माँगेगा।

यह सोचकर उन्होंने कहा—"छोड़िए इस पचड़े को। आज आपको जिस लिए बुलाया है, वह बात सुनिए। आज-कल आपके कामों में बहुत सुस्ती देखी जाती है। आप यदि सावधान न होंगे तो आपकी तरक्क़ी का सिफ़ारिशी पत्र भी मुझे वापस कर लेना पड़ेगा; और इतने से काम न चला तो लाचार हो आपको डिग्रेड भी करना पड़े।

यह कह कर साहब ने नगेन्द्र बाबू के चेहरे पर इसलिए तेज़ निगाह डाली कि देखें, दवा का असर हुआ या नहीं। बाबू का मुँह डर से ज़रूर ही सूख जायगा और वे क्षमा पाने के लिए अकुला उठेंगे।

किन्तु यह कुछ न हुआ। नगेन्द्र बाबू के मुख पर, धीरे धीरे, किञ्चित् घृणामिश्रित हँसी की रेखा दिखाई पड़ी। उन्होंने कहा—यह तो आप खुशी से कर सकते हैं। क्योंकि इससे मेरी कोई हानि न होगी।

साहब ने अकचका कर पूछा—इसका मतलब?

"मैंने इस्तीफ़ा देने का निश्चय कर लिया है। आज ही आफ़िस में आपको मेरा इस्तीफ़ा मिलेगा। यदि एक महीने में मुझे काम से बरी कर देने की आप चेष्टा करेंगे तो बड़ी कृपा होगी।"

साहब मानों आकाश से गिर पड़े। बंगाली! बंगाली होकर इतनी बड़ी नौकरी एक बात पर ही छोड़ने को तैयार है!

नगेन्द्र बाबू ने जेब से घड़ी निकाल कर देखा और खड़े हो गये। कहा—मैं आपका अधिक समय नष्ट नहीं करना चाहता। गुड मार्निंग।

साहब ने अन्यमनस्क भाव से खड़े होकर गुड मार्निंग कहा।

एक महीना होगया। आज नगेन्द्र बाबू की नौकरी का आख़िरी दिन है। शाम को देखा कि उनके इजलास के बाहर मैदान में स्कूल के लड़कों का जमघट है। बहुतों के हाथ में 'वन्दे मातरम्' अंकित ध्वजा है।

नगेन्द्र बाबू के बाहर निकलते ही लड़कों ने उनको फूलों की माला पहनाई। वे लोग एक फ़िटन गाड़ी लाये थे। उस पर बैठने के लिए नगेन्द्र बाबू से अनुरोध किया गया।

किन्तु नगेन्द्र बाबू राज़ी न हुए।

लड़के ज़िद करने लगे। कहने लगे कि घोड़े खोल कर आज हम आपकी गाड़ी खींचेंगे।

रास्ते से एक ग्रामवासी और एक नगरवासी जा रहे थे। दोनों ही निरक्षर थे। कारण न समझ कर देहाती ने पूछा—क्या बात है ? क्या बाबू का ब्याह है ?

शहरवाले ने जवाब दिया—मुझे अच्छा लगता है। बाबू को जेल हो गया था। आज रिहा हुए हैं।

जेल से बाबुओं का छुटकारा होने पर आजकल ऐसा ही किया जाता है।

इधर लड़कों ने नगेन्द्र बाबू की गाड़ी खींचने के लिए बहुत ज़िद की, किन्तु नगेन्द्र बाबू किसी भी तरह राज़ी न हुए। नित्य की तरह पैदल ही घर लौटे। दो महीने के वियोग के बाद आज स्त्री-पुरुष का पुनः सम्मिलन हुआ।

जहाँ के तहाँ

पहला परिच्छेद

एकादशी-तत्त्व

बीस वर्ष पहले, कलकत्ते के किसी विद्यार्थी-गृह में रामनिधि नामक एक युवक रहता और कालेज में पढ़ता था। वह विद्यार्थी होने पर भी वयस्क है। उसकी अवस्था पच्चीस वर्ष की हो चुकी है। घर उसका वीरभूमि ज़िले में है। उसकी बातचीत से राढ़ीपन टपकता है। इस कारण परोक्ष में विद्यार्थी-गृह के लड़के उसका उल्लेख कर नाना प्रकार की हँसी-मज़ाक किया करते हैं।

रामनिधि बाबू बड़े शौकीन हैं। पिता बहुत सी सम्पत्ति छोड़ गये हैं। उसके मालिक यही हैं। विद्यार्थी-गृह के एक कमरे में वे अकेले ही रहते हैं। इस कारण अधिक भाड़ा देते हैं। कमरे के फ़र्श पर आगरे की दरी बिछी रहती है। नेवार से बुने हुए सुन्दर पलँग पर सादी-साफ़ जालीदार मसहरी लगी है। एक ओर मेज़ रक्खी है। उसके चारों ओर

कुर्सियाँ पड़ी हैं। पास ही रैक पर जिल्द बँधी चटकीली पाठ्य पुस्तकें रक्खी हैं। दूसरी ओर तिपाई पर एक बड़ा सा शीशा रक्खा है। आस-पास नाना प्रकार की सुगंधित वस्तुएँ पोमाड, पाउडर आदि सुशोभित हैं।

रविवार का दिन है। घर बहुत कुछ खाली हो गया है। जिन विद्यार्थियों का घर पास है, अथवा ससुराल पास है, वे सब वहाँ चले गये हैं। सोमवार को लौटेंगे। केवल रामनिधि और दो और विद्यार्थी रह गये हैं।

ये दोनों विद्यार्थी शाम के वक्त रामनिधि के कमरे में बैठ कर धर्म के सम्बन्ध में वाद-विवाद कर रहे हैं। जिस समय की बात कह रहा हूँ, उस समय हिन्दू-धर्म का पुनरुत्थान आरम्भ हुआ था। विगत युग के कालेज के छात्रों की तरह इस समय के विद्यार्थी म्लेच्छाचारी नहीं। मुसलमानों की दूकान की चाय, काटलेट, सीकचा-कबाब तो दूर रहा—पावरोटी, और बिस्कुट तक उनके लिए वर्जित है। ब्राह्मण विद्यार्थी सन्ध्या-पूजा किये बिना जल तक ग्रहण नहीं करते। वंकिम बाबू की "देवी चौधरानी" हाल में ही प्रकाशित हुई है। बहुतों ने गीता पढ़ना आरम्भ किया है। सर्वत्र हरि-नाम का उच्चारण होता है। स्टेज पर भी खास खास जाति की स्त्रियों ने श्रीकृष्ण और गौरांगदेव बन कर नृत्य करना आरंभ किया है।

दोनों विद्यार्थी एक ओर हैं—और रामनिधि एक ओर।

रामनिधि बाबू का मत कुछ कुछ क्रिस्तानों की तरह है। छात्रालय के मैनेजर के हुक्म से प्रति एकादशी को भात नहीं मिलता। विद्यार्थी सवेरे कुछ फल-मूल खा कर कालेज चले जाते, और रात में, लूची, खीर, मोहनभोग आदि का बन्दोबस्त होता है। रामनिधि बाबू रात में तो सब के साथ एकादशी कर लेते हैं, पर दिन में नहीं करते। दिन में दूकान से पावरोटी, हंस के अण्डे का कलिया, भूनी हुई मछली आदि लाकर खाते हैं। इससे विद्यार्थी-गृहवाले सब लोग उनसे नाराज़ रहते हैं। कोई हँसी-मज़ाक करता है—कोई गम्भीरता-पूर्वक उपदेश देता है।

शरत् बाबू ने कहा—रामनिधि बाबू, जो जिसके जी में आवे, कहे। किन्तु हमारा हिन्दू-धर्म एक-दम भेड़ियाधसान नहीं है। इसमें शुरू से आखीर तक सायंस है; उठने में सायंस है—बैठने में सायंस है—और सोने में सायंस है। आप हम लोगों की तरह कुछ दिन तक एकादशी कर देखिए कि स्वास्थ्य कैसा सुधरता है।

रामनिधि ने अविश्वास की हँसी हँस कर कहा—अच्छा बतलाओ एकादशी का व्रत करने में कितना सायंस है।

विद्यार्थी-गृह के मैनेजर कार्तिक बाबू ने कहा—"कितना सायंस है?—सोलहो आने सायंस है—अमावस्या-पूर्णिमा को मनुष्य की तबीअत ख़राब हो जाती है, हाथ-पाँव टूटते हैं, वात के रोगी को वात-वृद्धि होती है—ज्वर

आजाता है,—यह सब आप मानते हैं न? या यह भी नहीं मानते ?

"मानता हूँ।"

"ऐसा क्यों होता है ?"

"मालूम नहीं।"

"शरीर रसस्थ हो जाता है। उसी रस को सुखाने के लिए एकादशी का व्रत करने की व्यवस्था है।"

रासनिधि ने कहा—अच्छा, इस कारण तो अमावस्या-पूर्णिमा को ही उपवास करना चाहिए—एकादशी को क्यों ?

कार्तिक बाबू बोले—इसमें गणितशास्त्र-सम्बन्धी एक गूढ़ बात है। देखिए, चन्द्रमा एक महीने में पृथिवी की परिक्रमा करता है। करता है न ?

"जी हाँ।"

"एक बार की परिक्रमा में तीन सौ साठ डिग्रियाँ हुईं। ठीक है न ?"

"जी हाँ।"

"एक पक्ष में हुईं एक सौ अस्सी डिग्रियाँ। प्रतिपद् से एकादशी तक हुआ उसका दो तृतीयांश। एकादशी से पूर्णिमा तक हुआ एक तृतीयांश। क्यों न ?"

"बहुत ठीक है।"

"एक सौ अस्सी डिग्री का एक तृतीयांश हुआ साठ डिग्री। अच्छा एक समत्रिभुज का प्रत्येक कोण कितनी डिग्री का होता है ?"

रामनिधि ने कहा—साठ डिग्री का।

कार्तिक बाबू गर्व के साथ बोले—यह देखिए इसी कारण एकादशी के दिन उपवास करने की व्यवस्था है। साठ डिग्री (equilateral triangle) समत्रिभुज—शरीर के सब रस को (equilibrium) समान करने के लिए एकादशी को उपवास करने की व्यवस्था ऋषि-मुनियों ने की है।

शरत् बाबू बोले—और आपको यह भी ख़याल करना चाहिए कि जिन्होंने रामायण, महाभारत, गीता आदि की रचना की है,—वेद, वेदान्त, उपनिषद् के जो रचयिता हैं, वे नाहक आपको ठग कर दुःख पहुँचाने के लिए एकादशी का उपवास करने की विधि क्यों दे जाते? आपके साथ उनकी क्या शत्रुता थी?

रामनिधि थोड़ी देर तक अज्ञान की तरह बैठे रहे। आख़िर को पूछा—अच्छा कार्तिक बाबू, यह एकादशी और साठ डिग्री की जो बात आपने कही वह किसी शास्त्र में पढ़ी है या आपकी मनगढ़न्त है?

कार्तिक बाबू ने कहा—न मैंने शास्त्र में पढ़ी है और न मनगढ़न्त है। हिसाब करके निकाला है। ज्यामिति, त्रिकोणमिति क्या केवल परीक्षा पास करने के लिए ही पढ़ते हैं, जनाब?

रामनिधि ने कहा—शरीर के रस को सुखाने की ही अगर ज़रूरत है, तो क्या फल-मूल खाने से ही रस सूख

जाता है, और पावरोटी, भूँजी मछली आदि खाने से नहीं सूखता ? इसका मतलब क्या है ? मेरी समझ में तो पावरोटी की अपेक्षा फल-मूल में ही अधिक रस है।

कार्तिक बाबू बोले—यह चिकित्सा-शास्त्र की बात है। मेडिकल-कालेज में भर्ती होकर जब चिकित्सा-शास्त्र पढ़ूँगा तब इसका कारण भी खोज लूँगा।

सन्ध्या हो गई देख कर कार्तिक बाबू और शरत् बाबू सायं-संध्या करने के लिए उठे। रामनिधि ने स्टोव जला कर चाय का पानी चढ़ा दिया।

दूसरा परिच्छेद

भट्टाचार्य का संवाद

उक्त घटना के कई दिन बाद, एक दिन शाम को, एक बूढ़े ब्राह्मण देवता विद्यार्थी-गृह में आये ? उनके शरीर पर रामनामी दुपट्टा था, पाँवों में नागौरी जूता, हाथ में फटा-पुराना मैला सा कैम्बिश का बेग था और दूसरे हाथ में एक टूटी छतरी थी। घर के दरवाज़े पर कार्तिक बाबू और शचीन्द्र बाबू खड़े थे। वृद्ध ने आकर पूछा—"भैया, यह किसका घर है ?"

कार्तिक बाबू ने कहा—यह तो विद्यार्थी-गृह है।

ब्राह्मण देवता ने ज़रा विस्मित होकर पूछा—किसका घर ?

शचीन्द्र ने कहा—विद्यार्थी-गृह—अर्थात् यहाँ विद्यार्थी रह कर लिखना-पढ़ना सीखते हैं।

तुम लोग कौन जाति हो ?

"ब्राह्मण हैं, कायस्थ हैं, एक 'वैद्य' भी हैं।"

"भैया, तुम्हारा घर किस ज़िले में है ?"

"कई जगहों के लड़के हैं। हुगली, नदिया, बर्दवान—एक लड़का वीर-भूमि ज़िले का भी है।"

बूढ़े ने कुछ धैर्य सा पाकर कहा—वीरभूमि ज़िले का कौन है भैया ?

"रामनिधि बाबू हैं। रामनिधिदास कायस्थ हैं। शिउड़ी के पास किसी गाँव में उनका घर है।"

"मेरा घर भी शिउड़ी में है। मैं आज शाम की गाड़ी से कलकत्ते आया हूँ। यहाँ पर मेरे एक शिष्य हैं उन्हीं के घर जाने का विचार था। वहाँ जाकर सुना कि उन्होंने घर बदल दिया है। नये घर का पता कोई बता न सका। कलकत्ते में पहले-पहल आया हूँ। रात का वक़्त है। कहाँ जाऊँ ? किसी किसी ने होटल में जाने की सलाह दी। लेकिन भैया, मैं ब्राह्मण पण्डित हूँ। होटल में छत्तीसों जाति के लोग बैठ कर खाते-पीते हैं। इसलिए मैं वहाँ नहीं जा सकता। वह सब क्रिस्तानी म्लेच्छाचार मुझसे न होगा। देखता हूँ,

तुम लोग भले घरों के लड़के हो। यदि एक रात के लिए मुझे आश्रय दो तो बड़ा उपकार हो।"

यह सुन कर दोनों छात्र आदरपूर्वक उनको घर के भीतर ले गये। ऊपर के मंज़िल में एक कमरा खाली था। जल लाकर विद्यार्थियों ने उनके हाथ-पाँव धुला दिये। उनकी संध्या-पूजा की व्यवस्था कर दी। बाज़ार से फल-मूल लाकर उनको जलपान कराया। आख़िर में एक हुक़्क़ा मँगाया और उसमें पानी भर कर चिलम चढ़ा दी।

कार्तिक बाबू ने पूछा—भट्टाचार्य महाशय, रात में आप क्या खाते हैं? भात, रोटी या पूरी-तरकारी?

"अभी तो भात खाऊँगा। अच्छा, यहाँ कोई पास ही ग्वाला है? पैसा देता हूँ—हो सके तो आध सेर दूध मँगा कर उसे अच्छी तरह गरम करा दीजिए। मैं अफ़ीम खाता हूँ। इससे दूध के बिना जी को चैन नहीं पड़ता।"

शरत् बाबू ने कहा—"दूध का बन्दोबस्त हो जायगा, पैसों की ज़रूरत नहीं।" दो तीन छात्रों ने सलाह करके अपने अपने हिस्से का दूध एकत्र कर आग पर चढ़ाने के लिए रसोइये को बुलाया।

बिलकुल पुराने ढङ्ग के सम्पूर्ण परम हिन्दू भट्टाचार्य आये हैं। विद्यार्थी-गृह के लड़के उनको घेर कर शास्त्र-सम्बन्धी नाना प्रकार के प्रश्न करने लगे। किसी ने पूछा—उपनिषदों में सबसे प्राचीन कौन है? किसी ने पूछा—सांख्यकारों ने

जो कहा है, "ईश्वरासिद्धेः प्रमाणाभावात्" इससे क्या निरीश्वरवाद का समर्थन होता है? किसी ने पूछा—मैक्स-मूलर का कथन है कि रामायण को बने सिर्फ़ डेढ़ हज़ार वर्ष हुए हैं, सो इस विषय में आपकी क्या राय है?

भट्टाचार्य महाशय ने सबसे साफ़ साफ़ कह दिया—उन्होंने विशेष संस्कृत नहीं पढ़ी। लड़कपन में स्कूल में भरती हो कुछ दिन व्याकरण पढ़ा था। रघुवंश का द्वितीय सर्ग आरंभ करते ही पिता की मृत्यु हो गई—इस कारण स्कूल छोड़ कर रुपया कमाने की ओर ध्यान देना पड़ा—यजन-याजन दशकर्म कराने योग्य सामान्य विद्या उनमें है—उसी से किसी प्रकार जीविका चलती है। यद्यपि उन्होंने दर्शन-शास्त्र आदि का अध्ययन न किया था तथापि दृष्टान्त और उद्भट श्लोक उनको खूब मालूम थे। उसी से मजलिस को मात कर दिया। लड़के भी उनके अहंकारशून्य सरल बर्ताव से बहुत सन्तुष्ट हुए। इस प्रकार कुछ समय कटने पर नीचे से शंख की आवाज़ आई।

भट्टाचार्य ने पूछा—यह क्या? इस समय शंख कहाँ बज रहा है? क्या किसी के लड़का हुआ है?

एक छात्र ने कहा—रसोई तैयार हो गई है। इसी लिए रसोइये ने शंख फूँका है। चलिए भट्टाचार्यजी।

सबके साथ भट्टाचार्यजी नीचे उतरे। रसोई-घर के पास ही एक बड़ा सा कमरा था जिसमें सब लोग भोजन करते थे।

ब्राह्मण एक पंक्ति में और कुछ दूर पर कायस्थ दूसरी पंक्ति में बैठे। ब्राह्मण-लड़कों की श्रेणी से ज़रा हट कर, कुछ अन्तर पर, भट्टाचार्यजी के लिए एक आसन अलग रक्खा गया।

भोजन आरम्भ हुआ। रसोइया जल्दी जल्दी दौड़कर किसी को दाल और किसी को तरकारी परोसने लगा। खाते खाते भट्टाचार्यजी ने कहा—सुना था कि इस घर में शिउड़ी ज़िले का कोई छात्र है। उससे भेंट न हुई ?

कुछ लड़कों ने रामनिधि की ओर अँगुली उठाकर कहा—यही तो बैठे हैं। इन्हीं का घर शिउड़ी ज़िले में है। कहाँ थे रामनिधि बाबू ?—आपके देश से भट्टाचार्यजी आये हैं।

रामनिधि एक बार भट्टाचार्य की ओर आश्चर्य से देख कर ध्यानपूर्वक भोजन करने लगे। भट्टाचार्य ने पूछा—आपका घर कहाँ है ?

"शिउड़ी ज़िले में।"

"ख़ास शिउड़ी में ?"

"जी नहीं।"

"तो किस गाँव में ?"

"कल्याणपुर में।"

भट्टाचार्य ने कहा—कल्याणपुर ! तब तो मेरे घर से बहुत दूर नहीं। आपका शुभ नाम ?

"श्रीरामनिधिदास।"

"तो आप कायस्थ हैं?"

"जी हाँ।"

"आपके पिता का नाम।"

"राधानाथदास।" कहते कहते रामनिधि का गला रुँध सा गया।

भट्टाचार्य ने कहा—राधानाथदास? उनको इस लोक से विदा हुए कितने वर्ष हुए?

रामनिधि ने कहा—"तीन साल।" किन्तु उनका स्वर विकृत था।

भट्टाचार्य ने ज़रा सोचकर कहा—"तीन साल? अयँ! मैं पहचान न सका।" बात-चीत करते करते वे भात में दाल सान रहे थे। अब उस सने हुए भात से भट्टाचार्यजी ने हाथ खींच लिया।

रामनिधि के सिवा इस पर और किसी ने ध्यान नहीं दिया। अनन्तर एक ने—"भट्टाचार्यजी, और क्या लेंगे?" कहते कहते उनकी थाली की ओर देख कर पूछा—क्यों महाराज, खाते क्यों नहीं?

भट्टाचार्य बोले—ख़ूब खाया है। और कितना खाऊँ?

दो तीन विद्यार्थियों ने कहा—खाया ही क्या है? सब भात तो पड़ा है।

भट्टाचार्यजी सूखी हँसी हँस कर बोले—भैया, क्या तुम लोगों जैसी मेरी अवस्था है? रात में अधिक खा लेने से हज़म न होगा।

एक ने कहा—तो थोड़ा सा दूध लीजिए। महराज-महराज, भट्टाचार्यजी को दूध ला दो।

रसोइया दौड़ कर कटोरे में दूध ले आया।

भट्टाचार्य ने सटपटा कर कहा—नहीं-नहीं, दूध नहीं चाहिए।

"यह क्या भट्टाचार्य महाराज! आपने कहा था कि अफ़ीम खाते हैं ज़रा सा दूध चाहिए। इसी से हम तीन चार जनों ने अपने अपने हिस्से का दूध एकत्र कर आग पर रखवा दिया था। दूध ले लीजिए, आपको खाना पड़ेगा—"महराज कटोरा रख दो।"

कटोरा रखने के लिए रसोइया झुका।

भट्टाचार्यजी घबरा कर बोले—नहीं-नहीं, कहीं सचमुच रख ही न देना। ख़राब जायगा। मैं न खाऊँगा। बाबुओं को दो—मैं खा न सकूँगा। मेरे सिर में दर्द हो रहा है।

लड़कों ने समझ लिया कि ज़रूर कुछ दाल में काला है। इससे और हठ न किया। सब चुपचाप अपनी अपनी थाली खाली कर उठ बैठे।

रामनिधि ने उठ कर हाथ मुँह धोया, और सीधे अपने कमरे में जा दरवाज़ा बन्द कर लिया।

तीसरा परिच्छेद

क़ानूनी प्रसंग

लड़कों ने भट्टाचार्यजी के साथ साथ ऊपर आ उनके सोने के कमरे में पहुँच कर पूछा—अब बताइए, आपने खाना क्यों नहीं खाया।

भट्टाचार्य ने कहा—नहीं, वैसी कोई बात नहीं है। पेट मे कुछ दर्द सा मालूम हुआ।

कार्तिक बाबू ने कहा—अभी सिर में दर्द बतलाया था और अब फिर आप पेट में दर्द बतलाते हैं! बतलाइए, असल बात क्या है। क्या हो गया? क्यों नहीं खाया? सना सनाया भात आप क्यों छोड़ आये?

हाथ में हुक्का लेकर भट्टाचार्यजी गंभीर भाव से चिलम फूँकने लगे।

शरत् बाबू बोले—भट्टाचार्य महाराज!

"कहिए।"

"बतलाइए क्या बात है?"

तब भट्टाचार्य ने नीचे हुक्का रख कर डर के साथ इधर उधर नज़र दौड़ाई। फिर बहुत धीरे से पूछा—रामनिधि कहाँ है।

"मालूम होता है, अपने कमरे में जाकर लेट रहा है।"

तब भट्टाचार्यजी धीरे—बहुत ही धीरे धीरे कहने लगे—

इस रामनिधि ने—पाजी कहीं का—अपने को कायस्थ बताया है ?

"जी हाँ।"

भट्टाचार्यजी क्रोध से तलमला कर बोले—हूँ ! कायस्थ ! बच्चाजी सात जन्म में भी कायस्थ नहीं—हरामज़ादे की चौदह पुश्त कायस्थ नहीं। छिः ! छिः ! छिः ! घोर कलि-काल है !

दो-तीन छात्रों ने पूछा—तो फिर वह कौन है ?

भट्टाचार्य बोले—धोबी है धोबी। उसके बाप का नाम राधा धोबी था। बच्चाजी अपने बाप का नाम राधानाथ बताते हैं राधानाथ ! राधा धोबी के नाम से ही तो उसे मुद्दत से जानता हूँ। इधर राधा बड़ा आदमी हो चला था—एक-दम मालदार हो गया था। मैंने बचपन में उसे काली दीघी के घाट पर कपड़े धोते देखा है। छिः छिः छिः छिः ! धोबी के साथ एक कमरे में बैठ कर क्या मैं भात खा सकता हूँ ? मैं ग़रीब पंडित हूँ, यह क्रिस्तानी काम मुझसे कैसे होगा ? छिः छिः छिः छिः ! तुम सभी भले आदमियों के लड़के हो। कायस्थ बन कर उसने तुम लोगों की जाति नष्ट कर दी। महाभारत ! महाभारत !

यह कह कर भट्टाचार्यजी चुप हो गये। लड़के भी थोड़ी देर चुपचाप रहे।

आख़िर को शचीन्द्र ने कहा—कार्तिक बाबू इसका कुछ बन्दोबस्त कीजिए।

"क्या करने को कहते हो ?"

"पुलिस से गिरफ़्तार करा दो। इतनी बड़ी हिमाकत ! हम इतने लोगों को धोखा देकर हमारा सर्वनाश कर दिया ! कॉंस्टेबल को बुलाकर उसे गिरफ़्तार करा दीजिए।

कार्तिक बाबू ने पूछा—क्या जाने, यह पुलिस-केस हो सकता है या नहीं। विनय बाबू, क्या कहते हो ?

विनय बाबू पास ही बैठे थे। वे क़ानून पढ़ते थे। उन्होंने कहा—पुलिस-केस ? किस दफ़ा की रू से होगा ?

शचीन्द्र बाबू ने कहा—दफ़ा-वफ़ा तुम जानो। इतना बड़ा अन्धेर हो गया—ऐसा भी हो सकता है कि क़ानून में इसके लिए सज़ा न हो !

विनय बाबू ने चिन्तित होकर कहा—क्या मालूम, चीटिंग के भीतर आता है या नहीं। चीटिंग का डेफ़ीनीशन तो अच्छी तरह याद नहीं। किताब देखूँ तो बताऊँ।—यह कह कर वे उठ गये।

भट्टाचार्यजी ने देखा कि बड़े संकट में फँस गये हैं। रामनिधि को पुलिस के सुपुर्द करने से भट्टाचार्यजी को प्रधान गवाह होना पड़ेगा। एक बार शिउड़ी में, एक विवाह के मुक़दमे में, वे गवाही देने गये थे। उस समय वकीलों ने उनको असंस्कृतज्ञ प्रमाणित करने के लिए उनसे शब्दरूप और धातुरूप तक जिरह में पूछे थे। तब से वे वकीलों से बहुत डरते हैं। इसी से उन्होंने हड़बड़ा कर कहा—नहीं नहीं,

पुलिस के सुपुर्द करने की ज़रूरत नहीं। कल उसको यहाँ से अलग कर देना यही बहुत है।

शचीन्द्र बाबू गरज कर बोल उठे—निकालो। कान पकड़ कर निकाल दो। कल क्यों? आज—इसी दम—अभी। आओ।

और और छात्र भी गरम हो उठे थे। वे इकट्ठा होकर गुस्से के साथ रामनिधि के कमरे की ओर चले। भट्टाचार्यजी भी उठे और बोले—"सुनो-सुनो। धीरे धीरे मीठी बातें कह कर उससे चले जाने को कह दो। ख़बरदार, उससे मार-पीट न करना।"—भट्टाचार्य के मन में फ़ौजदारी अदालत और वकीलों की भयावनी मूर्त्ति, विभीषिका की तरह, प्रतिफलित हो रही थी।

शरत् बाबू ने कहा—भट्टाचार्यजी ठीक कहते हैं। मार-पीट करना हिन्दूधर्म के विरुद्ध है।

सात आठ छात्र जूता खटखटाते रामनिधि के कमरे के दरवाज़े पर आ पहुँचे। "रामनिधि बाबू! रामनिधि बाबू!" कह कर वे पुकारने लगे। कोई जंज़ीर खड़खड़ाने लगा। कोई किवाड़ों पर दनादन मुक्के मारने लगा।

रामनिधि ने उठ कर दरवाज़ा खोल दिया और पूछा—क्या है? डाका डालोगे क्या?

शचीन्द्र ने कहा—डाका हम लोग डालते हैं या तुम डालते हो? धोबी के लड़के होकर, अपने को कायस्थ

खिलाया और हमारी जाति नष्ट कर दी। अच्छा, अब यहाँ से निकल जाओ।

रामनिधि ने क्रुद्ध होकर कहा—मुँह सँभाल कर बातें करो। भले आदमी का अपमान मत करो।

शरत् बाबू ने कहा—धोबी कब से भला आदमी होगया?

कार्तिक बाबू ने कहा—ये फ़जूल बातें हैं। आपको दस मिनट का वक्त देते हैं। इसी के भीतर यहाँ से निकल जाइए। नहीं तो हम लोग मजबूर होकर आपको ज़बर्दस्ती निकाल देंगे।

यह सुनकर दूसरे लड़के अस्तीन चढ़ा, छाती फैला, अकड़ कर खड़े होगये।

रामनिधि ने कहा—और मेरा सामान?

"कल किसी समय आकर ले जाइएगा। दरवाज़े पर डबल ताला लगा दीजिए।"

रामनिधि ने देखा कि ज़ोर दिखाना व्यर्थ है। ये लोग दलबद्ध हैं और दृढ़संकल्प भी। इसलिए उन्होंने कहा—अच्छा, अपना सामान ठीक कर लूँ।

यह कह कर उन्होंने सन्दूक-पेटारी खोली और रुपया-पैसा निकाल कर जेब में रक्खा। एक हैंडबेग में दो कपड़े, कंघा, ब्रश, तौलिया आदि भर लिया। इधर कार्तिक बाबू घड़ी खोल कर देख रहे थे कि कब दस मिनट पूरे होते हैं।

रामनिधि ने बाहर निकल कर दरवाज़े में ताला लगाया। सीढ़ियों से उतरते वक्त कहा—"आप लोगों को बहुत जल्द इसका फल भोगना पड़ेगा। मैं थाने को जाता हूँ। आप लोगों की रिपोर्ट करूँगा। आप लोगों ने मेरी मानहानि की है, मुझे धमकाया है। अभी सो न रहिएगा—तैयार रहिएगा। अभी गिरफ़्तारी का वारंट आता है। इस झगड़े में आप सबको और इस बदमाश भट्टाचार्य को जेल भेजूँगा।" यह कह गुस्से से दाँत पीसते पीसते रामनिधि नीचे उतर गये।

कुछ दूर पर खड़े भट्टाचार्यजी यह सब देख रहे थे। पास जाकर विद्यार्थियों ने देखा कि भट्टाचार्यजी काँप रहे हैं। उन्होंने पूछा—वह क्या थाने को गया?

कार्तिक बाबू ने कहा—"चला न जाय—डर किस बात का है?" कहते कहते सब लोग भट्टाचार्यजी के कमरे में आ बैठे।

शचीन्द्र ने कहा—भट्टाचार्यजी, एक चिलम तम्बाकू भरवाऊँ?

"अच्छी बात है।"

शरत् बाबू बोले—क्या सचमुच थाने को गया? किसी को पीछे पीछे जाकर देखना चाहिए।

चिलम चढ़ गई। भट्टाचार्य जी काँपते हुए हाथ से हुक्का पकड़ कर धुआँ खींचने लगे।

शचीन्द्र ने पूछा—विनय बाबू, अच्छा इससे मानहानि होती है?

विनय ने कहा—मानहानि ? होती है या नहीं, पूछते हो ?

कार्तिक बाबू बोले—और धमकाना भी कह गया है।

विनय बाबू ने अत्यन्त विज्ञता के साथ कहा—मानहानि हुई डिफ़ेमेशन—और धमकाना हुआ क्रिमिनल इंडिमिडेशन।

शरत् बाबू ने पूछा—कौन सी दफ़ा लगती है ?

"यही तो सोच रहा हूँ। इस सम्बन्ध में कोई रूलिंग है। वह बम्बई या मद्रास हाईकोर्ट की नज़ीर है। उँह, शायद इलाहाबाद की है। किताब देखनी पड़ेगी।"—कह कर विनय बाबू उठ गये।

हुक्के को रख कर भट्टाचार्यजी एक-दम उठ खड़े हुए। कहने लगे—देखो, अकस्मात् एक बात याद आगई। बहादुरबाग़ यहाँ से कितनी दूर है ?

एक ने कहा—पास ही है।

"वहाँ पर मेरी जान-पहचान का एक आदमी है। उसके पास जाना है।"

कार्तिक बाबू ने कहा—अभी रात में ही ? कल सवेरे चले जाइएगा।

भट्टाचार्य ने कहा—उँह—यह न होगा। बड़ा ज़रूरी काम है। अभी जाना होगा।

लड़खड़ाते पाँवों से भट्टाचार्य महाशय ने जूते पहने।

काँपते हुए हाथ से कैम्बिश का बेग ले, और सबके बहुत रोकने पर भी, वे सड़क पर आ पहुँचे। लगातार कहते जाने लगे—"राम-राम, दुर्गा-दुर्गा"। और पीछे घूम घूम कर देखते जाने लगे कि गिरफ़्तारी का वारंट लिये पुलिस तो नहीं आ रही है।

उनके चले जाने पर विद्यार्थी-गृह के लड़कों ने देखा कि जल्दी जल्दी में ब्राह्मण फटी-टूटी छतरी भूल गया है।

चौथा परिच्छेद

गृहहीन

रामनिधि बाबू सड़क पर आये, किन्तु जायँ कहाँ—कलकत्ते में ख़ास जान-पहचान का कोई आदमी नहीं। कहाँ आश्रय लें?

उस समय रात के ग्यारह बजे थे। धर्मतल्ले की ओर आख़िरी ट्राम जा रही थी। बिना कुछ सोचे-विचारे वे उसी पर जा बैठे।

रामनिधि का सिर उस समय चकराया हुआ था। क्षोभ, अपमान और लज्जा से वे जर्ज्जर हो रहे थे। ट्राम को एक थाने के पास से जाते देख कर एक-दम उतर पड़े। नालिश करना है—अपना अपमान करनेवालों को मज़ा चखाना है।

थाने के सामने आकर रुक गये। सोचा, आज ठहर

जायँ। क्रोध की दशा में कोई काम कर बैठना ठीक नहीं। कल सोच-समझ कर, जो कुछ करना होगा, करेंगे।

बैग हाथ में लिये, रामनिधि, धीरे धीरे सड़क पार कर क्रम से "क़िले के मैदान" में आ पहुँचे। रात अँधेरी थी। गैस की धुँधली रोशनी में मानूमेंट की ओर बढ़े।

मानूमेंट के चारों ओर जो ऊँचा चबूतरा है, उस पर बैठ गये और सिर पर हाथ रख कर चिन्ता करने लगे।

धोबी के वंश में जन्म लेना क्या इतना बड़ा अपराध है? इस रात में, लावारिस कुत्ते की तरह उनको मकान से निकल आना पड़ा! क्यों? विद्यार्थी-गृह के लड़के,—कार्तिक, शचीन्द्र, शरत् और ज्ञान आदि,—उनसे किस बात में श्रेष्ठ हैं? वे उनमें से किसी के मुक़ाबले ग़रीब नहीं, अल्प शिक्षित नहीं, किसी से चरित्र में भी निकृष्ट नहीं। इतने पर भी उनको सामाजिक बहिष्कार सहना पड़ा?

गरमी का मौसम है। दक्षिण वायु सरसर बह रहा है। मैदान में गैस की हाँड़ियाँ नक्षत्रों की तरह दिखाई दे रही हैं। नीरव निस्तब्ध रात है। रामनिधि बाबू हाथ जोड़ कर भगवान् से सान्त्वना माँगने लगे। मन ही मन प्रार्थना करने लगे। उनकी आँखों से आँसू टपकने लगे।

कुछ क्षण प्रार्थना करने पर उनका हृदय स्वस्थ हुआ। तब वे चादर बिछा कर और सिर के नीचे बैग रख कर उसी स्थान पर लेट गये।

सोचने लगे कि रात तो यहाँ काट लूँगा—कल कहाँ जाऊँगा ? इसी समय उनके मन में धर्म-भाव प्रविष्ट हुआ। सोचा, कल का उपाय भगवान् सोचें। मैं क्यों चिन्ता कर मरूँ ?

इसके बाद दुःख और थकावट से सुस्त रामनिधि को उसी दशा में नींद आगई। और विद्यार्थी-गृह में कार्तिक बाबू आदि अपने अपने कमरे में बिस्तरे पर लेटे हुए इस चिन्ता में पड़े रहे कि न जाने कब पुलिस आजाय। चिन्ता के मारे वे आँखों की पलक न मूँद सके।

पाँचवाँ परिच्छेद

आश्रय मिला

सवेरा हुआ। पेड़ों पर चिड़ियाँ चहकने लगीं। रामनिधि ने आँखें खोल कर देखा। पहले तो कुछ विस्मित हुए कि यहाँ कहाँ आ पहुँचा ! परन्तु दूसरे ही क्षण सब याद हो आया।

धीरे धीरे उठकर बैग हाथ में ले शहर की ओर चले।

उनको ऐसे कई विद्यार्थी-गृह मालूम थे, जिनमें उनके सहपाठी रहते थे और वहाँ रामनिधि का आन-जाना भी था। किन्तु उनमें से किसी में जगह तलाशने की उनको इच्छा न हुई।

उनके पास जो रुपया-पैसा था उससे वे अनायास ही

एक छोटा-मोटा घर अपने रहने के लिए ले सकते थे। किन्तु घर ढूँढ़ने में वक्त लगेगा।

धीरे धीरे सड़क पर पहुँच कर वे भवानीपुर की ओर चल पड़े। भवानीपुर में ढूँढ़ते ढूँढ़ते मेस का एक मकान मिला। वहाँ जाकर मैनेजर से पूछा—महाशय, आपके यहाँ कोई जगह ख़ाली है?

मैनेजर साहब हुक्का पी रहे थे। कहने लगे—हाँ, है तो। आपका नाम?

"श्रीरामनिधिदास।"

"आप क्या करते हैं?"

"कालेज में पढ़ता हूँ।"

"घर कहाँ है?"

"वीरभूमि ज़िले में।"

"आप कौन लोग हैं?"

रामनिधि ने पहले ही निश्चय कर लिया था कि कुछ भी हो, अपनी जाति न छिपायेंगे। भले ही कलकत्ते के विद्यार्थी-गृहों में जगह न मिले।

मैनेजर को उत्तर दिया—मैं धोबी हूँ।

धोबी सुनने से मैनेजर साहब के ललाट पर बल पड़ गया। वे—"ऊँह!" कह कर तम्बाकू पीने लगे।

थोड़ी देर बाट जोह कर रामनिधि ने पूछा—तो जगह मिल जायगी न?

मैनेजर साहब—नहीं, आप और कहीं ढूँढ़ लीजिए।

ठण्डी साँस लेकर रामनिधि बाबू बाहर आये। और भी दो तीन मेसों (छात्रावासों) में तलाश की, पर किसी में जगह न मिली।

वे घूमते घामते अन्त में कालीघाट जा पहुँचे। वहाँ यात्रियों के ठहरने के लिए बहुत से कमरे भाड़े पर मिलते हैं। उन्हीं में से एक को आठ आने रोज़ पर ले लिया। मकान-मालिक ने कहा—भाड़ा रोज़ का रोज़ पेशगी देना होगा।

रामनिधि ने एक अठन्नी फेंक दी। दूकानदार बोला—बाबू साहब का पेटी-बिस्तरा कहाँ है ? साथ में नहीं है।

"बिछौना वग़ैरह एक दूसरी जगह रक्खा है। ले आऊँगा। हाँ, खाने-पीने का बन्दोबस्त कर दे सकते हो ?"

"चूल्हा देता हूँ। चावल, दाल, हाँड़ी, लकड़ी, सब मेरी दूकान में है। बतलाइए क्या क्या दूँ ?"

"और ब्राह्मण ?"

"ज़रूरत हो तो ब्राह्मण को भी बुलवा दूँगा। ए भोला, चक्रवर्ती को ख़बर तो कर दे। किन्तु ब्राह्मण रोज़ आठ आने लेगा।"

रामनिधि ने कहा—दिया जायगा।

ब्राह्मण आ पहुँचा। चूल्हा जला।

रसोई चढ़ी। रामनिधि को स्नान करने का मौक़ा न मिला। बैग किसे सौंप जायँ ? इसी दूकानदार की दी हुई चटाई बिछा कर वे घर के बरामदे में लेटे रहे।

खाते-पीते एक बज गया। सोचा, इस प्रकार कितने दिन कटेंगे। घर की खोज किये बिना काम न चलेगा।

घर कहाँ मिलेगा—किससे पूछें। रास्ते में पहुँच कर दो-चार जनों से पूछा कि कालीघाट की ओर कहीं कोई घर खाली है, पर पता न लग सका।

उस समय रामनिधि के दिमाग़ में एक बात पैदा हुई। किराये की गाड़ी में बैठ कर वे चाँदनी में जा पहुँचे।

वहाँ एक दूकान में जाकर उन्होंने ऊपर से नीचे तक के लिए साहबी पोशाक मोल ली। दूकान में ही पोशाक पहन ली और सिर पर हैट लगाकर, धर्मतला के सस्ते होटल में प्रवेश किया।

आध घंटे के भीतर सब परिवर्तन होगया। अब वे दुरदुराये हुए घृणित, धोबी नहीं। अब तो वे ख़ासे साहब हैं। होटल के दरवाज़े पर गाड़ी ठहरते ही दरबान ने आकर लम्बा सलाम किया। नौकरों ने आकर उनका सामान उतार लिया। मैनेजर साहब ने आकर हाथ मिलाया और उनको एक बहुत अच्छे कमरे में जगह दी। बेहरे ने पूछा—हुज़ूर, ग़ुसल होगा?

रामनिधि ने कहा—नहीं। चाय ले आओ।

दस मिनट के भीतर बेहरे ने एक ट्रे साज कर चाय, रोटी, मक्खन, फल आदि ला दिया। रामनिधि बाबू चाय पीकर ड्राइँग रूम में जा बैठे। बहुत से अख़बार पड़े थे। उनमें से एक उठा कर पढ़ने लगे।

वह क्रिस्तानी अख़बार था। एक प्रबन्ध का शीर्षक "मनुष्य का भ्रातृत्व" था। प्रबन्ध पढ़कर समझा कि ईसाई-धर्म के अनुसार ईश्वर एक है और वह सब मनुष्यों का पिता है—सब मनुष्य भाई भाई हैं। प्रबन्ध में हिन्दुओं के जातिभेद की बड़ी निन्दा थी।

दूसरा एक प्रबन्ध पढ़ते पढ़ते देखा कि उसमें एक स्थल पर बाइबिल से यह उद्धृत है—

Come unto me all ye that labour and are heavy burden, and I will give you rest.

(अनुवाद—थके और भार से दबे हुए मनुष्य मेरे पास आओ, मैं तुम लोगों को विश्राम दूँगा।)

यह वचन रामनिधि को अमृत सा मालूम हुआ। जो थके और बोझ से दबे होते हैं, यीशु उनको विश्राम देता है। उनकी तरह थका और बोझ से दबा हुआ और कौन है? अपमान-भार से उनका मस्तक झुक गया है। लोगों ने उनको गीदड़ों और कुत्तों से भी गया गुज़रा समझ रक्खा है। हिन्दू-धर्म छोड़ने और ईसाई-धर्म ग्रहण कर लेने पर वे सब दुःख और अपमान से छूट सकते हैं।

रात को होटल में ही शयन किया। बहुत देर तक नींद न आई। कमरा सुन्दर था और अच्छी तरह सजाया गया था। खाने-पीने का बन्दोबस्त भी बढ़िया था। दूध जैसे सफ़ेद टेबल क्लाथ के ऊपर, बेल-बूटेदार साफ़ प्लेट सजा कर,

चाँदी जैसे सफेद काँटे चमचे से खाना होता है। मेस-छात्रा-वास के नौकर की लापरवाही से मली हुई काँसे की थालियों को याद कर रामनिधि ने नाक सिकोड़ी। टेबल पर जगह जगह कैसे बढ़िया गुलदस्ते रक्खे हैं। कैसी अच्छी प्रथा है। ये सब रामनिधि के लिए ईसाई-धर्म के अंग ही मालूम होने लगे। उन्होंने सोने के पहले ईसाई-धर्म ग्रहण करने का संकल्प कर लिया।

वे अविवाहित थे। समय आने पर शायद किसी मेम से विवाह कर जीवन को सार्थक करेंगे, यह भी सुख-स्वप्न की तरह उनके मन में उदित हुआ।

दूसरे दिन बाज़ार से एक बाइबिल ख़रीद कर पढ़ने लगे। एक पादरी साहब से मिल कर उन्हें अपना सब हाल कह सुनाया।

पादरी साहब ने उनको विशेष उत्साह दिया। देशी क्रिस्तानों के रहने के लिए एक जगह थी, वहीं उनका भी बन्दोबस्त कर दिया।

रामनिधि अब पुराने विद्यार्थी-गृह में गये—और अपना हिसाब चुका कर अपना सामान उठा लाये।

उनको हैट कोट पहने देख कर विद्यार्थी-गृह के लड़के दङ्ग रह गये। सबने पूछा—अब कहाँ रहते हो?

"ईसाई युवक-समिति के आश्रम में।"

"तो क्या आपने ईसाई-धर्म ग्रहण कर लिया है?"

"अभी तो नहीं किया है। शीघ्र ही ईसाई हो जाने का इरादा है।"

विद्यार्थियों ने कहा—अच्छी बात है। आपने हम लोगों की नालिश-फ़रियाद तो नहीं की?

"जी नहीं। मैंने आप लोगों को क्षमा कर दिया है। आशा है, ईश्वर भी आपको क्षमा करेगा।

रामनिधि के चले जाने पर लड़के उनकी चर्चा करके आनन्द प्राप्त करने लगे। एक ने कहा—वे तो ईश्वर से भी अधिक उदार और क्षमाशील होगये हैं। वे पहले ही हम लोगों को क्षमा कर चुके हैं। आशा है, अब ईश्वर भी उनके महा दृष्टान्त का अनुसरण करेगा।

उसी रात को भट्टाचार्यजी चुपके चुपके आ उपस्थित हुए। कार्तिक बाबू से पूछा—उस रामनिधि की क्या ख़बर है?

"आज आया था। अपना सामान उठा ले गया। वह ईसाई होता है।"

"अयँ! ईसाई होगा! कहते क्या हो?"

"जी हाँ, उसने साहबी पोशाक पहन ली है। ईसाइयों के होटल में रहने लगा है। जल्दी ईसाई होगा।"



छठा परिच्छेद

भट्टाचार्य का दौत्य

कल्याणपुर छोटा सा गाँव है। गाँव के अधिकांश निवासी नीच जाति के हैं, दो चार घर ब्राह्मण-कायस्थ हैं। रामनिधि के पिता राधानाथ दास ने इस गाँव को और पास के और भी कई गाँवों को नीलाम में ख़रीद किया था। गाँव के बीच में ज़मींदारी का दफ़्तर और रामनिधि बाबू का घर है।

एक पहर दिन चढ़ आया है। कचहरी के मकान में बैठे नायब गोविन्द सरकार एक छोटा सा लकड़ी का सन्दूक़ आगे रक्खे हिसाब-किताब देख रहे थे। उनके अगल-बगल कई मोहर्रिर बैठे जमा और वसूल बाक़ी आदि की फ़र्द बना रहे थे।

अन्त:पुर की एक नौकरनी कचहरी के सामने से जा रही थी। उसको देख कर गोविन्द सरकार ने उसे पुकारा। बोले—देखो, मांजी से मुलाकात करनी है। कलकत्ते से छोटे बाबू की बड़ी ज़रूरी चिट्ठी आई है।

नौकरनी ने भीतर जाकर ख़बर दी। थोड़ी देर में गोविन्द सरकार हाथ में एक खुली चिट्ठी लिये घर के भीतर गये।

रामनिधि की माँ ने पूछा—कैसी चिट्ठी आई है, सरकार? रामनिधि अच्छी तरह तो है?

"जी, शरीर से तो भले चङ्गे हैं। लिखा है कि कुछ रुपये की ज़रूरत पड़ गई है, दो हज़ार रुपये मँगाये हैं।"

"दो हज़ार। कितनी कोरियाँ हुईं?"

सरकार महाशय मन ही मन हँसकर बोले---दो हज़ार रुपये में बहुत कोरियाँ होती हैं। पाँच कोरी का एक सौ हुआ, पचास कोरी का एक हज़ार हुआ, एक सौ कोरी का दो हज़ार हुआ।

रामनिधि की माँ हिसाब को अच्छी तरह समझ न सकीं---पर यह समझ गईं कि बहुत सा रुपया चाहिए। कहने लगीं—इतना रुपया मँगा कर क्या करेगा?

"यह तो कुछ लिखा नहीं। केवल यही लिखा है कि रुपये की बड़ी ज़रूरत है, तुरन्त भेजो। पहले जिस घर में रहते थे, उसे शायद छोड़ दिया है। क्योंकि चिट्ठी पर नया ठिकाना लिखा है।" कह कर सरकार महाशय हुक्म की प्रतीक्षा करने लगे।

रामनिधि की माँ ने सोच-विचार कर कहा—तो भेज दो।

गोविन्द सरकार ने कहा—क्या यह लिखूँ कि माँजी पूछती हैं कि इस वक़्त रुपये की क्या ज़रूरत है?

माँजी बोलीं—नहीं-नहीं। देर करने की ज़रूरत नहीं। जब इतना रुपया माँग भेजा है तब कोई ज़रूरत आ पड़ी होगी। उसी का तो रुपया है। बड़ा भला लड़का है। इसी

से हम लोगों की राय लेता है। आज ही रुपया भेज दो। न जाने मेरे बेटे को क्या संकट आ पड़ा है। हे माँ, काली-घाट की काली, मेरे बच्चे को भला रखना। उसका बाल बाँका न हो, तुमको दो बकरा भेंट करूँगी।

उसी दिन दो हज़ार रुपये के नोट रामनिधि के पास भेज दिये गये।

इसके दो दिन बाद दोपहर के वक़्त पूर्व कथित भट्टाचार्यजी फटी-पुरानी छतरी लगाये हिलते-डोलते कचहरी में आये। गोविन्द सरकार ने उनको प्रणाम कर कुशल-प्रश्न पूछा। भट्टाचार्य ने कहा—कुशल कहाँ! अभी कलकत्ते गया था, वहाँ से बड़ी ख़राब ख़बर सुन आया हूँ।

गोविन्द सरकार ने चकित होकर पूछा—क्या—क्या?

भट्टाचार्य ने गंभीर स्वर से कहा—तुम लोगों पर बड़ा संकट आया है।

"क्या हुआ है? साफ़ साफ़ कहिए। रामनिधि बाबू अच्छी तरह तो हैं? उनसे भेंट हुई थी?"

"हाँ, हुई थी। वे जिस घर में रहते थे उसी में मैं भी ठहरा था। आहा! राधानाथ के लड़के को मैं बड़ा अच्छा लड़का समझता था। जैसा नम्र था, वैसा ही देवता और ब्राह्मण का भक्त था। कौन जानता था कि उसमें ऐसी कुबुद्धि पैदा होगी? दिनों का फेर है! दिनों का फेर है।"

यह सुन कर गोविन्द बाबू बहुत घबरा उठे। पूछा—क्या हुआ है महराज, खोल कर कहिए।

भट्टाचार्य ने कहा—कहने को ही तो आया हूँ। अपनी मालकिन को ज़रा ख़बर कर दो।

सरकार महाशय ने भीतर ख़बर भेजी। कुछ क्षण के बाद भट्टाचार्य महाशय भीतर बुलाये गये।

भट्टाचार्य भीतर आँगन में जा खड़े हुए। रामनिधि की माँ ने उनके पाँव पर सिर रख कर प्रणाम किया। बरामदे में उनके लिए एक गलीचा बिछाया गया था। किन्तु वे उस पर बैठे नहीं। कहने लगे—कुछ ख़ुशी की ख़बर सुनाने तो आया नहीं हूँ, खड़े ही खड़े कहे जाता हूँ। मैं अभी हाल में कलकत्ते गया था। तुम्हारे रामनिधि को देख आया हूँ।

शंकित होकर रामनिधि की माँ ने पूछा—महराज, क्या बात कहने आये हो? मेरा रामनिधि अच्छी तरह तो है?

"शरीर से तो अच्छा है। पर हाय हाय, ऐसा हुआ क्यों?"

यह सुन कर रामनिधि की माँ और घबरा उठी। पूछने लगी—क्या हुआ है महराज?

तब भट्टाचार्य ने गम्भीर भाव से कहना आरम्भ किया—गोविन्द-बहू, तुम तो किसी की सलाह सुनती नहीं, जो मन में आता है, किया करती हो। जिस वक़्त राधानाथ बड़ा आदमी

हुआ,—ज़मीन जगह पाई,—उस वक्त हम सभी कहते थे कि राधानाथ बहुत भला आदमी है, देवता-ब्राह्मण पर भक्ति रखता है, देवता-ब्राह्मण के आशीर्वाद से ही उसका भला हुआ है। माँ लक्ष्मी ने कृपा की और तुम लोगों का दिमाग़ चढ़ गया। हज़ार बड़े आदमी हो जाओ पर हो तो धोबी ही। तो फिर लड़के को अँगरेज़ी पढ़ाने के लिए कलकत्ते भेजने की ज़रूरत क्या थी। कहीं जूठी पत्तल स्वर्ग पहुँचती है? अच्छा तो पैसा होने से, गाँव की पाठशाला में मामूली लिखना-पढ़ना सीख कर अपनी ज़मींदारी के काम में ध्यान देना था। सो तुम लोगों को सनक सवार हुई कि लड़के को अँगरेज़ी पढ़ावेंगे; लड़के को बाबू बनायँगे। आज-कल तुम्हारा रामनिधि क्या करता है, जानती हो? ईसाई होना चाहता है—ईसाई होना चाहता है।

यह सुन कर रामनिधि की माँ काँपते काँपते बैठ गई। कहने लगी—क्या कहा महराज, ईसाई होना चाहता है? कैसा सत्यानाश हुआ!

भट्टाचार्य बोले—अभी तक ईसाई हुआ नहीं है। होगा—होगा। पहले जिस घर में रहता था उस घर को छोड़ दिया है। ईसाइयों के होटल में रहने लगा है। कोट-पतलून पहनता है। सिर पर—टोकनी की तरह—टोपी लगाता है। ठीक साहबों की तरह। मुँह से केवल गैट मैट डैम फूल निकलता है। अँगरेज़ी के सिवा भाषा नहीं बोलता। और गज़ब की

बात यह सुन आया हूँ कि क्रिस्तान होकर मेम से ब्याह करेगा।

रामनिधि की माँ व्याकुल होकर बोली—तो हम लोगों की क्या गति होगी, महराज?

"गति और क्या होगी? 'ऐ बुढ़िया हरामज़ादी, निकल यहाँ से'—कह कर वह मेम (तुम्हारी पतोहू) गला पकड़ कर तुम सबको यहाँ से निकाल बाहर करेगी।"

रामनिधि की माँ रोने लगी। बोली—"महराज, हम लोग छोटे आदमी हैं। महराज हमको ज्ञान-बुद्धि कुछ भी नहीं है। तुम्हीं हम लोगों को सलाह दो। किस तरह इस विपत्ति से उद्धार हो। कुछ उपाय बताओ महराज।" वह भट्टाचार्य के पाँव पकड़ कर रोने लगी।

भट्टाचार्य ने कहा—रोओ मत। रोने से अब क्या होगा। तुम सब आज ही रवाना होकर कलकत्ता पहुँचो। कलकत्ते में जहाँ वह रहता है, वहाँ जा पछाड़ खाकर उसके आगे गिर पड़ो। इस पर उसे दया आयेगी ही। क्या ऐसा नराधम होगा जो माँ की आँखों में आँसू देख कर भी रास्ते पर न आ जाय?

रामनिधि की माँ बोली—अच्छी बात है महराज। आज ही हम सब जायँगी। सरकार को साथ लेकर हम सब आज ही रवाना होंगी। महराज, तुम आशीर्वाद दो, जिससे मेरे बेटे की मति फिरे।

भट्टाचार्य बोले—तो जाओ। मैं भी आशीर्वाद देता हूँ। तुम्हारे लड़के के भले के लिए मैं नारायण को तुलसीदल चढ़ाऊँगा। नारायण की दया होने पर सब कुछ हो सकता है।

ज़मीन पर लोटती हुई माता बोली—जाओ महराज, मेरे बेटे के भले के लिए नारायण को तुलसीदल रोज़ चढ़ाना। पूजा के खर्च के लिए दस रुपये ले जाओ।

भट्टाचार्य ने कहा—नहीं धोबिन बहू, रुपया रक्खो, रुपया नहीं चाहिए। मैं शूद्र से दक्षिणा नहीं लेता। तुम्हारे बेटे के भले के लिए मैं कुछ दिन तक नारायण को एक सौ आठ तुलसीदल रोज़ चढ़ाया करूँगा।

'हरि हे दीनबन्धु' कह कर भट्टाचार्य चल दिये। रास्ते में चलते चलते मन ही मन कहने लगे—औरतिया ने पाँव पकड़ कर मुझे छू लिया। अब मैं असमय में नहा कर प्राण दूँ क्या!

रामनिधि की माँ, मौसी, फूफी आदि गोविन्द सरकार के साथ उसी रात में कलकत्ते को रवाना होगईं।

सातवाँ परिच्छेद

डाक-बँगले में

शाम का वक्त है । बंगाल की खाड़ी में हिरण्मयी नामक जहाज़ दौड़ रहा है । अस्ताचल की ओर जानेवाले सूर्य की सुनहरी किरणें समुद्र के नीले जल में पड़कर झलमला रही हैं। जहाज़ कलकत्ते से आया है । पुरी के सैकड़ों यात्रियों को लिये चाँदवाली को जा रहा है। चाँदवाली पहुँचने में अब अधिक देर नहीं है । वह दूर पर अस्पष्ट काली रेखा की तरह तीर की ज़मीन दिखाई दे रही है ।

जहाज़ में अव्वल दर्जे के डेक पर कैम्बिश की आराम कुर्सी पर लेटे हुए रामनिधि बाबू चिन्ता की लहरों में बह रहे हैं । उनका वेश अँगरेज़ों जैसा है । उस दिन सवेरे उठकर ईसाई युवक-समिति के आश्रम में बैठे जब चाय पी रहे थे तब फाटक से बाहर खड़ी गाड़ी के भीतर से स्त्रियों का करुण-क्रन्दन सुनाई पड़ा । उन्होंने उत्सुक चित्त से खिड़की से देखा कि गाड़ी के कोचबाक्स पर गुमाश्ता गोविन्द सरकार बैठे हैं । भीतर से उनकी माँ, मौसी, फूफी का आर्तस्वर उठ रहा है— "बेटा रामनिधि, क्या किया रे !" रामनिधि बाबू किंकर्तव्य-विमूढ़ हो थोड़ी देर तक खड़े रहे । आखिर को दरबान से कहा—इन लोगों से चले जाने को कहो, भेंट न होगी ।

इसके बाद दूसरे ही दिन, पादरी साहब से सलाह कर रामनिधि बाबू कटक को रवाना होगये। पादरी साहब ने कह दिया था कि कटक में तुम बेखटके रह सकते हो। वहाँ तुम्हारी माँ, मौसी, फूफी आदि एकाएक पहुँच कर विघ्न न डाल सकेंगी। पादरी साहब ने यह भी कह दिया था कि ईसाई होने में अब देर न करो।

धीरे धीरे जहाज़ किनारे के पास पहुँचा। घंटे की टन् टन् आवाज़ के साथ जहाज़ ने लंगर डाल दिया।

देखते देखते किनारे से कई नावें आईं और जहाज़ से जुट कर खड़ी हुईं। जहाज़ के यात्री सीढ़ी के ज़रिये इन नावों में कोलाहल करते हुए उतरे। अव्वल दर्जे की एक नाव में रामनिधि बाबू और तीन साहब उतर कर तीर पर आ खड़े हुए।

महानदी की नहर में होकर स्टीमर सवेरे कटक जायगा। घाट के पास ही चाँदवाली का डाक-बँगला है। वहीं रात बितानी होगी।

रामनिधि बाबू तीनों साहबों के पीछे पीछे डाक-बँगले में पहुँचे। वहाँ जाकर देखा कि बँगले में दो ही कमरे और इतने ही पलँग हैं।

दो साहबों ने एक कमरे में प्रवेश किया। तीसरे साहब ने दूसरे कमरे पर दख़ल जमाया। रामनिधि बाबू उस कमरे में ज्यों ही घुसने जा रहे थे त्यों ही साहब ने रोक कर कहा—देखते

नहीं, मैं इस कमरे में ठहरा हुआ हूँ; अब और जगह कहाँ है ?

रामनिधि ने कहा—क्यों, दूसरे कमरे में भी तो दो आदमी ठहरे हैं।

"इसमें तो एक ही पलँग है।"

"उस कमरे में भी एक ही है। आप खुशी से पलँग पर आराम कीजिए। मैं तो फ़र्श पर बिस्तरा बिछा कर सो जाऊँगा।"

साहब ने बिगड़ कर कहा—यह नहीं हो सकता। मैं एक नेटिव को अपने कमरे में सोने न दूँगा। यह डाक-बँगला साहबों के लिए है। नेटिवों के लिए बाज़ार में सराय है। आप वहाँ जा सकते हैं।

रामनिधि बाबू अब तक विनय के साथ बात-चीत कर रहे थे। साहब की यह उद्धतता देख कर उन्होंने भी साहब की परिपाटी को ग्रहण किया। कहने लगे—साहब, आप क्या यह समझते हैं कि इस पृथ्वी की रचना साहबों के लिए ही हुई है ? नेटिवों के लिए कहीं जगह ही नहीं ? यह डाक-बँगला गवर्नमेण्ट ने सर्वसाधारण के लिए बनवा दिया है, खास कर साहबों के लिए ही नहीं। मैं यहाँ ज़रूर ठहरूँगा।

इस पर साहब ने नीली पीली आँखें दिखाईं और बड़ी ऐंठ के साथ खटखट करते हुए बरामदे के कोने पर पहुँचकर

"बोई" "बोई" "खानसामा" कह कर पुकारा। हुज़ूर क कर खानसामा दौड़ा आया। साहब ने कहा—खानसामा इस बाबू को निकाल दो। साहब लोगों के डाक-बँगले में बा को क्यों आने दिया ?

खानसामा बोला—हुज़ूर, बाबू लोगों को भी आने का हुक्म है।

साहब बड़े ज़ोर से चिल्ला कर बोला—डैम, सुअर का बचा! कहाँ है तुम्हरा रूल्स, ले आओ।

खानसामा बोला—साहब, मैं मुसलमान हूँ। मुझे सुअर का बचा न कहना। कमरे में वह रूल टँगा है, जाकर देख लो।

साहब ने जाकर छपे हुए नियम पढ़े। उसमें लिखा था कि भले मनुष्य यात्री चौबीस घंटे यहाँ ठहर सकते हैं। गोरे-काले का कोई भेद नहीं। एक कमरे में एक से अधिक आदमी न ठहर सकेगा। ऐसी कोई शर्त नहीं। बल्कि लिखा था कि एक कमरे में जितने आदमी ठहरेंगे उन सबको नित्य एक एक रुपये के हिसाब से भाड़ा देना होगा।

साहब ने बरामदे में आकर कहा —"आलराइट। हमारा सामान उस कमरे में पहुँचाओ।" यह कह कर वह दूसरे कमरे में घुस गया। उसका नौकर उसके माल-असबाब को निकाल कर वहीं ले गया।

रामनिधि बाबू ने अब उस कमरे में जाकर अपना दखल

जमाया । ख़ानसामा बोला—हुज़ूर, क्या कहूँ, अँगरेज़ों का राज्य है । जो आज दिल्ली की बादशाहत होती तो इसका टेंटुआ दबा देता । मुसलमान को सुअर का बच्चा कह कर आज यह बेदाग़ बच गया ! क्या करें हुज़ूर, हम लोगों की क़िस्मत ही बिगड़ी है ।

सामान को क़रीने से रख कर, रामनिधि बाबू चाय पीकर, फिर बरामदे में आराम-कुरसी लाकर ध्यान के साथ बाइबिल पढ़ने लगे । पढ़ते पढ़ते एक स्थान पर मिला—

But I say unto, that who so ever is angry with his brother without a cause shall be in danger of the judgment * * * but who so ever shall say, Thou fool, shall be in danger of hell-fire.

Mathew--5, 22.

(अनुवाद—किन्तु मैं (ईसा मसीह) तुमसे कहता हूँ कि बिना कारण यदि कोई अपने भाई पर क्रोध करेगा तो उसे (ईश्वर के) विचाराधीन होना होगा । ❀ ❀ ❀ ❀ जो कोई कहेगा, अरे मूर्ख, उसे नरकाग्नि का भय होगा ।

मत्ती—५, २२)

इधर दूसरे कमरे में तीनों साहब फट् फट् सोडा की बोतल खोलकर ब्राण्डी के गिलास में सोडा वाटर उँड़ेलने लगे । एक साहब रामनिधि को सुना सुना कर कहने लगा—आज-कल काले-कलूटे हबशियों ने चाँदनी का सस्ता सूट और

दो रुपये का सादा टोप ख़रीद कर यूरोपियनों की बराबरी करना शुरू किया है।

दूसरे साहब ने कहा—यह हमीं लोगों का दोष है। हमीं ने उनको लिखना-पढ़ना सिखा कर उनकी हिम्मत बढ़ा दी है।

तीसरे साहब ने कहा—तो अब इस मर्ज़ की दवा क्या है?

पहले बोलनेवाले साहब ने कहा—'A few kicks judiciously administered." (अर्थात् विचारपूर्वक कई ठोकरें लगाना।)

शाम की रोशनी धुँधली पड़ने लगी। रामनिधि झुककर कष्ट से पढ़ने लगे—

At the same time came the disciples unto Jesus, saying, who is the greatest in the kingdom of the heaven?

And Jesus called a little child unto whom and set him in the midst of them.

And said, verily I say unto you, except ye be converted, and become as little children, ye shall not enter into the kingdom of heaven.

Whosoever therefore shall humble himself as this little child, the same is greatest in the kingdom of heaven.

MATHEW—18, 1—4.

(अनुवाद—तब शिष्यों ने आकर मसीहा से पूछा—स्वर्ग-राज्य में सबसे बड़ा कौन है ?

ईसा ने एक छोटे से बच्चे को अपने पास बुला कर उसको बीच में बिठा दिया।

और कहा, मैं तुमसे सत्य कहता हूँ, कि तुम परिवर्त्तित होकर इस छोटे से बच्चे की तरह न हो सकोगे तो स्वर्गराज्य में पाँव न रखने पाओगे।

इस कारण, स्वर्गराज्य में वही सबसे बड़ा होगा जो इस छोटे से बच्चे की तरह नम्र हो सकेगा।

मत्ती—१८, १-४)

अँधेरा हो आया। रामनिधि बाबू कमरे में चले गये। वे उजेले में बैठ कर पढ़ने लगे। दूसरे कमरे में साहबों ने शराब से मतवाले होकर अश्लील हँसी का गीत छेड़ा।



आठवाँ परिच्छेद

महान्ति-परिवार

दूसरे दिन सवेरे रामनिधि बाबू स्टीमर पर सवार हो कटक के लिए रवाना हुए। यथासमय वहाँ पहुँच कर डाक-बँगले में ठहरे।

कटक शहर सुन्दर है। जिस नगर में नदी नहीं होती वह

नगर समृद्ध होने पर भी शोभाहीन रहता है। कटक में दो दो नदियाँ हैं। उत्तर की सीमा पर महानदी और दक्षिण की ओर काटजूड़ी बहती है।

रामनिधि बाबू कलकत्ते के पादरी साहब से कटक के पादरी साहब और अन्य गण्यमान्य ईसाइयों के नाम परिचय-पत्र लाये थे। वे पहले पादरी साहब से मिलने गये।

साधारण शिष्टाचार के बाद पादरी साहब ने पूछा—किस दिन ईसाई-धर्म में दीक्षित होना चाहते हैं?

रामनिधि ने कहा—बाइबिल पढ़ रहा हूँ। कुछ और देख लेने पर, ईसाई-धर्म का सार सत्य हृदयंगम होते ही, ईसाई-धर्म ग्रहण करने की इच्छा है।

पादरी साहब ने कहा—अच्छी बात है। आपके देश के अनेक लोग ईसाई-धर्म को बिना समझे-बूझे ईसाई हो जाते हैं—यह ठीक नहीं। किन्तु उनकी अपेक्षा इसमें हमारा ही अधिक अपराध है। क्योंकि हम लोग सोचते हैं कि इसे ईसाई कर लेने पर फिर यह कहाँ जा सकेगा? किन्तु यह बड़ी भूल है। धर्म कुछ दवा नहीं है कि धर-बाँध कर पिला देने से ही उपकार होगा। इसके सिवा मनुष्य विचारशील प्राणी है। जो काम उसने अपनी विचार-बुद्धि के अनुसार नहीं किया उसके करने का मूल्य ही क्या? हम लोग बैपटिस्ट-सम्प्रदाय के हैं। दूसरे प्रोटेस्टेण्टों से हममें इतना ही भेद है कि वे बच्चे को, पैदा होने के कुछ दिन बाद ही, गिरजे में

ले जाकर और पवित्र जल से नहला कर दीक्षित कर लाते हैं। हम लोग वैसा नहीं करते। हम लोगों के बेटे-बेटी जब पन्द्रह-सोलह वर्ष के हो जाते हैं और जब वे ईसाई-धर्म की सत्यता समझ सकते हैं तभी उनको दीक्षा दी जाती है।

धर्मसम्बन्ध में कुछ और बात-चीत करके रामनिधि बाबू चले आये।

शाम को श्रीयुत श्यामचरण महान्ति से मिलने गये। महान्ति महाशय उड़ीसा के ही थे और कैम्ब्रिज-विश्वविद्यालय के उपाधिधारी थे। ये विलायत से एक मेम का पाणि-ग्रहण कर लाये थे। अब कटक-कालेज में बहुत दिनों से अध्यापकी करते हैं। इनके दो बेटे और एक बेटी है। बड़ा लड़का विलायत में पढ़ रहा है। छोटा कटक-कालेज में पढ़ता है। वह चौदह वर्ष का है। बेटी की उम्र अट्ठारह वर्ष की है। नाम थियोडोरा (ईश्वर का दान) है, परन्तु सब लोग उसे डोरा ही कहते हैं।

महान्ति-परिवार ने बड़े आदर के साथ रामनिधि बाबू की अभ्यर्थना की। ये लोग सदा अँगरेज़ी भाषा में ही बात-चीत किया करते हैं। गृहिणी ने कहा—आप बहुत अच्छे वक़्त पर आये। शीघ्र ही हमारे परिवार में एक शुभकर्म होने-वाला है। दस दिन के बाद मेरी बेटी डोरा का ब्याह है।

कुमारी डोरा उस जगह बैठी थी। विवाह की बात से उसके गाल लाल हो गये।

रामनिधि ने कहा—अच्छा-अच्छा। यह मेरे सौभाग्य की बात है कि मैं यहाँ आनन्द-उत्सव के समय आया हूँ। कुमारी महान्ति का अभिनन्दन करता हूँ। वह भाग्यवान् पुरुष कौन है।

मिसेस महान्ति ने कहा—उनसे शीघ्र ही मुलाकात हो जायगी। उनका नाम डाक्टर कृष्णस्वामी है—वे मद्रास-प्रान्त मे सिविल सर्जन हैं। स्वास्थ्य सुधारने के लिए छः महीने की छुट्टी लेकर वे यहीं कटक में रहते हैं। अब उनकी छुट्टी पूरी होने को है। इससे वे मेरी बेटी को छीनने के लिए शीघ्रता कर रहे हैं।

रामनिधि ने मुसकुरा कर कहा—यह तो उनका बड़ा अन्याय है! उनका यह अपराध क्षमा करने योग्य नहीं। कुमारी महान्ति की क्या राय है?

डोरा ने लज्जा के साथ मुसकुरा कहा—"Judge not, that ye be not judged." —(किसी का भी फैसला न करना, नहीं तो तुमको ईश्वर के विचाराधीन होना होगा।)

गृहिणी बोलीं—"देखिए मेरी डोरा को बाइबिल बिलकुल कंठ है।" उनका मातृ-हृदय कन्या के गौरव से फड़क उठा।

रामनिधि ने कहा—इनकी हाज़िर जवाबी प्रशंसनीय है। ये तो बड़ी कुशलता से जाल काट कर निकल गईं।

थोड़ी देर तक इस प्रकार बातचीत हुई थी कि इतने में डाक्टर कृष्णस्वामी आ पहुँचे। गृहिणी ने रामनिधि से

उनका परिचय करा दिया। यथासमय अध्यापक महान्ति भी आकर सभा में सम्मिलित हुए।

महान्ति महाशय ने कहा—मिस्टर दास, आपने हम लोगों का गिरजाघर देखा है ?

"जी हाँ, देखा है। वही कालेज के पास का बड़े बाग़-वाला गिरजा ?"

"जी नहीं, वह तो यूरोपियनों का गिरजा है। हम लोगों का गिरजा मिशन प्रेस के पास है। हमारा गिरजा यूरोपियनों के गिरजे जैसा सुन्दर भले न हो तथापि मुफ़स्सल के ख़याल से बहुत अच्छा है। रविवार को आपको ले चलूँगा।"

कुमारी डोरा ने कहा—पिताजी, इस रविवार को तो होली कम्यूनियन सर्विस है। हम लोगों को यूरोपियनों के गिरजे में जाना होगा।

अध्यापक महान्ति ने कहा—हाँ-हाँ, भूल गया था ! इस रविवार को यूरोपीय और देशी क्रिस्तान होली कम्यूनि-यन में शामिल होंगे।

रामनिधि ने पूछा—क्यों साहब, देशी गिरजे में होली कम्यूनियन क्यों नहीं होता ?

"होने में कोई बाधा तो नहीं है; पर सब मनुष्य भाई भाई हैं, यह सूचित करने के लिए हर साल इस दिन यूरोपीय और देशी क्रिस्तान बड़े गिरजे में एकत्र होते हैं।"

रामनिधि ने कहा—साल में केवल एक ही दिन ? और दिन क्या यूरोपीय गिरजे में देशी क्रिस्तानों को जाने की मनाही है।

बात बहुत रूखी मालूम हुई। महान्ति-परिवार के मुँह मे धुवाँ सा छा गया। मिसेस महान्ति यूरोपियन होने पर भी भारतवासी के साथ विवाह करने के गुरुतर अपराध के कारण कटक के यूरोपीय समाज-द्वारा जातिच्युत की गई थीं।

अध्यापक महान्ति ने तुरन्त कहा—जी नहीं—जाने मे मुमानियत नहीं है। जाना चाहें तो देशी क्रिस्तान भी साहबों के गिरजे में जाकर उपासना कर सकते हैं। हाँ, पोशाक ज़रा तड़क-भड़क की होनी चाहिए।

कुमारी डोरा ने कहा—बाबा, पोशाक के सम्बन्ध का ऐसा कड़ा नियम होने पर तो वे बारह शिष्य भी—जिनको ईसा ने जगह जगह प्रचार करने के लिए भेजा था,—यदि इस गिरजे में आते तो प्रवेश न करने पाते। क्योंकि यीशू ने आज्ञा दी थी कि तुम लोगों में से न तो किसी के पास एक से अधिक कोट हो, और न पाँव में जूते हों।

महान्ति-गृहिणी ने देखा कि बातचीत का सिलसिला धीरे धीरे अरुचिकर विषय की ओर जा रहा है। इसी से उन्होंने चतुराई के साथ दूसरी बात छेड़ दी। डाक्टर कृष्णस्वामी, दूसरों की नज़र बचा, रामनिधि बाबू की ओर

देखकर मुसकुराने लगे। मानों उनका यह मतलब था—भाई, अब तक चौखट भी तो नहीं लाँघी है। चौखट पार करने पर बहुत सी अद्भुत बातें जान जाओगे।

नवाँ परिच्छेद

भाईचारे का परिचय

महान्ति-परिवार के निष्कपट सादर व्यवहार से रामनिधि बाबू बहुत सन्तुष्ट हुए। इनके विशेष आग्रह से रामनिधि बाबू डाक-बँगला छोड़ कर इन्हीं के मेहमान हो गये हैं।

रविवार आया। रामनिधि बाबू सज-धज कर महान्ति-परिवार के साथ होली-कम्यूनियन-धर्मोत्सव देखने के लिए साहबों के गिरजाघर में गये।

हर साल ऐसा होता था कि जब जो आता था, मनमानी जगह पर बैठ जाता था। इस वर्ष नई बात यह हुई कि सामने की कई कुर्सियाँ गोरे साहबों के लिए सुरक्षित कर दी गईं। यह देख कर देशी क्रिस्तान मन में कुढ़ गये।

एक एक कर साहब लोग आगये। तब, उनके आजाने पर, उपासना आदि कार्य आरम्भ हुआ। उपासना के अन्त में एक पात्र से सब क्रिस्तानों को एक एक घूँट शराब पीनी

पड़ती थी। पहले गोरे साहबों की पंक्ति की ओर पात्र लाया गया। उन लोगों के शराब पी चुकने पर देशी क्रिस्तानों का नम्बर आया।

देशी क्रिस्तानों ने कुछ नहीं कहा। इससे स्पष्ट हो गया कि इसमें वे बड़ा अपमान समझ रहे हैं।

उत्सव समाप्त होने पर सब लोग बाहर आये। तब इस बात की आलोचना होने लगी। स्थान स्थान पर एकत्र होकर देशी ईसाई लोग इस बात का तीव्र प्रतिवाद करने लगे। दो युवकों ने आगे बढ़ कर गिरजे के पादरी से इसकी कैफ़ियत माँगी। पादरी साहब ने कहा—इसमें दोष ही क्या है? जज, मजिस्ट्रेट और कमिश्नर आदि समाज के अगुआ हैं। जो सभी इनकी बराबरी करना चाहेंगे तो काम कैसे चलेगा?

युवकों ने कहा—अच्छा, माना कि वे समाज के अगुआ सही। उनको जाने दो। लेकिन उनके सिवा और भी तो बहुत से गोरे साहब थे, जिनकी अपेक्षा उच्चपदस्थ व्यक्ति देशी क्रिस्तानों में थे। तब, उनको पीछे जगह क्यों दी गई थी। पद-गौरव की बात मत उठाइए, यह स्वीकार कीजिए कि गोरे और काले रङ्ग के अनुसार यह भेद किया गया था।

पादरी साहब इस बात का कुछ अच्छा उत्तर न दे सके।

घर लौटते वक्त़ देशी क्रिस्तान कहने लगे—ऐसे ही व्यव-हार के कारण तो शिक्षित भारतवासी सहज में ईसाई-धर्म

ग्रहण नहीं करते। यीशु ने जो यह उपदेश दिया है कि सब मनुष्य भाई भाई हैं, उसका परिचय आज मिल गया।"*

आदि से अन्त तक इस मामले को देख कर रामनिधि बाबू के हृदय में गहरी चोट लगी। जिस आशा से वे ईसाई होने को तैयार हुए थे वह आशा मृगतृष्णा की तरह दिखाई देने लगी। उस दिन घर पर पहुँच कर उन्होंने बहुत सोच-विचार किया। किसी से खुल कर बातचीत नहीं की। घर के लोगों ने उनका यह भावान्तर देखा। कारण सबको मालूम था ही। रामनिधि बाबू के दिल से विषाद के काले परदे को हटाने की उन लोगों ने बहुत कोशिश की।

कुमारी डोरा के विवाह के लिए अब केवल सात दिन बाक़ी हैं। विवाह के समय घर वग़ैरह किस तरह सजाना होगा, निमन्त्रित लोगों को कहाँ बिठाना होगा, उनके खाने-पीने का कैसा क्या बन्दोबस्त किया जाय—इन सब बातों की सलाह महान्ति-गृहिणी रामनिधि बाबू से ख़ास कर करने लगीं। लगातार कई दिनों के आनन्द-उत्सव के प्रबन्ध से उनका मन बहुत कुछ प्रफुल्लित हो उठा।

---

* यह घटना बिलकुल सच है। कटक से प्रकाशित और श्रीयुक्त चीरोद-चन्द्र राय चौधरी द्वारा सम्पादित २० जुलाई सन् १६०७ के Star of Utkal नामक अख़बार में, एक ईसाई की चिट्ठी में उक्त घटना का वर्णन प्रकाशित हुआ है।

क्रम से विवाह का दिन आया। देशी गिरजे में जाकर शुभ विवाह सम्पन्न हुआ। शहर के हिन्दू, मुसलमान, क्रिस्तान, बहुत लोगों को निमन्त्रण दिया गया था। हिन्दू, मुसलमान, और देशी क्रिस्तान भाइयों ने आकर दूलह-दूलहिन को आशीर्वाद दिया; और सभी हँसी-खुशी से जलसे में शामिल हुए। हिन्दू लोग केवल फलमूल खाकर तथा मुसलमान और देशी क्रिस्तान नाना प्रकार के रसनारसाल उपादेय भोजन-पान से तृप्त होकर घर लौटे। साहबों के लिए एक तम्बू अलग खड़ा किया गया था। कई बकसों में शेरी-शैम्पियन और बढ़िया सिगरेट बहुतायत से आये थे। किन्तु दो पादरियों और स्थानीय यूरेशियन पोस्टमास्टर के सिवा एक भी साहब नहीं आया। कमिश्नर ने लिखा था कि पत्नी के बीमार होने के कारण आने में असमर्थ हैं। जज ने लिखा था कि उन्होंने इस वक़्त के लिए दूसरी जगह का निमन्त्रण पहले ही स्वीकार कर लिया है, इसलिए आने में असमर्थ हैं। मजिस्ट्रेट ने निमन्त्रणपत्र का कुछ उत्तर देना आवश्यक नहीं समझा। डाक्टर साहब ने पहले निमन्त्रण में आना स्वीकार कर लिया था किन्तु विवाह के दिन चाँदी का बना फ़ोटो का फ़्रेम दूलह-दुलहिन को उपहार भेज कर लिखा कि अकस्मात् घर में अतिथि आगये हैं, इससे लाचार हो गया हूँ—आ न सकूँगा। शेरी-शैम्पियन की पेटियाँ आधी क़ीमत में दूकान-दार को लौटा दी गईं।

नवदम्पती ने भुवनेश्वर के डाक-बँगले में "मधुचन्द्र" (honey-moon) का समय बिताना स्थिर किया था। मांगल्य की वृष्टि होते हुए वे गाड़ी पर चढ़ कर शाम को रवाना हुए।

दसवाँ परिच्छेद

जहाँ के तहाँ

"मिस्टर दास—मिस्टर दास—घूमने चलिएगा ?" अध्यापक महान्ति के छोटे पुत्र ने आकर कहा—चलिए न, ज़रा हवाखोरी कर आवें।

रामनिधि बाबू ने कहा—किस तरफ़ चलोगे ?

"महानदी के तट पर। ऐसा सुन्दर प्रातःकाल क्या घर में बैठे बैठे नष्ट किया जायगा ?"

रामनिधि ने उठकर कहा—चलो।

दोनों सवेरे की हवा खाने बाहर निकले। तारघर के सामने से, अँगरेज़ों के बँगलों के बीच से, होकर नदी-किनारे आ पहुँचे। नदी का पानी इधर-उधर सूख कर बीच में बह रहा था। कुछ अन्तर पर धोबी कपड़े धो रहे थे। दोनों सैलानी, बालू पाट कर वहाँ जा, धोबियों का कपड़ा धोना देखने लगे। नदी-किनारे बाँस गाड़ कर और कपड़े से घेर कर धोबियों ने हवा के झोंके रोकने के लिए घर सा बना

लिया था। वहाँ भट्टियों पर चार जल में मैले कपड़े उबाले जा रहे थे।

पाल ने कहा—उँह—ये धोबी कैसे काले-कलूटे हैं!

रामनिधि ने कहा—तुम्हारे लेखे काला हो सकता है, किन्तु क्या मुझसे अधिक काला है, पाल?

रामनिधि के स्वर में कुछ रुखाई सी थी। इसी से पाल ने कुछ लज्जित होकर कहा—नहीं-नहीं; मेरा यह मतलब नहीं था मिस्टर दास। आप नाराज़ क्यों होते हैं?

रामनिधि ने कहा—नहीं साहब, मैं नाराज़ नहीं होता। एक बात बताता हूँ। देखो पाल, मैं भी धोबी हूँ।

पाल बोला—नहीं जी, आप मज़ाक़ करते हैं।

"अजी मज़ाक़ नहीं, सच्ची बात है। यह ठीक है कि मैंने कभी कपड़े नहीं धोये पर मेरे बाप-दादा ने इसी प्रकार घाट पर कपड़े धो-धोकर अपने दिन बिताये हैं।"

पाल ने गम्भीर होकर कहा—मैं तो इसमें कुछ बदनामी नहीं समझता। शारीरिक परिश्रम करके जीविका चलाने में किसी को भी लज्जित होने का कारण नहीं।

रामनिधि ने कहा—यह हाल में निकले हुए नीतिशास्त्र की बात है। किन्तु अभी तक हमारे देश में और यूरोप में भी शारीरिक परिश्रम करके गुज़र करना लज्जा की बात मानी जाती है।

पाल बोला—यह बात सच है। आप, मैं और नवयुग

के अन्यान्य शिक्षित व्यक्ति इस भ्रान्त विश्वास को चूर्ण कर देंगे।

इस प्रकार बातचीत करते करते दोनों नदी के किनारे किनारे आगे की ओर बढ़ने लगे। एक जगह जलाने की बहुत सी लकड़ियाँ जमी थीं। उड़ीसा के जङ्गलों से यह नदी के रास्ते बहा कर लाई गई थीं।

एक मील चलने पर नदी का जल अधिक चक्करदार दिखाई पड़ा। वहाँ संभवतः अधिक गहराई थी। प्रभात की नवीन किरणों से नदी का जल साफ़ साफ़ हरे रंग का हो रहा था। किनारा पत्थर से बँधा था। उसी घाट पर थोड़ी देर बैठकर दोनों ने विश्राम किया।

थोड़ी दूर पर ही बड़ी ऊँची, चुनी, दीवार दिखाई दे रही थी। झाऊ, देवदारु आदि पेड़ों के सिरे भी दीख पड़े। रामनिधि बाबू ने पूछा—यह तो किसी बड़े आदमी का वाटिका-गृह मालूम होता है!

पाल बोला—जी नहीं, यह क़ब्रिस्तान है। देखिएगा? इधर से घूम कर चलने पर इसका फाटक मिलेगा। यह तो पीछे की दीवार है।

रामनिधि ने कहा—चलो न, देख लें।

दोनों ही दीवार के पास से जाकर और दूसरी ओर घूम कर फाटक पर पहुँचे। फाटक पर दरबान बैठा था। भीतर जा कर रामनिधि ने देखा कि जगह फल, फूल, लता, पत्र से बहुत

मनोरम है। अच्छे अच्छे गुलाब के पेड़ लगे हैं। उनमें सफ़ेद पीले और लाल फूल खिले हुए हैं। विचित्र रङ्ग के विलायती फूलों—पापी, ब्लू-बेल, मार्गरेट, पैंसी आदि—के पेड़ हैं। पत्तों की शोभा फैलानेवाले नाना प्रकार के पेड़ हैं। जगह जगह पर माली काम में लगे हैं। कोई फूल के पेड़ों में पानी दे रहा है, कोई घास छील रहा है और कोई सूखे पत्ते बटोर कर सफ़ाई कर रहा है।

क़ब्रिस्तान में सर्वत्र लाल कंकड़ों का रास्ता अनेक शाखाओं में विभक्त है। छोटे छोटे फूल के पेड़ों के सिवा बड़े बड़े फूलों के भी पेड़ हैं—जैसे, कनैर, कृष्णचूड़ा, करनी आदि। देवदारु के नये नये पत्तों से हवा छेड़-छाड़ कर रही है। चिड़ियाँ पेड़ों की डालियों में बैठी चहचहा रही हैं। जगह साफ़-सुथरी है। कहीं फ़िज़ूल एक तिनका भी नहीं है।

थोड़ी देर घूमने पर बाग़ के चौधरी ने इन दोनों को दो गुलदस्ते लाकर नज़र किये। रामनिधि ने उसे चवन्नी देकर सन्तुष्ट किया।

कुछ देर तक घूमते फिरते दोनों समाधि-लिपि पढ़ने लगे। ऐसी समधियाँ भी दिखाई पड़ीं जो सौ व की पुरानी थीं।

घूमते घूमते रामनिधि ने पूछा—अच्छा, इतनी समाधियाँ देखीं पर देशी क्रिस्तानों की तो एक भी न मिली! तो क्या यहाँ के देशी क्रिस्तान अमर हैं?

पाल बोला—देशी क्रिस्तानों का क़ब्रिस्तान अलग है।

पास ही है। वह जो दूर दीवार दिखाई देती है, उस दीवार के पीछे देशी क्रिस्तानों का क़ब्रिस्तान है।

रामनिधि बाबू के दिल में वही पुराना दर्द फिर दुगुन हो उठा। उन्होंने कहा—अलग! क़ब्रिस्तान भी अलग है?

"जी हाँ।"

"चलो, देख लें।"

"वहाँ देखने लायक़ तो कोई चीज़ नहीं।"

"है क्यों नहीं। तुम्हारे-हमारे भाई-बहन वहीं हैं। हम लोगों के अपमानित लाञ्छित स्वजातीय वहाँ हैं। चलो, चल कर देखें।"

"अच्छा, चलिए।"

जाते जाते रामनिधि ने पूछा—"देशी क्रिस्तान के मरने पर क्या उसको यहाँ दफ़नाने की मुमानियत है?"

पाल बोला—मुझे मालूम नहीं।

रामनिधि ने कहा—अच्छा पाल, यदि कोई देशी क्रिस्तान रैंकेन या हैरी क्लार्क की दूकान की पोशाक पहन कर मरे तो भी क्या उसको यहाँ मिट्टी देना मना है? रामनिधि का स्वर उत्तेजित था।

पाल ने कुछ उत्तर नहीं दिया, वह सिर झुका कर रामनिधि के साथ साथ चला।

यूरोपियनों के क़ब्रिस्तान से निकल कर दोनों भारतीय क्रिस्तानों के क़ब्रिस्तान में गये। उसकी चहार-दीवारी टूटी-

फटी पड़ी है। हर साल बरसात में पानी लगने से सीमेंट अलग हो जाने के कारण दीवारें फट गई हैं। जगह जगह गिरी-पड़ी हैं। जगह जगह दीवार को छेद कर पीपल और बरगद के छोटे छोटे पेड़ निकल आये हैं। दरवाज़े पर दरबान नहीं। फाटक आधा टूटा पड़ा है। पशु स्वच्छन्दता से भीतर जा सकते और विचर सकते हैं। सर्वत्र जंगली कँटीले पेड़ खड़े हैं। पुराने जंगली पेड़ सूख कर गिर गये हैं, उनके पास ही नये जंगली पेड़ पैदा हो गये हैं। इधर-उधर जो गोबर और लेंड़ियाँ पड़ी हैं उनसे पेड़ों के लिए खाद मिल जाती है। एक जगह एक मरी बिल्ली पड़ी है। फूल के पेड़ों में से इधर-उधर केवल कुछ कनेर के पेड़ दिखाई पड़े।

क़ब्रों की भी यही दशा है। अधिकांश कच्ची हैं—मिट्टी का छोटा सा ढेर लगा है। कौन किसकी क़ब्र है? यह जानने का कोई उपाय नहीं। इनकी अपेक्षा जो कुछ बड़े होंगे उनकी क़ब्रें ईंटों की थीं। इसके ऊपर गड़ी हुई मिट्टी के तेल की सन्दूक की पटरी पर कोलतार से समाधिस्थ व्यक्ति का नाम-धाम लिख दिया गया है। कोई दस बारह क़ब्रें ऐसी भी हैं, जो अच्छी बनी हैं। उनमें से दो अँगरेज़ पादरियों की हैं। रामनिधि बाबू सोचने लगे कि देशियों में मिल जाने के अपराध के कारण इन दोनों पादरियों की प्रेतात्मा सम्भवतः यूरोपीय परलोक से जातिच्युत हो गई है।

देशी क्रिस्तानों की क़ब्र पर लिखे हुए अधिकांश नाम विदेशी हैं—जैसे एलिजाबेथ चक्रवर्ती, जान ईज़िकियेल महापात्र इत्यादि। रामनिधि ने घूमते घूमते दो ऐसी क़ब्रें देखीं, जिन पर देशी नाम लिखा था। एक में लिखा है—

In Memory
of
Coomari Sushi Mukhi

दूसरी पर लिखा है—

In
Loving Memory
of
Our Sweet Little Indira

रामनिधि ने अपने मन में कहा—"फिर भी ग़नीमत है—फिर भी ग़नीमत है—अपने देश का नाम तो रहने दिया, यही क्या कम है।" भाव के आवेग से रामनिधि की आँखों में आँसू भर आये।

पाल ने कहा—चलिए मिस्टर दास—धूप चढ़ आई।

रामनिधि ने कहा—भाई, मैं मिस्टर दास नहीं। मैं तो रामनिधि बाबू हूँ।

दोनों क़ब्रिस्तान से बाहर निकले। रामनिधि आगे आगे चले और पाल पीछे पीछे। फाटक पार करते वक़्त अकस्मात् पीछे लौट कर रामनिधि ने कहा—देखो पाल, ये लोग मृत्यु के

बाद भी गोरे-काले का भेद नहीं भूल सके। ईसा मसीह यदि आज एकाएक पृथ्वी पर आ जायँ, तो अपने शिष्यों का आचरण देख उनको लज्जा से सिर झुका कर स्वर्गराज्य में लौट जाना पड़े।

पाल चुपचाप रामनिधि बाबू के साथ साथ चला।

घर लौटने पर रामनिधि ने देखा कि उनके नाम से कई चिट्ठियाँ आई हैं। उनमें से एक चिट्ठी उनकी माता ने लिखवाई है। वह चिट्ठी इस प्रकार थी—

श्रीश्रीदुर्गा सहाय

कल्याणपुर

मेरे, प्यारे बेटा रामनिधि, मैंने दस महीने तुमको पेट में रक्खा था, क्या उसी का तुम यह बदला दे रहे हो? बेटा, भट्टाचार्यजी से सुना है कि तुम क्रिस्तान हो जाना चाहते हो। यह सुनते ही मैं अन्न-जल छोड़ कर कलकत्ते दौड़ी गई, किन्तु तुम ऐसे पाषाण-हृदय बन गये कि हम लोगों से भेंट तक न की। दूसरे दिन हम लोग फिर गये थे, पर वहाँ सुना कि तुम कहीं बाहर चले गये हो। घर लौटकर उस दिन से मैं ज़मीन पर पड़ी हूँ, दरबानों को रुपया देकर बड़ी मुश्किलों से गोविन्द सरकार तुम्हारे कटक के ठिकाने का पता हाल में ही लगा लाये हैं। इसी से तुमको आज चिट्ठी

लिखाती हूँ। अब मेरी देह में सामर्थ्य नहीं। यदि होती तो फिर कटक पहुँचती और तुमको लौटा लाने की एक बार कोशिश करती। बेटा, क्या तुम सचमुच क्रिस्तान हो गये हो? यदि हो ही गये हो तो कुछ हर्ज नहीं, मैं प्रायश्चित्त कराके तुमको जाति में मिला लूँगी। भट्टाचार्यजी ने विधान बताया है। यदि अभी तक क्रिस्तान न हुए हो, तो तुमसे विनती करती हूँ कि क्रिस्तान न होना। मेरी आँखों के तारे बेटे, घर लौट आना। यदि न आओगे तो तुमको मा की हत्या का पाप लगेगा। अपने पादरी साहब से पूछना कि माँ की हत्या में क्या कोई पुन्य है? मैं रोते रोते अन्धी होगई हूँ। मुझ अन्धी के सहारे, बेटे रामनिधि लौट आओ।

तुम्हारी दुःखिनी

माँ।

लेखक—श्रीगोविन्दचन्द्र सरकार।

चिट्ठी पढ़ कर रामनिधि ने ठण्ठी साँस ली। और काग़ज़ क़लम लेकर माँ को यह चिट्ठी लिखी—"माँ, मैं अभी तक क्रिस्तान नहीं हुआ। अब क्रिस्तान होने की इच्छा भी नहीं। तुम्हारा अधम बेटा बहुत जल्द तुम्हारे चरणों पर माथा रखने को घर पहुँचेगा।"

डाक में चिट्ठी छोड़ कर रामनिधि ने महान्ति-परिवार से विदा माँगी और अँगरेज़ी सूट-बूट फेंककर देशी कुर्ता-धोती पहनी। फिर बैलगाड़ी की सवारी से रामनिधि उसी दिन पुरी को रवाना हुए। वहाँ सिर मुँड़ा कर प्रायश्चित्त किया और जगन्नाथ स्वामी का दर्शन करके एक सप्ताह के बाद घर लौट आये। यह भाग्य की बात है कि रामनिधि बाबू इस प्रकार भटक कर भी "जहाँ के तहाँ" आगये।

विलायती

मुक्ति

पहला परिच्छेद

लन्दन में एक कमरे में एक बंगाली युवक बैठा है। कमरे में बिजली की ख़ासी रोशनी फैल रही है।

कमरा बहुत बड़ा नहीं है। बीच में एक टेबल रक्खा है। उस पर गेरुए रंग का 'बेज' कपड़ा पड़ा है। चारों ओर चार कुर्सियाँ पड़ी हैं। कुछ अन्तर पर खिड़की के पास एक सोफ़ा रक्खा है। दीवार के पास एक ओर पुस्तकों की आल-मारी है। उसमें डाक्टरी की बहुत सी पुस्तकें क़रीने से रक्खी हैं। आलमारी के ऊपर 'डेली न्यूज़' की कुछ प्रतियाँ और कई मासिक पत्र रक्खे हुए हैं। दूसरी ओर दीवार के अग्निकुण्ड (अँगीठी) में कोयला धधक रहा है। कुण्ड से कुछ ऊपर मैण्टेल पेस है। उसके बीच में एक घड़ी रक्खी है। दोनों ओर कुछ फ़ोटोग्राफ़ और शौक़ीनी की चीज़ें सजाई हुई हैं। फ़ोटो की अधिकांश मूर्तियाँ इसी देश की हैं। बाक़ी में से एक में एक बंगालिन युवती का चेहरा अंकित है।

युवक का नाम चारुचन्द्र चौधरी है। वह एडिनबरा विश्वविद्यालय की एम० बी० परीक्षा पास करके यहाँ आया है। आई० एम० एस० की परीक्षा के लिए तैयारी कर रहा है। यह घर लन्दन के केनसिंगटन नामक अंश में है। इस घर में चारु पहले भी कई बार रह चुका है।

टेबल के पास एक कुर्सी पर चारु बैठा है। वह पाईप-द्वारा तम्बाकू का सेवन करता जाता है और हरे रंग के सान्ध्य समाचार-पत्र को देखता भी जाता है। किन्तु समाचार-पत्र पढ़ने में आज चारु का जी नहीं लगता। उसकी दृष्टि बार बार घड़ी पर पड़ती है।

इसका कारण है। आज शनिवार है न। अन्तिम डिली-वरी से भारत की डाक आनेवाली है। ब्रिंडिसी से जिस दिन और जिस समय लन्दन के लिए डाक रवाना हुई है उसका हिसाब लगाने से आज अन्तिम डिलिवरी से पत्र बटेंगे या नहीं, इसमें सन्देह है। जो आज डाक न आई तो फिर सोमवार को प्रातःकाल से पहले पत्र न मिलेंगे। क्योंकि सभ्य जगत् में लन्दन ही एक ऐसी जगह है जहाँ रविवार को चिट्ठियाँ नहीं बटतीं।

पौने दस बज गये। अब दूर के गृह-द्वारों पर डाकिये का 'नक्र'—खट खट शब्द—होने लगा। वह शब्द क्रम क्रम से समीप आने लगा। क्रम से इस घर के दरवाज़े पर भी शब्द हुआ। अब चारु दम साध कर दासी के आने की प्रतीक्षा करने लगा।

दासी चारु के कमरे के द्वार पर आकर ठहर गई। उसने किवाड़ों पर धक्का देकर पूछा--महाशय, भीतर आ सकती हूँ?

"हाँ, आओ।"

दरवाज़ा खोल कर एडिथ ने कमरे के भीतर पैर रक्खा। उसके हाथ में एक "ट्रे" था जिसमें कि चिट्ठियाँ, पैकेट और पार्सल रक्खे हुए थे। उन्हें वह सावधानी से उठा उठाकर चारु के आगे रखने लगी।

चारु ने धन्यवाद देकर कहा—Good-night Edith.

"Good-night Sir"—कह कर दासी चली गई।

चारु ने अब एक एक कर पत्र पढ़े। उनमें से एक इस प्रकार था—

कलकत्ता

प्रिय चारु,

इस मेल से तुम्हारे पास होने की ख़बर पाकर मुझे बेहद ख़ुशी हुई। एडिनबरा से रवाना होते समय तुमने लन्दन का पता नहीं लिखा। टामस कुक के मारफ़त भेजने से चिट्ठी देर में पहुँचती है। इसी से मैं अन्दाज़िया कैनसिंगटन के पुराने ठिकाने पर ही चिट्ठी भेजती हूँ। मुझे मालूम है कि वहाँ जगह मिल जायगी तो तुम और कहीं जाने को नहीं। करी-पुलाव बनाने में निपुण तुम्हारी लैण्ड-लेडी के लिए पार्सल से आज कुछ मसाला भेजा है।

जिस समय तुम्हारी चिट्ठी मिली, उस समय तुम्हारे भाई साहब कचहरी में थे। इससे बच्चे को ही पकड़ कर मैंने यह शुभ संवाद सुनाया। किन्तु संवाद सुन कर वह बहुत प्रसन्न नहीं हुआ। सिर हिला हिला कर कहने लगा—"मैं दवा न खाऊँगा।" उसका विश्वास है कि घर में डाक्टर होने से प्रति दिन दवा खानी पड़ेगी।

तुम्हारी अन्तिम परीक्षा हो जाय तो फ़िक्र दूर हो। घर का लड़का जल्दी घर लौटे। मैंने तुम्हारे लिए एक लड़की पसन्द की है।

अच्छा, यह तो मैं पहले ही लिख चुकी हूँ कि निर्मला का विवाह हो गया। उसका दुलहा विलायत को रवाना हो गया। नरेन्द्र इसी मेल से जा रहा है। उसकी सास ने मुझसे कहा—"चारु को लिख दो कि वह स्टेशन पर आकर नरेन्द्र को ले जाय। और घर-द्वार का प्रबन्ध कर करा दे। बीच बीच में उसकी खबर भी लेता रहे।" नरेन्द्र मार्सेल्स होकर जा रहा है। इसलिए पत्र पहुँचने के दूसरे दिन लन्दन पहुँचेगा। डोवर पहुँचकर तुमको तार देगा। नरेन्द्र यद्यपि बी० ए० क्लास में पढ़ता था तथापि बहुत ही भोला भाला है। कुछ कुछ भोंदू समझो। विवाह से पहले वह हम लोगों के इस समाज में न आया था। ज़रा लजीला है। बेचारा बिलकुल ही हिन्दू घर की माँ-मौसी और फूफी के अञ्चल का निधि है। देखना, कहीं लन्दन में खो न जाय।

तुम्हारे भाई साहब से रोज़ कहती हूँ कि 'बारिस्टरी करके केवल रुपया जमा करने से क्या होगा, चारु के वहाँ रहते रहते एक बार मुझे विलायत दिखला दो'। लेकिन वे राज़ी नहीं होते।

'चौरः कथं धर्मकथाः शृणोति।' कहते हैं—गुड़गुड़ी लेकर विलायत किस तरह जाऊँ। फेंक भी तो नहीं सकता। तुम अपनी नवीन डाक्टरी विद्या का रंग चढ़ा कर उनको चिट्ठी में लिखो कि हुक़ा पीना महा दोष है और इस तरह उनको डरवा दो। जब तक वे हुक्का पीना न छोड़ेंगे तब तक विलायत के सैल सपाटे की मुझे कोई आशा नहीं।

हम सब अच्छी तरह हैं।

तुम्हारी स्नेहमयी

भाभी

दूसरा परिच्छेद

दूसरे दिन सवेरे जल-पान के बाद एडिथ जब टेबल साफ़ करने लगी, तब चारु ने उससे कहा—मिसेस जोन्स से जाकर पूछो कि वे कुछ मिनट के लिए यहाँ आकर मुझसे मिल सकती हैं?

मिसेस जोन्स चारु की लैण्ड-लेडी हैं। थोड़ी ही देर मे अधेड़ और कुछ मोटी वाली, हँसमुख मिसेस जोन्स ने आकर चारु से—'गुड मार्निंग' की।

चारु ने कहा—मिसेस जोन्स, इस घर में किराये पर उठाने के लिए क्या और कोई कमरे खाली हैं? एक कमरा सोने के लिए और एक उठने-बैठने के लिए दे सकती हो?

"बैठक का कमरा तो नहीं है मिस्टर चौधरी। हाँ, सोने का कमरा ज़रूर खाली है। उस दिन डब्लिन से एक आयरिश-दम्पती अपनी बेटी के साथ आये हैं न; इसी से एक बैठने के कमरे को सोने का कमरा बना देना पड़ा है। जोड़ा फूट गया।"

"आयरिश-दम्पती! वे कब तक ठहरेंगे?"

"अभी तो बहुत दिन रहेंगे, किन्तु लड़की हफ्ते भर में स्कूल चली जायगी।"

"तो एक सप्ताह के बाद बैठक का कमरा भी दे सकोगी?"

"हाँ, दे तो सकती हूँ। किन्तु दो सप्ताह बाद ये दोनों कमरे भी उठ जायँगे। जो आयेंगे वे जम कर रहेंगे। छुट्टी में समुद्र-तट पर गये हैं।"

"तो फिर सोने का कमरा ही दो सप्ताह के लिए देदो। भारतवर्ष से मेरे एक मित्र आज यहाँ आवेंगे। अभी हम दोनों एक ही कमरे में उठा-बैठा करेंगे।"

"धन्यवाद मिस्टर चौधरी। यदि मैं आपके मित्र के रहने

का स्थायी रूप से प्रबन्ध कर सकती तो प्रसन्न होती। किन्तु उपाय नहीं।"

"इस शयनकक्ष और बोर्डिंग का सप्ताह में क्या लगेगा मिसेस जोन्स ?"

"पच्चीस शिलिंग।"

"अच्छी बात है। तो तुम उस कमरे की खिड़की खोल कर बिछौना वगैरह ठीक कर रक्खो। आज डिनर के पहले मेरे मित्र आजायँगे।"

चारु को धन्यवाद देकर मिसेस जोंस जारही थीं कि चारु ने पुकार कर कहा—सुनो तो मिसेस जोंस, भारतवर्ष से मेरी भाभी ने पुलाव का मसाला भेजा है इसे लेती जाओ।

पार्सल को लेकर—"Oh how good of her, how kind of her" कहते कहते मिसेस जोंस मुसकुराती हुई चली गईं।

सन्ध्या-समय चारु चाय पी रहा था। उसी समय डोवर से नरेन्द्र का टेलीग्राम पहुँचा। थोड़ी देर में चारु Bus पर सवार होकर चैयरिंग क्रास स्टेशन की ओर रवाना हुआ।

गाड़ी छः बजे डोवर आ पहुँची। नरेन्द्र को ढूँढ़ लेने में अधिक देर नहीं लगी।

नरेन्द्र ने पहले ही कहा—देखिए, डोवर में अपना सब

सामान ब्रेक में दे दिया था, किन्तु कोई रसीद नहीं मिली। अब क्या दिखा कर सामान माँगूँ ?

चारु ने कहा—यहाँ रसीद-वसीद का इतना प्रचार नहीं। ब्रेकवान के पास चलिए। आप अपनी चीज़ें पोर्टर को दिखा दीजिएगा। वह उनको गाड़ी पर रख देगा।

नरेन्द्र ने विस्मित होकर कहा—अच्छा। डोवर से आपको जो तार दिया था उसकी भी रसीद नहीं मिली। मैंने समझा कि तार-बाबू मेरी छः पेनी हज़म कर गया।

चारु ने हँस कर कहा—"नहीं जी, ऐसा नहीं होता।" कहते कहते वे दोनों ब्रेकवान के पास पहुँचे। सामान लेकर चारु ने हैन्सम पर सवार हो गाड़ीवान को अपने घर का ठिकाना बता दिया। काठ पर गली हुई रबर ढाल कर बनाई गई लन्दन की सड़क पर गाड़ी दौड़ने लगी।

रास्ते में बातचीत करके और दृश्य दिखाकर, चारु नरेन्द्र का चित्त विनोद करने की चेष्टा करने लगा।

यह ट्रेफेल गर स्क्वैयर है, यह नेलसन कालम ऊँचा खड़ा है, वह दूर नेशनल गैलरी दिखाई पड़ती है। इस रास्ते पर His Majesty's Theatre है। यहाँ प्रसिद्ध अभिनेता Beerrbohm Tree का अभिनय करते हैं। इस समय हम लोग पिकाडिली होकर जा रहे हैं। यह हाइड-पार्क है,—यह कहते कहते गाड़ी घर के सामने आकर खड़ी हो गई।

एडिथ की सहायता से मय माल-असबाब के नरेन्द्र को उसके सोने के कमरे में पहुँचा कर चारु ने कहा—अभी सात नहीं बजे हैं। आप कपड़े बदल लीजिए। साढ़े सात पर डिनर होगा।

नरेन्द्र ने कहा—देखिए मिस्टर चौधरी, आपको मेरी एक बात माननी होगी।

चारु ने कुछ विस्मय के साथ पूछा—कहिए, क्या ?

नरेन्द्र ने अत्यन्त विनय के साथ कहा—मुझको 'आप' 'महाशय' न कहिए। मुझे अपना छोटा भाई समझिए और स्नेह कीजिएगा, मैं भी बड़े भाई की तरह आपकी भक्ति करूँगा, सम्मान करूँगा।

चारु पाँच वर्ष से विलायत में शिक्षा प्राप्त कर रहा था। इस कारण साहब हो गया था। अब नरेन्द्र की यह उक्ति उसे अज्ञानतापूर्ण मालूम हुई, उसे बहुत हँसी आई। किन्तु उसी विलायती शिक्षा के प्रभाव से मन के सब भाव छिपाकर उसने कहा—तथास्तु। तुम तैयार हो जाओ। दासी अभी दरवाज़े के बाहर गरम जल रख जायगी।

साढ़े सात बजने के कुछ पहले, नरेन्द्र तैयार होगया या नहीं, यह देखने के लिए चारु ने उसके दरवाज़े पर जा कर धक्का दिया। नरेन्द्र ने जल्दी से दरवाज़ा खोल दिया। उसके मुँह में सिगरेट था। चारु को देखते ही सिगरेट फेंक दिया।

नरेन्द्र हाथ-मुँह धोकर और वेश बदल कर तैयार होगया था। चारु भीतर जा बैठा और कमरे को चारों ओर देखने लगा। पूछा—कमरा पसन्द है?

नरेन्द्र असमंजस में पड़ गया। इस कमरे का पसन्द करना उचित है या अनुचित—इस दुबिधा में पड़ कर उसने सावधानी से कहा—कुछ बुरा तो नहीं है।

चारु ने कहा—हाँ। मैं भी दो एक बार इस कमरे में ठहर चुका हूँ। मुझे और किसी बात में आपत्ति नहीं, केवल यह wall paper का design बहुत aggressive है। इसको मैं पसन्द नहीं करता। मैंने मिसेस जोंस से कह भी दिया था, किन्तु इन अशिक्षित लैण्ड-लेडियों को समझाना कठिन है। या बदलने में खर्च होगा, इसी से शायद समझना नहीं चाहती।

नरेन्द्र दीवार की ओर इच्छापूर्वक देखने लगा। उसने सोचा—"क्यों, अच्छा तो है, लता-पत्र अंकित हैं, इसमें बुरा क्या है।" —उसने यह भी सोचा कि मैं जो कमरे को सुन्दर कह देता तो चारु मुझे मन ही मन उल्लू समझता। खूब बचा।

अब दूसरी बातें होने लगीं। ये बातें विलायती आचार-व्यवहार के सम्बन्ध की थीं। एक बार नरेन्द्र ने पूछा—अच्छा भाई साहब, इस दासी को क्या कह कर पुकारूँगा?

"उसका नाम एडिथ है।"

"मिस एडिथ कह कर पुकारूँ या केवल एडिथ कहूँ?"

"सिर्फ़ एडिथ कहना।" कुछ ठहर कर चारु ने फिर कहा—"यह मत समझना कि नाचीज़ समझ कर दासी के नाम के साथ मिस शब्द नहीं लगाया गया। अभी तक पुराने समय की chivalrous spirit के बूढ़े मौजूद हैं जो घाट-बाट में अकस्मात् दासी से भेंट हो जाने पर टोपी उठाते हैं। इस तरह मुलाक़ात होने पर कोई pleasant remark करने का नियम है। दासी से देखादेखी होने पर यदि उसको बिना (नोटिस) *notice* किये चले जाओगे तो भयानक अभद्रता होगी। 'Fine afternoon, Edith,'—'Isn't it, Sir?' कह कर वह चली जायगी। यदि तुम्हारी कुछ अधिक उमर हो तो हँसी-दिल्लगी में इस तरह भी कह सकते हो—'Going to meet your young man, Edith?' वह शायद—'Ain't got no young man Sir'—कह कर मुसकुराती हुई चली जायगी।

इस तरह बातचीत करते करते डिनर का समय हो गया। नरेन्द्र को साथ लेकर चारु अपने कमरे की ओर चला। रास्ते में नरेन्द्र ने कहा—देखिए, यह थैंकिंग कहने की हर वक्त याद नहीं रहती। एडिथ के गरम जल दे जाने पर मैं थैंकिंग कहना भूल गया। उसके चले जाने पर याद आया। शायद वह मुझे पूरा जानवर समझेगी।

चारु ने कहा—कोई डर नहीं। यहाँ 'poor foreigner' के सात ख़ून माफ़ हैं। ये विदेशी मात्र को अत्यन्त कृपा की दृष्टि से देखती हैं—ये गोरी हैं, काली नहीं।

डिनर के बाद चारु ने नरेन्द्र को ह्विस्की देनी चाही, किन्तु उसने नहीं ली।

चारु ने कहा—मालूम होता है, पीते नहीं हो। अच्छी बात है।

नरेन्द्र ने गम्भीर भाव से कहा—नहीं भाई, आने के समय प्रतिज्ञा कर आया हूँ कि इन चीज़ों को हाथ से न छुऊँगा।

चारु ने अपने गिलास में कुछ ह्विस्की और सोडा ढालते ढालते हँस कर कहा—किसके आगे प्रतिज्ञा कर आये हो?

नरेन्द्र लज्जा से चुप रहा। चारु ने अपने पाइप को साफ़ करते करते एक गीत के अन्तरे को अलाप कर कहा—"He is married—He is married"

पाइप भरते भरते पाँच वर्ष के पहले की देखी निर्मला की वह बालिका मूर्ति, Loretto गाड़ी पर चढ़कर भोली भाली की तरह स्कूल जाना, घर लौटना, और छोटे भाइयों के साथ पिछवाड़े के बाग़ में फुटबाल खेलना—चारु को याद आया। मन ही मन हँस कर उसने सोचा—तो उसी का अब इतना प्रताप है!

थोड़ी सी बातचीत हुई थी कि एडिथ ने आकर नरेन्द्र से कहा—क्या मुझे आपके बाक्सों की चाबियाँ मिल सकती हैं महाशय?

नरेन्द्र ने ज़रा विस्मित होकर चारु से बँगला में पूछा—चाबियाँ क्यों माँगती है?

चारु ने कहा—तुम्हारे बाक्स से कपड़ा आदि निकाल कर ward robe में क़रीने से रख देगी। ख़ाली बाक्सों को box room में ले जाकर जमा कर रक्खेगी।

"क्यों, ट्रंक में ही कपड़े रहने से क्या कोई हानि है?"

"नहीं-नहीं। सोने के कमरे में कहीं ट्रंक-पेटी स्तूपाकार रक्खी जाती है? उससे सौन्दर्य जो घट जाता है।"

एडिथ चाबियाँ लेकर चली गई।

नरेन्द्र को कहाँ रहना पड़ेगा, इस सम्बन्ध में चर्चा छिड़ी। नरेन्द्र ने कहा—कलकत्ते में छात्रों के लिए जैसे मेस हैं, वैसे यहाँ नहीं हैं?

"नहीं।"

"तो यहाँ रहने का क्या प्रबन्ध है?"

चारु ने कहा—तीन तरह का प्रबन्ध हो सकता है। (१) तुम किसी परिवार में रह सकते हो, किन्तु भले परिवार में रहने का मौक़ा मिलना दुर्लभ है। वे अपने इष्टमित्रों की यथेष्ट सिफ़ारिश के बिना किसी को अपने घर में नहीं रखते। तुम उनके बाल-बच्चों में परिवार के एक व्यक्ति की हैसियत से रहोगे, तुम भले आदमी हो, यह जाने बिना वे कैसे रक्खें? अख़बारों में विज्ञापन देकर कोई कोई व्यक्ति परिवार में स्थान पाने की चेष्टा करते हैं। स्थान मिलने पर जब वे अपने आपको निम्नश्रेणी के बीच देखते हैं, तब हफ्ते दो हफ्ते में ही भाग खड़े होते हैं। (२) तुम

किसी बोर्डिंग-हाउस में रह सकते हो, किन्तु वहाँ अक्सर मजबूर होकर ऐसे लोगों से मिलना पड़ता है जिनसे मिलना ठीक नहीं। (३) कमरों में रह सकते हो, जैसे कि मैं रहता हूँ। यह देखो, बहुत बड़ा घर है। इसकी एक लैण्ड-लेडी है। वही घर की मालकिन है। मैंने दो कमरे ले लिये हैं, एक सोने के लिए और एक बैठक के लिए। यहाँ और भी दो चार लोग रहते हैं लेकिन उनसे मेरा कोई सम्बन्ध नहीं— इसलिए उनको पहचानता भी नहीं। मैं प्रति सप्ताह ३५ शिलिंग देकर बेफ़िक्र हो जाता हूँ।

"इन तीनों तरह के निवास-गृहों के खर्च में क्या अन्तर है ?"

"कुछ अधिक अन्तर नहीं। इसी तरह का खर्च है। हाँ, इसकी अपेक्षा कुछ अच्छे स्टाइल में रहने से पाँच-सात शिलिंग और अधिक लग सकता है। इससे कुछ घटिया स्टाइल में रहने से चार-पाँच शिलिंग कम भी लग सकता है।"

"रहने के सम्बन्ध में आप मुझे क्या उपदेश देते हैं ?"

"यदि किसी भले परिवार में जगह मिल जाय तो बहुत अच्छा है। मैं इन पाँच वर्षों में तीन वर्ष तक भिन्न भिन्न परिवारों में रह चुका हूँ। परिवार में न रहने से उनकी सामाजिक रीति-नीति अच्छी तरह मालूम नहीं होती। हम जैसे भारतीयों के लिए उनमें ख़ासी educative value है।"

"तो आप अनुग्रह करके मुझे किसी भले परिवार में जगह दिला दीजिए।"

चारु ने चेष्टा करना स्वीकार किया। अब कल "इन" (inn) में जाकर भर्ती होना। चारु ने हिसाब करके देखा कि भरती होने के लिए आवश्यक रुपयों से पचास पाउण्ड नरेन्द्र अधिक लाया है। उसने कहा—अच्छा नरेन्द्र, इस रुपये से दो तीन सूट तैयार करा लो। बाक़ी रुपया बैंक में जमा कर दो।

नरेन्द्र ने कहा—कलकत्ते के ये सूट जब तक चलते हैं तब तक चलने न दो। व्यर्थ रुपया ख़र्च करने से क्या फ़ायदा ?

चारु ने कहा—अच्छी बात है।

रात को दस बजने पर 'गुडनाइट' करके नरेन्द्र सोने गया। वहाँ देखा कि उसके बाक्स-ट्रंक सब ग़ायब हैं। वार्ड-रोब खोल कर देखा कि उसकी कमीज़ें एक जगह हैं, सूट एक जगह हैं, रूमाल एक छोटे दराज़ में रक्खे हैं, दूसरी दराज़ में नेकटाइयाँ हैं और एक में उसके कालर हैं। इस प्रकार सभी चीज़ें तरतीब से रक्खी हुई हैं। प्रकाश के पास एक टेबल रक्खा है जिस पर सुनहली बेल-बूटे-दार काली बनात पड़ी हुई है। उस पर नरेन्द्र का राइटिंग-केस, चिट्ठी के काग़ज़ और लिफ़ाफ़े आदि रक्खे हैं। मेण्टेल प्लेस पर देखा कि उसकी स्त्री का तथा दूसरों के फ़ोटोग्राफ़ सजाये गये हैं। दोनों ओर दो 'वाज़' में सफ़ेद नार्सिसस् के फूलों के दो गुच्छे हैं।

बिस्तरे के पास एक तिपाई है—उस पर वत्तीदान में एक नई मोमबत्ती है। वहीं उसका सिगरेट का बक्स रक्खा है। कहीं से जस्ते की एक ऐशट्रे लाकर रक्खी गई है, जिस पर पीतल का काम किया हुआ है। उसकी कंघी, ब्रश आदि चीज़ें ड्रेसिंग-टेबल के ऊपर मौजूद हैं।

यह सब देख कर नरेन्द्र उसी छोटे टेबल के पास बैठ कर स्त्री को पत्र लिखने लगा। वह प्रतिज्ञा कर आया था कि रोज़ रात को सोने के पहले स्त्री को एक पत्र लिखा करेगा और मेल डे के आने पर सातों चिट्ठियाँ लिफ़ाफ़े में बन्द करके रवाना कर देगा।

चारु सुनता तो सोचता—उसी निर्मला का इतना प्रताप है!

तृतीय परिच्छेद

छः महीने बीत गये। केनसिंगटन के उसी कमरे में बैठे हुए चारु को आज फिर भारतवर्ष की डाक मिली। इस दफ़े शनिवार को सवेरे को डाक आई है। प्रातःकाल के जलपान के साथ चारु को चिट्ठी मिली।

कलकत्ता

भाई चारु,

तुम्हारी परीक्षा निकट आती जा रही है। मालूम होता है, तुम्हें बहुत काम है। तनिक शरीर का ध्यान रख कर परिश्रम

करना। अब तो तुम स्वयं डाक्टर हो, तुमसे कुछ कहना ही व्यर्थ है। एक बड़ी मज़े की बात हुई है। तुम्हारे भाई को राज़ी कर लिया है। उन्होंने कहा है—'अभी हम लोगों के जाने से चारु के पढ़ने-लिखने में गड़बड़ होगी। जब उसकी परीक्षा हो लेगी तब चलूँगा।' दो महीने बाद तुम्हारी परीक्षा हो जायगी। और हम लोग डेढ़ महीने के बाद यहाँ से रवाना होंगे। ठीक तुम्हारी परीक्षा के बाद ही हम लोग वहाँ पहुँचेंगे।

बेचारी निर्मला बहुत बीमार है। कोई महीने भर से तकलीफ़ पा रही है। आज सुना है, तकलीफ़ बहुत बढ़ गई है। इस मेल से यह ख़बर पाकर नरेन्द्र शायद खूब चिन्तित हो। यदि तुमको समय मिले तो उससे मिल कर उसको ढाढ़स बँधाना।

बहुत लम्बी चिट्ठी नहीं लिखी। तुम्हें समय नहीं, पढ़ोगे कब ? बस, आज इतना ही।

तुम्हारी स्नेहमयी

भाभी

पत्र पढ़ कर चारु सोचने लगा। बहुत दिनों से नरेन्द्र से भेट नहीं हुई। कोई एक महीने पहले वह रुपया उधार लेने आया था। इसके बाद, तब से, उसकी कुछ भी ख़बर नहीं मिली।

नरेन्द्र बेजवाटर के कमरों में रहता है। वहाँ दो तीन महीने से है। मिस मैनिंग* की सहायता से चारु ने पहले उसे एक भद्र परिवार में रहने को जगह दिलवा दी थी। वहाँ रहने से पहले पहल नरेन्द्र बहुत सन्तुष्ट हुआ। किन्तु धीरे धीरे जब वह बेजवाटर के दल से मिलने लगा तब कुछ कुछ उसकी आँखें खुलने लगीं। उसने देखा कि उसके जो मित्र कमरों में रहते हैं वे उसकी अपेक्षा मज़े में हैं। उनको नित्य सवेरे साढ़े आठ बजे कपड़े पहन कर नाश्ते के लिए नीचे नहीं उतरना पड़ता। दस ग्यारह बजे, जब ख़ुशी होती है, बिस्तरा छोड़ कर लैण्ड-लेडी को जलपान लाने के लिए हुक्म दे देना काफ़ी है। रात की पोशाक पर ड्रेसिंग गाउन चढ़ाये ब्रेक फ़ास्ट खाकर फिर तीन चार बजे कपड़ा पहनना आरम्भ करने पर भी कुछ हानि नहीं। शाम को चाहे जब तक मित्रों के साथ गोष्ठी कर सकते हैं—और अन्यत्र गोष्ठी करके चाहे जितनी रात गये आ सकते हैं। किसी तरह

---

* सभी को यह मालूम नहीं कि मिस मैनिंग भारतीय छात्रों के लिए माता-स्वरूप थीं। उनके उपदेश और भर्त्सना के भय से कुछ छात्र उनसे दूर ही रहते थे। भारतीय छात्रों के भले के लिए यह बूढ़ी मेम असाधारण उद्योग और उपाय किया करती थीं। किसी तरह की मुसीबत में फँसने पर यदि कोई भारतीय छात्र उक्त मेम साहबा की शरण लेता तो वे उसका उद्धार कर देती थीं। भारतीय छात्रों का दुर्भाग्य है कि अब उक्त मेम साहबा इस संसार में नहीं हैं।

की रोक-टोक नहीं है। इसी से नरेन्द्र चार महीने तो हैलेम-परिवार में रहा किन्तु अब उसने बेजवाटर में कमरे ले लिये हैं।

कई साल से लन्दन का बेजवाटर-अंश अधिकांश भारतवर्षीय छात्रों का वासस्थान है। बेजवाटर में "आर्टेज़ियन" नाम एक "पब्लिक-हाउस" या पानालय (शराब-ख़ाना) है। यदि कभी भारतवर्ष के छात्र बेजवाटर छोड़ अन्यत्र रहने लगें, तो "आर्टेज़ियन" के मालिकों का दिवाला निकल जाय।

हाँ, जैसा कि सम्मानित व्यतिक्रम सर्वत्र होता है वैसा बेजवाटर में भी है। यह बात मैंने यहाँ कर्तव्य की दृष्टि से लिख दी है।

चारु उस दिन शाम को नरेन्द्र से मिलने गयर। दलबट रोड के जिस घर में नरेन्द्र रहता था उसके सामने पहुँच कर देखा कि नरेन्द्र की दो-मञ्ज़िला बैठक की खिड़की ज़रा खुली है,—और उसमें होकर पियानो तथा संगीत का शब्द और क़हक़हे की आवाज़ निकल रही है। नरेन्द्र के गले से निकला हुआ गाने का यह पद सुनाई पड़ा।

There once was a black—bird gay
A splendid fellow was he
And though he went out every day
He always came to tea
To tea—to tea—to tea.

साथ ही साथ क़हक़हे की भी आवाज़ हुई।

चारु ने खड़े होकर कुछ विचार किया। पत्नी की बीमारी के कारण नरेन्द्र के मन में कोई दुश्चिन्ता पैदा हुई है, यह तो चारु को प्रतीत नहीं हुआ। एक बार सोचा कि लौट जायँ। फिर न मालूम क्या सोच कर उसने दरवाज़े पर धक्का दिया।

चारु जब उस कमरे में गया तब पियानो तो बज रहा था लेकिन गाना बन्द हो चुका था। चारु को देखते ही नरेन्द्र ने पियानो छोड़ उठ कर कहा—Hello—Hello—Here's a black-bird come to tea. How d'ye do birdie.

जिनके मुँह में पाइप था और बग़ल में ह्विस्की का गिलास रक्खा था—ऐसे सेन, वसु और बनर्जी आदि चार पाँच युवक बैठे थे। उन सभी ने कहा—Hello chow—hello.

एक ने कहा—Black-bird को थोड़ी सी ह्विस्की दो। चाय से उसका गला न मँजेगा।

चारु की ओर मुख़ातिब होकर नरेन्द्र ने कहा—Have a drop, old chap?

चारु ने यहीं पहले पहल देखा कि नरेन्द्र ह्विस्की पीता है। उसने कहा—नहीं,—धन्यवाद।

एक युवक ने कहा—Is he a damned T—T?

नरेन्द्र ने कहा—Give the devil his due—he isn't

that—Do have a'wee little—drap pie, as the Scotch say—just to keep us company, chow."

चारु ने कहा—नहीं,—धन्यवाद । मैं dinner के पहले नहीं पीता ।

एक ने कहा—What a good little boy.

दूसरे ने कहा—Are you married?

नरेन्द्र ने कहा—Heaven forbid!

सेन ने कहा—Then why the devil are you so'tic'l'r?

बनर्जी ने कहा—His mamma will be cross

एक गाने लगा—

He is his mammies ae bairn
With unco folk he's weary sir.

खूब कहकहे हुए ।

इस प्रकार कुछ देर हँसी-दिल्लगी होने पर एक ने उठ कर कहा—I must be off, boys.

एक ने कहा—Why in such a darned hurry.

बनर्जी ने कहा—Perhaps he's got an appointment to meet his girl.

मुँह में पाइप ठूँसे हुए वसु ने अस्पष्ट स्वर में पूछा—which of 'em?

दस्ताना पहनते पहनते गमनोन्मुख व्यक्ति ने कहा—

Oh shut up. I'm not like you fellows,
One at a time is my motto.

सभी ठहाका मार कर हँसने लगे ।

थोड़ी देर के बाद एक एक कर सब उठ गये। अब केवल चारु और नरेन्द्र रह गये। बँगला में बातें होने लगीं।

चारु ने पूछा—कुछ घर की ख़बर मिली ?

नरेन्द्र ने कहा—इस वक्त ?

"क्यों, इस बार Caledonia जहाज़ से डाक आई है। तुम्हें मालूम नहीं ?"

"अयँ Caledonia से ? तो इस बार जल्दी ही मिलेगी। आज रात को या कल शनिवार को सवेरे मिल जायगी।"

चारु ने कहा—कल शनिवार को सवेरे ! तो क्या आज तुम शुक्रवार समझते हो ?

नरेन्द्र ने कहा—क्यों, आज तो शुक्रवार ही है। मैंने देश को चिट्ठी लिखना आरंभ किया था—वे लोग आगये थे—अब चिट्ठी लिख कर छः बजे की डाक से रवाना कर दूँगा।

मन की नाराज़गी को मन ही में दबा कर चारु ने कहा—"आज शुक्रवार नहीं, शनिवार है। आज सवेरे मुझे देश की चिट्ठी मिली है।" यह कह कर चारु ने कुछ दूर पर रक्खे सोफ़ा पर से बिना पढ़ा दैनिक समाचार-पत्र लाकर नरेन्द्र को उस दिन की तारीख़ और दिन दिखा दिया।

नरेन्द्र ने कहा—तब तो मैंने इस बार की मेल मिस कर दी !

चारु चुप रहा। नरेन्द्र ने कहा—मेरी चिट्ठियाँ शायद

हैलम के यहाँ पड़ी होंगी। वे रीडायरेक्ट कर देंगे, शायद शाम को मिल जायँ।

चारु को याद आया कि नरेन्द्र ने जब पहले-पहल हैलम के घर रहना शुरू किया था, तब कई सप्ताह तक उसी के पते पर नरेन्द्र की चिट्ठी-पत्री आती थी। उस समय नरेन्द्र संवाद-पत्र देख कर, डाक पहुँचने के घण्टे का हिसाब लगा कर, चारु के पास आ जाता और चिट्ठी के लिए धरना देकर बैठा रहता था। उन्हीं दिनों, स्त्री के पास प्रति संडे को सात चिट्ठियाँ भेजने की उसकी बात भी याद आई।

किन्तु चारु ने कुछ कहा नहीं। किस अधिकार से वह उसका तिरस्कार करे। नरेन्द्र उसका कोई आत्मीय नहीं, उसके साथ चारु की गाढ़ी दोस्ती भी न थी। किस अधिकार से वह उसकी व्यक्तिगत स्वाधीनता पर हस्तक्षेप करे?

कुछ देर के बाद चारु उठा।

नरेन्द्र देर तक चुप था। अब उसने कहा— चौधरी बाबू आपको मेरी एक बात रखनी होगी।

"क्या?"

"ये बातें किसी को घर न लिख भेजिएगा।"

"कौन सी बातें?"

"यही ह्विस्की वगैरह की।"

चारु ने कुछ श्लेष करके कहा—क्यों, इसमें ऐब ही क्या है? मैं भी तो ह्विस्की पीता हूँ। यह मेरे घरवालों को मालूम है।

नरेन्द्र ने कहा—उन बातों को जाने दीजिए। आप बहुत नाराज़ होगये हैं। For Heaven's sake चौ, मुझे माफ़ करो।

चारु को अब मौक़ा मिल गया। उसने कहा—घरवालों को न लिखूँगा—इस वचन के बदले में क्या तुम मुझे एक वचन दे सकोगे ?

"क्या ?"

"बेजवाटर छोड़ो; इस दल को भी छोड़ दो, और फिर हैलम के घर जाकर रहने लगो।"

"अच्छी बात है, छोड़ दूँगा।"

"अभी छोड़ दो। इसी सप्ताह लैण्ड-लेडी को नोटिस दे दो।"

नरेन्द्र ने कहा—Damn it लैण्ड-लेडी के आठ दस पाउण्ड बाक़ी हैं। उनका हिसाब चुकता करके नोटिस दे दूँगा।

"क्यों, बैंक के तुम्हारे पचास पाउण्ड क्या हुए ?"

"Bless my soul—उनको खर्च हुए मुद्दत हो चुकी।"

चारु ने थोड़ी देर में कहा—अच्छा, तुम नोटिस दो मैं तुम्हें दस पाउण्ड उधार दूँगा।

चारु के साथ नरेन्द्र नीचे तक उतर आया था। दरवाज़े के बाहर आकर कहा लिखिएगा तो नहीं चौ ?

"नहीं।"

"Honour bright?"

"Honour bright" कह कर और नरेन्द्र से हाथ मिला कर चारु चला आया।

चौथा परिच्छेद

नरेन्द्र हैलम के यहाँ तो चला गया किन्तु पहले का साथ न छोड़ सका। बँधे हुए नियमों के अनुसार रहने में उसे बहुत कष्ट मालूम होने लगा। किन्तु चारु के भय से बेजवाटर मे कमरे लेकर कहने का उसे साहस न हुआ।

एक दिन उसने मिसेस हैलम से कहा—आज मित्रों के साथ थियेटर जाना है लौटने में ज़रा देर हो जायगी।

मिसेस हैलम ने कहा—अच्छी बात है। मैं दरवाज़े मे ताला न लगाऊँगी। हॉल में मोमबत्ती जला रक्खूँगी।

यहाँ विलायती दरवाज़ों के सम्बन्ध में दो एक बातें लिखना आवश्यक है। वहाँ पर सदर दरवाज़ा हमेशा बन्द रहता है। दरवाज़े में दो ताले होते हैं। एक ताला खोलना हो तो भीतर से हाथ से खींच लेने पर खुल जाता है। किन्तु बाहर से खोलने पर बिना चाबी के नहीं खुलता। घर के हर एक वयस्क व्यक्ति के पास इसकी एक एक चाबी रहती

है। उसे लेच-की कहते हैं। तुम घर के आदमी हो, घुस कर आने पर यदि तुम्हारे पास लेच-की हो तो तुम उसके द्वारा ताला खोल कर भीतर जा सकते हो। यदि लेच-की साथ नहीं लेगये हो तो तुमको 'नक' (Knock) करना होगा; अथवा बिजली की घंटी का बटन दबाना पड़ेगा। दासी आकर दरवाज़ा खोल देगी। दूसरे प्रकार का एक और ताला होता है। वह भीतर से ही खुलता है, बाहर से उसके खोलने का कोई उपाय नहीं। यह ताला दिन भर खुला रहता है। सोने को जाते समय रात को यह ताला बन्द कर दिया जाता है। उस ताले के बन्द हो जाने पर तुम रात में लौट कर लैच-की से दरवाज़ा नहीं खोल सकते।

शाम को नरेन्द्र बाहर निकला। लन्दन के सब थियेटर यद्यपि रात के साढ़े ग्यारह बजे ही बन्द हो जाते हैं तथापि नरेन्द्र को लौटने में दो बज गये। हॉल में जाकर वह मोमबत्ती की ओर ज़रा खिसिया कर देखता रहा।

विलायती-गृह-प्रबन्ध में मोमबत्ती भयानक चीज़ है। यदि कोई बाहर रहे, तो उसके घर लौटने के समय की मूक साक्षी मोमबत्ती देती है। दूसरे दिन सवेरे गृहिणी देखती है कि मोमबत्ती कितनी जल गई है। बस, वह हिसाब लगा सकती है कि तुम कितनी रात को घर लौटे हो। उस मोमबत्ती को हटा कर हिसाब के अनुसार उसकी जगह पर दूसरी रख दी जा सकती है—साक्षी को इस तरह मिथ्या

किया जा सकता है। किन्तु पकड़े जाने का भय रहता है। दरवाज़ा खोलने का शब्द, सीढ़ियाँ चढ़कर अपने सोने के कमरे में पहुँचने का शब्द, अपने सोने के कमरे का दरवाज़ा खोलने का शब्द और पैरों की आहट मकान-मालकिन को जगा सकती है। दूसरे दिन तुम्हारा झूठा गवाह पकड़ा जायगा। इस देश में कोई कैसा ही बदमाश क्यों न हो, किन्तु मिथ्यावादी या Sneak कहलाना कोई भी नहीं चाहता।

इतनी रात को लौटने का कोई उचित कारण भी नहीं,—नरेन्द्र ने सोचा, कि दूसरे दिन शायद हैलम-परिवार के मुख पर अप्रसन्नता का चिह्न देख पड़े। किन्तु प्रातःकाल के जल-पान के समय किसी के भी,—विशेषतः मिसेस हैलम के—मुख पर उस तरह का कोई चिह्न नहीं देखा। मिसेस हैलम प्रति दिन उसके साथ और सबके साथ जैसा हास्य-कौतुक के भाव से बर्ताव करती थीं, आज भी वैसा ही किया। शाम को डिनर के बाद वह सबके साथ ड्राइँग रूम में, गाने-बजाने और आमोद-आह्लाद में शामिल रहा। उस समय भी मिसेस हैलम पूर्ववत् रहीं। क्रम से रात के साढ़े दस बजे। एक एक कर सब लोग सोने को गये। किन्तु ज्यों ही नरेन्द्र अकेला रह गया त्यों ही उसके प्रति मिसेस हैलम का भाव बदल गया।

नरेन्द्र ने आगे बढ़ कर और झुक कर कहा—गुद नाइट मिसेस हैलम।

मिसेस हैलम ने कुछ रूखे स्वर से कहा—गुड नाइट।

मालूम होता है, तुमको खूब नींद आ रही है मिस्टर घोस। कल रात में तो तुम्हें अधिक सोने को मिला न होगा।

सोने के कमरे में जाकर नरेन्द्र, इस नीरव भर्त्सना का नस नस में अनुभव करने लगा। उसे अब पछतावा होने लगा। उसने निश्चय किया कि अब से जीवन की गति को बदल देना होगा। स्त्री को पहले की तरह नित्य एक पत्र लिखेगा। खूब सोच समझ कर खर्च करेगा। नेक बनेगा।

कोई एक सप्ताह तक वह नेक बना रहा। टेम्पेल में आइन के लेक्चर सुनने जाने लगा, लाइब्रेरी में जाकर पुस्तकें पढ़ने लगा और डिनर के बाद ड्राइँग रूम में ही रहने लगा। किन्तु एक सप्ताह में ही उसका जी ऊब गया। आमोद के नशे ने फिर उसको घेर लिया। वह उसी दल के चक्कर में जा फँसा। अपने को सँभाल न सका।

एक दिन—उस दिन शुक्रवार था—प्रातःकाल के नाश्ते के बाद टेम्पेल जाने के समय उसने मिसेस हैलम से कहा—आज मैं टेम्पेल में ही डिनर खाऊँगा। वहाँ से अर्लूस कोर्ट की एकज़ीबिशन देखने जाने की इच्छा है।

मिसेस हैलम ने कहा—तो ट्रेन से लौटोगे या कैब से आओगे?

नरेन्द्र ने कहा—ट्रेन से ही लौटूँगा। पाँच पेनी की जगह ढाई शिलिङ्ग क्यों खर्च करूँगा?

मिसेस हैलम ने कहा I, टाइम-टेबल देखकर

तुमको बतलाती हूँ कि आख़िरी ट्रेन किस समय मिलेगी। यह कह कर मिसेस हैलम टाइम-टेबल देखने लगीं। कहा—इधर को आख़िरी ट्रेन ११ बज कर ३७ मिनट पर छूटेगी और १२ बज कर ५ मिनट पर यहाँ पहुँचेगी।

धन्यवाद देकर और समय नोट करके नरेन्द्र चला गया।

टेम्पेल में जब डिनर समाप्त हुआ तब शाम के सात बजे थे। अन्य दो युवकों के साथ नरेन्द्र टेम्पेल-स्टेशन से अर्लस को रवाना हुआ।

हर साल ६-७ महीने अर्लस कोर्ट में स्थायी भाव से एकज़ीबिशन होता है। यह खेती, दस्तकारी अथवा पशुओं का एकज़ीबिशन नहीं,—यह तो मुख्यतः आमोद का एकज़ीबिशन है। प्रति दिन ११ बजे दिन से रात के साढ़े ११ बजे तक खुला रहता है। असल में रौनक़ रात में ही रहती है। उस समय बिजली की हज़ारों बत्तियाँ जलती हैं। लन्दन के सभी स्थानों से हज़ारों नर-नारियों को लाकर रेलगाड़ी इस आमोद के समुद्र में फेंक देती है। धनी आते हैं, ग़रीब आते हैं, पादरी आते हैं और नास्तिक भी आते हैं। जिसकी जैसी रुचि है, जिसकी जैसी प्रवृत्ति है, वह उसी प्रकार का आमोद पसन्द कर लेता है।

नरेन्द्र के दो साथियों का नाम राय और चटरजी है। ये दोनों अनेक खेल-तमाशे देखते हुए घूमने लगे। शराबख़ाने

मे घुस कर बीच बीच में तृषा भी शान्त कर लेते हैं। अब रात के दस बज गये।

एक जगह एक बड़ी सी किन्तु कृत्रिम लेक है। उसके तट को घेरे हुए,—सफ़ेद, पीले, नीले और लाल रंग की—बिजली की अगणित बत्तियाँ जलती हैं। इस प्रकाश की छटा जल में पड़ने से जल की अपूर्व शोभा हो रही है। लेक के एक ओर Water chute का तीव्र खेल हो रहा है। तीर से बहुत ऊँचे पर एक वेदी बनी है। उस वेदी के ऊपर से जल तक ढालदार पक्की जुड़ाई है। उसी ढालू स्थान के ऊपर रेल की दो सेट पटरियाँ बिछी हैं। आदमियों को सवार करा कर पहियेदार बोट वेदी से उसी रेल पर छोड़ दी जाती है। बोट ढुलकते ढुलकते प्रति मुहूर्त में गति-बल संग्रह करके प्रचंड वेग से जल पर आ पहुँचती है। बोट पानी पर पहुँचते ही पहले पानी पर होती हुई वायु पर होकर नाचते नाचते तीर की तरह फुर्ती से कुछ दूर जा पहुँचती है। इसके बाद और भी कुछ दूर तक पानी पर जाती है। गति का बल घट जाने पर बोट को किनारे लगा कर आदमी उतार दिये जाते हैं। फिर वह बोट कल की सहायता से वेदी पर चढ़ाई जाती है। लोग फिर चढ़ कर उतरते हैं। इस प्रकार बहुत सी किश्तियाँ एक एक मिनट के अन्तर पर छूटती हैं और उन पर सवार स्त्रियों के डर और ख़ुशी से मिले हुए चीत्कार से [illegible] रात की हवा शान चढ़ी [illegible] से खण्ड खण्ड होती है।

तीनों युवक Water-chute की ओर रवाना हुए। कुछ दूर पर कई युवतियाँ रेलिंग पकड़े हास्य-परिहास कर रही थीं। राय ने कहा–Let's pick up some of these girls.

चटर्जी ने कहा—let's वाटर शूट में अकेले जाने से कुछ मज़ा नहीं आता। Let's go and speak to them.

नरेन्द्र ने कहा—नान्सेन्स। ये यदि नेक चलन लड़कियाँ हुईं तो?

राय ने कहा—Oh, they are game. उनकी पोशाक नहीं देखते?

नरेन्द्र ने कहा—नहीं जी—नहीं।

"Just for a lark" कह कर चटर्जी उनके पास गया और हैट उतार कर बोला—Good-evening

"Good-evening. How d'ye do." कह कर वे हँस कर एक दूसरी के शरीर पर गिरने लगीं।

राय ने कहा—Been on the water-chute?

उनमें से एक ने कहा—Not this evening. "Come along then." कह कर राय और चटर्जी ने दो युवतियों को बुलाया। नरेन्द्र भौंचक्का सा खड़ा रहा।

चटर्जी ने नरेन्द्र की पीठ ठोंक कर उनसे कहा—Wo'nt one of you girl come with my shy little friend?

एक अल्प-वयस्का ने आगे आकर कहा—"I'll have him."

और वह नरेन्द्र के पास आगई। "Trot along my beauty" कह कर उसने नरेन्द्र को खींच लिया।

राय और चटर्जी अपनी अपनी संगिनियों के हाथ मे हाथ डाले जा रहे हैं। पीछे पीछे नरेन्द्र अपनी संगिनी के साथ जा रहा है।

एक एक शिलिंग देकर टिकट ख़रीदे और सब भीतर पहुँचे। इनके आगे बहुत जमघट था। पुलिस दो दो आदमियों की श्रेणी बना रही थी। ऊपर से बोट उतरती है, आगे की जगह ख़ाली हो जाती है—और पीछे के लोग ज़रा ज़रा आगे बढ़ जाते हैं। नरेन्द्र और उसकी संगिनी दोनों ही अपने दल की जोड़ियों के पीछे पड़ गये। नरेन्द्र की जिस बोट में चढ़ने की पारी पड़ी, उससे दो बोट पहले ही उसके साथी उतर गये थे।

बोट लम्बी सी है। उसमें अनेक श्रेणियाँ हैं। प्रत्येक श्रेणी में दो दो आदमियों के बैठने की जगह है। वे दोनों बोट पर चढ़े। अब बोट उतरेगी।

नरेन्द्र की संगिनी ने कहा—'मुझे बहुत डर लगता है। मेरे हाथ को अपने हाथ से जकड़ लो।' नरेन्द्र ने वैसा ही किया।

"Sit—tight" कह कर बोट छोड़ दी गई।

कई मिनट के बाद ये जब तीर पर उतरे तब दल के मित्र



न मिले। नरेन्द्र उनको ढूँढ़ने लगा तो उनकी संगिनी ने कहा—उनके लिए क्या बहुत बेचैन हो ?

नरेन्द्र ने कहा—नहीं।

"अपनी साथिनों की मुझे भी परवा नहीं।"

तब दोनों हाथ में हाथ डाले भीड़ से अलग चले।

नरेन्द्र ने पूछा—तुम्हारा नाम क्या ?

"क्लारा ब्रुक्स।"

क्लारा ने कहा—देखो वाटरशूट मुझे बिलकुल बर्दाश्त नहीं होता। मैं बहुत नर्वस् हूँ। मेरी छाती धड़क रही है।

"तो फिर आई किसलिए ?"

अपने लाल होंठ फुला कर क्लारा ने कहा—Oh how cruel of you. तुम्हारी सुहबत के लिए।

नरेन्द्र ने देखा कि क्लारा का शरीर सचमुच काँप रहा है। इसलिए उसने कहा—चलो चलें, कुछ ड्रिंक कर लें। इससे तुम्हारी धड़कन बन्द हो जायगी।

"अच्छी बात है, चलो।"

अब दोनों बातचीत करते करते एक उच्च श्रेणी की पान-शाला की ओर चले। यह पानशाला एक खुले हॉल की तरह है। इसके भीतर बहुत सी छोटी छोटी मेज़ों के पास बैठे नर-नारी पान कर रहे हैं। सामने थोड़ा सा खुला स्थान है। बाग़ की तरह समझिए। वहाँ आकाश के नीचे इधर-उधर अनेक छोटी छोटी संगमर्मर की गोल मेज़ें हैं। क्लारा और नरेन्द्र ज़रा

एकान्त में मन्द प्रकाश ढूँढ़ कर जा बैठे। वेटर आकर हुक्म की प्रत्याशा में खड़ा हो गया।

नरेन्द्र में पूछा—क्या मँगवाऊँ ?

"ब्राण्डी और सोडा।"

नरेन्द्र ने दो गिलास ब्राण्डी और सोडा लाने का हुक्म दिया। लहमे भर में वेटर ने चाँदी की ट्रे में दो गिलास ब्राण्डी-सोडा और उसका बिल लाकर हाज़िर कर दिया। नरेन्द्र ने मूल्य देकर उसको बिदा किया।

पान करते करते दोनों तरह तरह की बातें करने लगे। लड़की का बदन इकहरा था। बहुत ही दुबली जँचती थी। उसके सुनहरे बालों के गुच्छों ने लटक कर कपाल के कुछ अंश को ढक लिया था। मदिरा का आग्नेय मोह नरेन्द्र के मस्तिष्क में जितना ही प्रवेश करने लगा उतना ही भली उसको अपनी संगिनी की नीली आँखें मालूम होने लगीं। उसकी ग्रीवा-भंगी, उसका कंठस्वर बहुत ही मीठा मालूम होने लगा।

दोनों के गिलास ख़ाली हो गये। नरेन्द्र ने कहा—एक गिलास और मँगवाऊँ ?

क्लारा ने कहा—मुझे न चाहिए। मैं एक गिलास से अधिक stand नहीं कर सकती। और तुम ?

"हिसाब लगाकर देखता हूँ। टेम्पेल के डिनर में शायद शैम्पेन के तीन गिलास ख़ाली किये थे। मालूम नहीं, यहाँ आकर ह्विस्की के कितने गिलास ढाल चुका हूँ।" यह कह

कर नरेन्द्र ने वेटर को बुलाया और अपने लिए एक गिलास ब्राण्डी मँगवाई।

वह गिलास जब आधा होगया तब कुछ दूर पर एक व्यक्ति ने ज़ोर से कहा—Half past eleven, ladies and gentlemen, closing time.

नरेन्द्र ने घड़ी खोल कर देखा, केवल तीन मिनट बाक़ी हैं। गिलास को रख कर और क्लारा के साथ वह फाटक की ओर बढ़ा। बाहर निकल कर भीड़ को पार करने पर क्लारा ने उससे कहा—What a pity culdn't finish your drink. My rooms are quite close by—and I have got such a nice bottle of brandy—won't you look in and have a drop."

नरेन्द्र ने कहा—जी नहीं—धन्यवाद, मुझे आख़िरी ट्रेन से घर लौट जाना है।

क्लारा ने फिर भी कहा—What an awful baby you are. With mamma be cross if stay out late? Come along, you silly dear."

नरेन्द्र के दिमाग़ में शैतान ताण्डव-नाच कर रहा था। फिर भी उसने अपने आपको सँभाल कर कहा—मुझे इसी दम जाना होगा। आज मुझे क्षमा करो क्लारा।

"तो फिर कल एकज़ीबिशन में आओगे?"

"ज़रूर।"

"आज जहाँ भेट हुई थी वहीं, कल ठीक नौ बजे रात को मिलोगे ?"

"बेशक ।"

अपना हाथ फैला कर क्लारा ने कहा—Good-night, pleasant dreams.

"Then I must dream of you Clara, Good-night" कह कर नरेन्द्र ट्रेन की ओर लपका ।

पाँचवाँ परिच्छेद

रात को घर लौट कर नरेन्द्र ने देखा कि हॉल में उसके नाम के कई पत्र रक्खे हुए हैं। उस समय उसे खूब नशा था। उस समय उसकी दशा ऐसी न थी कि वह उन सबको खोल कर पढ़ सके। चिट्ठियाँ जेब में रख कर और दरवाजे का ताला लगा कर वह मोमबत्ती ले सावधानी के साथ सोने गया।

लेटने पर जब तक जागता रहा तब तक उसके चित्त में क्लारा का चेहरा चक्कर लगाता रहा। इतने जल्द घर लौट आने का ख़याल करके उसे कुछ अफ़सोस भी होने लगा। सोचा, कल फिर जाऊँगा—ज़रूर—ज़रूर।

दूसरे दिन सबेरे जागने पर नरेन्द्र ने देखा कि शरीर बहुत ही अस्वस्थ है। बिस्तरे से भी उठने की शक्ति नहीं। बाहर

मुँह धोने को गरम पानी रख कर दासी 'नक्' कर गई। इसे सुन कर नरेन्द्र को और भी नींद आ गई। आख़िर साढ़े नौ बजे प्रातःकाल के नाश्ते का घण्टा बजने पर वह फिर जागा, किन्तु उठने की ताक़त न थी।

कुछ देर में दासी ने आकर बाहर से ही कहा—Please Mr. Ghosh मिसेस हैलम ने पुछवाया है कि क्या आप नाश्ते के लिए नीचे न आयेंगे?

नरेन्द्र ने क्षीण स्वर से कहा—नेली, उनसे कहो कि मेरी तबीअत ठीक नहीं। दया करके प्याला भर चाय और ज़रा सा नाश्ता मेरे लिए भेज दें।

कई मिनट के बाद दासी ने फिर आकर कहा—आपकी तबीअत नासाज़ सुन कर मिसेस हैलम दुःखित हैं। आपके लिए जलपान मैं यहां रक्खे जाती हूँ।

दासी के चले जाने पर नरेन्द्र किसी तरह उठा और दरवाज़ा खोल कर नाश्ते की ट्रे उठा लाया। बिस्तरे के पास सिपाई पर उसे रख दिया। थोड़ा सा नाश्ता करने और गरम चाय पीने से नरेन्द्र की तबीअत कुछ अच्छी मालूम होने लगी।

साढ़े नौ बजे दरवाज़े पर धक्का लगा "May I come in Ghosh?" बूढ़े मिस्टर हैलम का कण्ठस्वर था।

"Come in."

मिस्टर हैलम ने भीतर आकर पूछा—तुम्हारी तबीअत ठीक नहीं ? क्या हुआ है ?

"Very kind of you to come and enquire, Mr. Hallam ऐसी कोई ख़ास बीमारी नहीं है। run down सा मालूम होता है।"

किन्तु मिस्टर हैलम ने असल बीमारी को ताड़ लिया। उन्होंने मुसकुराकर कहा—"Gay young dog, I can see what you have been up to."—फिर कुछ गम्भीर स्वर से कहा—Bad, very bad.

वृद्ध थोड़ी देर तक खड़े रहे फिर—"लेट जाओ—" कह कर दरवाज़ा बन्द करते हुए चले गये।

नरेन्द्र फिर सो गया। कोई बारह बजे, दोपहर को उसकी नींद टूटी। देखा कि अभी तक कमज़ोरी है, किन्तु दिमाग़ बहुत कुछ ठीक हो गया है।

रात की घटनायें उसे एक एक कर याद आईं। याद आने से शरीर जैसे काँपने लगा। सोचा—क्या करने पर उतारू हो गया था ! मैं तो चूड़ान्त अधःपतन के सिमाने से लौट आया हूँ। जिस दिन लन्दन पहुँचा था उस दिन से लेकर अब तक की सारी घटनाओं की, अपनी करतूत की एक एक कर वह मन ही मन छानबीन करने लगा। उसका हृदय पश्चात्ताप से जर्जरित हो उठा। अपने भूत जीवन की बातें याद करते करते उसको सहसा निर्मला का मुख याद आगया।

वही मुँह जो विदाई के दिन आँसुओं से तर था। उस विदा के समय यदि कोई देवता उसको उसके भविष्य जीवन का यह दृश्य दिखा देता तो वह विलायत आता ही नहीं। पहले अपने ऊपर उसको कैसा अगाध विश्वास था। वह विश्वास अब चूरमूर होगया। आज अपनी दुर्बलता, अपनी अपदार्थता, का स्मरण कर वह मरने की इच्छा करने लगा। बिछौने में मुँह छिपा कर वह देर तक रोता रहा। निर्मला की याद करते करते एकाएक उसे कल रात की चिट्ठियों की याद आई। ओह वह तो भारतवर्ष की डाक है। उठ कर कोट की जेब से चिट्ठियाँ निकालीं। अरे, इस बार निर्मला की चिट्ठी नहीं है! उसकी सुसराल की एक भी चिट्ठी नहीं। ऐसा क्यों हुआ? तो क्या निर्मला की बीमारी बढ़ गई है—इसी से वह चिट्ठी नहीं लिख सकी? निर्मला आज दो महीने से बीमार है, किन्तु चिट्ठी तो हर मेल से मिलती थी। जैसे भी बना, कम से कम दो एक लाइनें वह ज़रूर लिख भेजती थी। तो क्या निर्मला जीवित नहीं? अपने प्रति धिक्कार देकर सोचा,—"यदि ऐसा हो तभी मुझे उचित दण्ड मिले"। बिछौने में मुँह छिपा कर नरेन्द्र फिर रोने लगा। किन्तु उसकी अन्तरात्मा ने निर्मला की मृत्यु की कल्पना करना स्वीकार न किया। वह आशा करने लगा कि चिट्ठी गड़बड़ हो गई होगी। आनेवाली मेल से निर्मला की दो चिट्ठियाँ मिलेंगी। धीरे धीरे कमज़ोरी के कारण सोचने-विचारने की उसकी शक्ति भी लुप्त हो गई। वह फिर सो गया।

कोई घण्टे भर के बाद आँख खुलने पर सुना—दासी दरवाज़ा खटखटा रही है—महाशय आपका एक तार आया है।

नरेन्द्र ने कहा—"नेली, दरवाज़े के भीतर तार फेंक दो।" दासी ने ऐसा ही किया।

नरेन्द्र ने लिफ़ाफ़ा खोल कर देखा कि चारु ने तार दिया है। उसने पूछा है, आज शाम को Hotel Cecil में नरेन्द्र उसके साथ भोजन कर सकता है या नहीं।

टेलिग्राम पढ़ कर नरेन्द्र ने सोचा कि निर्मला के सम्बन्ध में कोई आशंका नहीं। कोई ख़राब ख़बर होती तो चारु को घर की चिट्ठियों से ज़रूर पता लग जाता और इस दशा में भोजन के लिए वह निमन्त्रित न करता।

अपने ऊपर फिर उसे विराग हुआ। सोचा, "अभी तक मेरे शरीर पर अलकोहल का अन्तिम फल—सुस्ती—मौजूद है। इस अवसन्न दशा में मेरे मन में पछतावे के जो भाव उत्पन्न हुए हैं, वे, मेरे रक्त के स्वाभाविक सरलता प्राप्त करने पर, क्या बने रहेंगे? शायद इनको भूल जाऊँगा, प्रलोभन के आकर्षण में पडूँगा, अधःपतन की सीढ़ियाँ उतरने लगूँगा। इस समय मेरी वह दशा है; किन्तु कौन कह सकता है कि शाम को अर्ल्स कोर्ट न जाऊँगा? मुझे अब अपना रत्ती भर भी विश्वास नहीं, श्रद्धा नहीं। अब मेरा छुटकारा नहीं, मुक्ति नहीं?"—फिर कुछ देर के लिए उसने बिछौने में मुँह छिपा लिया।

सोच करके देखा कि चारु ने जो मेरा निमन्त्रण किया है यह बड़ी अच्छी बात है। मैं इस निमन्त्रण को स्वीकार करने का तार दूँगा। वहाँ चले जाने पर मुझे अर्ल्स कोर्ट जाने को फ़ुरसत ही न रहेगी। आज तो बच जाऊँगा। यही बहुत है।

यह सोच कर नरेन्द्र स्नान करने गया। स्नान के बाद उसने चारु को तार-द्वारा निमन्त्रण स्वीकार करने की सूचना दी।

× × ×

शाम को होटल सेसिल के एक कमरे में चारु, उसके बड़े भाई और भाभी बैठी हैं। भाभी ने कहा—चारु, तुमको मेरी चिट्ठी कब मिली? मार्सेल्स से चिट्ठी भेजने पर तुमको एक दिन पहले मिलेगी, इससे जल्दी जल्दी में दो तीन सतरों की ही चिट्ठी लिख सकी।

चारु ने कहा—आपकी चिट्ठी मुझे कल रात को मिली है।

तुमने नरेन्द्र को बतलाया तो नहीं कि निर्मला सबके साथ आ रही है? पहले तो कुछ निश्चय नहीं था। किन्तु रवाना होने के दो-एक दिन पहले निर्मला की मा ने आकर कहा, 'डाक्टरों की राय है कि समुद्र-यात्रा से निर्मला के शरीर को बहुत लाभ पहुँचेगा, इसलिए तुम उसे भी साथ लेती जाओ।' नरेन्द्र को खूब pleasant surprise देने के लिए मैंने निर्मला को मना कर दिया था कि तुम नरेन्द्र को कुछ

न लिखना। तुमको भी तो लिख दिया था कि नरेन्द्र से न कहना। केवल चतुराई से उसे बुला लाना।

चारु ने घड़ी खोल कर कहा—अब देर नहीं है। सात बजे हैं। नरेन्द्र अब आता ही होगा।

भाभी ने कहा—इस मेल से निर्मला की चिट्ठी न मिलने पर बेचारे ने न जाने कितना सोच किया होगा। उसके सब कष्टों का बदला इस समय चुक जायगा।

बाहर पैरों की आहट सुनाई पड़ी। फ़ुटमैन ने दरवाज़ा खोला और अदब के साथ कहा—मिस्टर घोष।

निर्मला का हाथ पकड़ कर चारु उठ खड़ा हुआ। नरेन्द्र के भीतर पाँव रखते ही आगे बढ़कर मज़ाक़ के ढँग पर उसने मुसकुराते हुए कहा—

"Allow me to introduce Mr. Ghosh to Mrs. Ghosh.

फूल का मूल्य

पहला परिच्छेद

लन्दन नगर में स्थान स्थान पर निरामिष भोजनालय है। मैं एक दिन नेशनल गैलरी में घूमने-फिरने और तसवीरें देखने-भालने में थक गया। ठीक समय पर एक बजा। भूख भी बहुत मालूम होने लगी। वहाँ पास ही सेण्ट मार्टिंस लेन में उक्त प्रकार का एक भोजनालय था। मैं धीरे धीरे चल कर वहाँ पहुँचा।

उस समय लन्दन के भोजनालयों में 'लंच' के लिए बहुत से लोगों का समागम आरंभ नहीं हुआ था। हॉल में जा कर देखा कि दो-चार भूखे आदमी इधर-उधर बेतरतीब बैठे हुए हैं। एक टेबल के सामने बैठ कर मैंने दैनिक अख़बार उठा लिया। नम्रमुखी वेट्रेस आकर मेरे सामने खड़ी होकर हुक्म की प्रतीक्षा करने लगी।

मैंने संवादपत्र से नज़र हटाई और हाथ में खाद्य-तालिका

लेकर ज़रूरी चीज़ों के लिए हुक्म दिया। "धन्यवाद, महाशय" कह कर शीघ्रगामिनी वेट्रेस निःशब्द चली गई।

इसी समय अपने टेबल से कुछ अन्तर पर रक्खे एक टेबल पर मेरी नज़र पड़ी। देखा, वहाँ एक अँगरेज़बालिका बैठी है। उस पर नज़र पड़ते ही उसने मेरी ओर से अपनी दृष्टि हटा ली। वह बड़े अचम्भे से मुझे देख रही थी।

इसमें कोई नई बात नहीं। क्योंकि श्वेतद्वीप में हम लोगों की देह के चमत्कारिक रङ्ग के प्रभाव से जन-साधारण सर्वत्र ही मोहित हो जाते हैं और इसलिए हम लोगों पर उनकी सबसे अधिक दृष्टि पड़ती है।

बालिका की उम्र तेरह-चौदह साल की होगी। उसकी पोशाक से जैसे ग़रीबी प्रकट हो रही थी। बाल पीठ पर बिखरे पड़े थे। उसकी आँखें थीं तो बड़ी बड़ी, किन्तु उनमें जैसे कुछ विषण्णता थी।

मैं उसकी ओर कनखियों से ताकने लगा। मेरे लिए भोजन की चीज़ें आने पर थोड़ी ही देर में वह भोजन कर चुकी। वेट्रेस ने आकर बिल लिख दिया। बाहर जाने के दरवाज़े के पास ही दफ़्तर है। बिल और मूल्य देने के लिए वहाँ जाना पड़ता है।

बालिका के उठने पर मेरी दृष्टि ने भी उसका पीछा किया। अपनी जगह पर बैठे बैठे मैंने देखा कि बालिका बिल चुका कर कर्मकारिणी से धीरे धीरे पूछ रही है,—Please miss, यह भला आदमी क्या कोई भारतवासी है?

"जँचता तो ऐसा ही है।"

"ये क्या यहाँ हमेशा आते हैं?"

"मालूम नहीं। याद नहीं आता कि कभी और देखा है।"

"धन्यवाद—" कह कर बालिका मेरी ओर घूमी और एक बार चकित दृष्टि से देख कर बाहर चली गई।

इस बार मुझे विस्मय हुआ। क्यों? बात क्या है? अपने सम्बन्ध में उसका यह कौतूहल देखकर मुझे भी उसके सम्बन्ध में कौतूहल हुआ। खा-पीकर मैंने वेट्रेस से पूछा—वह बालिका जो यहाँ बैठी थी उसको तुम जानती हो?

"नहीं महाशय, ख़ास तौर पर नहीं जानती। प्रति शनि-वार यहाँ आकर वह लंच खाती है। बस, यही मैंने देखा है।"

"तो शनिवार के सिवा और किसी दिन नहीं आती?"

"नहीं, और तो कभी देखा नहीं।"

"तो तुम अनुमान नहीं कर सकती हो कि वह कौन है?"

"शायद किसी दूकान में काम करती है।"

"यह तुमने क्योंकर समझा?"

"शायद इसकी आमदनी बहुत थोड़ी है। प्रतिदिन लंच खाने के लिए दाम नहीं रहते। शनिवार को साप्ताहिक वेतन पाती है, इसी से एक दिन आती है।"

दूसरा परिच्छेद

बालिका के सम्बन्ध का कौतूहल मेरे मन से दूर न हुआ। उसने इस प्रकार मुझे क्यों पूछा? ऐसा क्या रहस्य है, जिसके लिए उसे मेरे सम्बन्ध में इतनी उत्सुकता है? उसकी वह ग़रीबीभरी चिन्तापूर्ण, विषण्ण दृष्टि मेरे मन पर अधिकार करने लगी। अहा, वह बालिका कौन है? रविवार के दिन लन्दन की दूकानें बन्द रहती हैं। इसलिए सोमवार के दिन नाश्ता करके मैं बालिका की खोज में निकला।

सेण्ट मार्टिंस् लेन के पास के रास्तों में, ख़ास कर स्ट्रैण्ड से अनेक दूकानों में खोजा, किन्तु कहीं भी वह देख न पड़ी। किसी दूकान में जाने पर कुछ न कुछ ख़रीदना पड़ता है*।

* केवल आँखों के लिहाज़ से नहीं, बल्कि दया-धर्म के अनुरोध से ही ख़रीदना पड़ता है। लन्दन की प्रत्येक बड़ी बड़ी दूकान में Shop walkers हैं। जिस विभाग में गाहक जाना चाहे उस विभाग में उसे पहुँचा देना और साधारणतया काम-काज पर नज़र रखना उनका कर्तव्य है। यदि कोई गाहक किसी विभाग में सौदा देख कर बिना कुछ ख़रीदे लौट जाता है, तो वह Shop walker तुरन्त दूकान के मैनेजर से रिपोर्ट करता है—"अमुक Mess के विभाग से एक गाहक बैरंग लौट गया है।" रिपोर्ट पाकर मैनेजर कर्मचारिणी से कैफ़ियत तलब करता है। पहले पहल ताकीद की जाती है। बार बार इस तरह की रिपोर्ट होने पर जुर्माना किया जाता है और नौकरी भी छूट सकती है। इन Shop girls को बहुत थोड़ी तनख़्वाह मिलती है। चीज़ पसन्द न होने पर भी उनकी आँखों की प्रार्थना की उपेक्षा करके ख़ाली हाथ लौट आना गाहक के लिए दुःसाध्य है।

फ़ालतू नेकटाई, रूमाल, कालर के बटन, पेंसिल और तसवीरदार पोस्टकार्ड, मेरे ओवरकोट के पाकेट में स्तूपाकार हो उठे, किन्तु बालिका का कहीं भी पता न लगा।

सप्ताह बीत गया, फिर शनिवार आया। मैं फिर उसी निरामिष होटल में पहुँचा। वहाँ देखा कि उसी टेबल पर बालिका भोजन कर रही है। मैंने उसी टेबल के पास जाकर उसके सामने की कुर्सी पर बैठ कर कहा—Good afternoon, Sir.

बालिका ने संकोच के साथ कहा—Good afternoon Sir.

एक-आध बात छेड़ कर मैंने धीरे धीरे बातचीत का सिलसिला शुरू कर दिया। बालिका ने पूछा—क्या आप भारतवासी हैं ?

"जी हाँ।"

"क्षमा कीजिएगा,—तो क्या आप निरामिष-भोजी हैं ?"

मैंने उत्तर न देकर पूछा—क्यों, यह आप किसलिए पूछती हैं ?

"मैंने सुना है कि अधिकांश भारतवासी निरामिष-भोजी होते हैं।"

"तुमको भारतवर्ष-सम्बन्धी बात कैसे मालूम हुई।"

"मेरा बड़ा भाई भारतवर्ष में सैनिक है।"

अब मैंने उत्तर दिया—मैं सोलहों आने निरामिष-भोजी

तो नहीं हूँ, फिर भी बीच बीच में निरामिष भोजन करना ज़रूर पसन्द करता हूँ।

यह सुन कर बालिका कुछ निराश हुई।

मालूम हुआ कि जेठे भाई के सिवा बालिका का और कोई पुरुष अभिभावक नहीं। वह लैम्बेथ में बूढ़ी विधवा माता के साथ रहती है।

मैंने पूछा—तो तुम्हारे भाई की चिट्ठी आती है?

"जी नहीं, बहुत दिनों से कोई चिट्ठी नहीं आई। इसी से मेरी मा को बड़ी चिन्ता है। उनसे लोग कहते हैं कि भारतवर्ष में साँप, व्याघ्र और ज्वर बेहद है। इसी से उन्हें आशंका है कि मेरे भाई को कुछ भला-बुरा न हो जाय। तो क्या सच-मुच भारतवर्ष में, साँप, व्याघ्र और ज्वर बेहद हैं महाशय?"

मैंने मुसकुरा कहा—नहीं। ऐसा होता तो क्या वहाँ आदमी रह सकते?

बालिका ने हलकी सी ठण्ढी साँस लेकर कहा—"मा कहती हैं कि यदि किसी भारतवासी से भेंट हो तो सब बातें खुलासा पूछूँ।" यह कह कर उसने विनयपूर्ण दृष्टि से मेरी ओर देखा।

मैंने उसके मन की बात भाँप ली। उसे मुझसे खुलकर यह अनुरोध करने का साहस नहीं हुआ कि कृपा कर मेरे घर पर मा के पास चलिए।

इस दीन, विरहकातर जननी के साथ भेंट करने की मुझे बहुत उत्सुकता हुई। दरिद्र की कुटिया के प्रत्यक्ष परिचय का अवसर मुझे कभी मिला न था। देख आऊँगा कि इस देशवाले किस प्रकार जीवन बिताते हैं, और किस तरह सोच-विचार करते हैं।

मैंने बालिका से कहा—चलो न,—मुझे अपनी माँ के पास ले चलो? अपनी माँ से मेरी जान-पहचान करा देना?

इस प्रस्ताव से मानों बालिका की आँखों से कृतज्ञता फूट निकली। उसने कहा—Thank you ever so much,—it would be so kind of you. क्या आप इस समय चल सकते हैं?

"बड़ी खुशी से।"

"आपका हर्ज तो न होगा?"

"बिलकुल नहीं। आज तीसरे पहर का मेरा समय बिलकुल मेरा है।"

यह सुन कर बालिका पुलकित हुई। भोजन करके हम दोनों रवाना हुए। रास्ते में पूछा—मैं तुम्हारा नाम जान सकता हूँ?

"मेरा नाम एलिस मार्गरेट क्लिफर्ड है।" मैंने दिल्लगी के तौर पर कहा—ओफ्फो—तो तुम्हीं Alice in Wonderland की एलिस हो?

बालिका अचरज से एक-टक देखने लगी। कहा—क्या?

मैं कुछ लजा गया। मैं समझता था कि ऐसी कोई अँगरेज़-बालिका नहीं है जिसने Alice in Wonderland नामक अद्वितीय शिशुरञ्जन पुस्तक को कंठ न कर लिया हो।

मैंने कहा—वह एक बढ़िया पुस्तक है। तुमने पढ़ी नहीं?

"जी नहीं, मैंने तो नहीं पढ़ी।"

"तुम्हारी माता जो मुझे अनुमति दें तो मैं तुमको उसकी एक प्रति उपहार में दूँगा।"

इस प्रकार बातचीत करते करते हम सेण्ट मार्टिंस चर्च के पास होकर चेयरिंग क्रास स्टेशन के सामने आ पहुँचे। स्ट्रैंड से बड़े आकारवाली आमनिबस दौड़ी जा रही थीं। असंख्य कैब-गाड़ियाँ भी दौड़ रही थीं। टेलिग्राफ-आफ़िस के सामने फ़ुटपाथ पर खड़े होकर मैंने बालिका से कहा—आओ, हम यहाँ वेस्ट मिनिस्टर बस का इन्तज़ार करें।

बालिका ने कहा—चले चलने में क्या आपको कोई आपत्ति है?

मैंने कहा—कुछ भी नहीं। किन्तु तुमको कुछ कष्ट तो न होगा?

"जी नहीं, मैं तो रोज़ ही पैदल जाती हूँ।"

अब यह पूछने का अवसर मिला कि वह कहाँ काम करती है। अँगरेज़ी तरीक़े से इस प्रकार का सवाल करने का नियम नहीं, किन्तु सभी नियमों का सर्वत्र पालन नहीं किया जाता। जैसे कि रेल पर सवार होकर पास बैठे हुए यात्री से "कहाँ

जा रहे हैं महाशय?" पूछना भयानक पाप है, पर "क्या बहुत दूर जाइएगा?" पूछने में कोई दोष नहीं। वह कह सकता है कि अमुक स्थान तक जाऊँगा। उसको बताने की इच्छा न हो तो कह सकता है "जी नहीं, बहुत दूर नहीं जाना है।" प्रश्न का उत्तर भी मिल गया और उसका पर्दा भी न खुला। इसी हिसाब से मैंने बालिका से पूछा—तो इस तरफ़ तुम अक्सर आया करती हो?

बालिका ने कहा—जी हाँ, मैं सिविल-सर्विस स्टोर्स में टाइप-राइटर का काम करती हूँ। रोज़ शाम को घर जाती हूँ। आज शनिवार है, इससे जल्दी छुट्टी मिल गई।

"चलो, स्ट्रेण्ड का रास्ता छोड़ एम बैंकमेंट होकर चलें। भीड़ कम है!" कहकर मैंने उसका हाथ पकड़ सावधानी से रास्ता पार करा दिया।

टेम्स नदी के उत्तरी किनारे से एम बेंकमेंट नामक रास्ता गया है। मैंने चलते चलते पूछा—तो क्या तुम हमेशा इसी रास्ते से जाती हो?

बालिका ने कहा—जी नहीं, इस रास्ते में भीड़ तो कम रहती है लेकिन ऐसे लोगों की संख्या अधिक रहती है जो मैले कपड़े पहने रहते हैं। इससे मैं स्ट्रेण्ड और ह्वाइटहाल होकर घर जाती हूँ।

इस अशिक्षिता दरिद्र बालिका के आगे मैंने मन ही मन

पराजय स्वीकार की। अँगरेज़-जाति की सौन्दर्य्य-प्रियता के आगे मेरा यह आत्मपराजय पहले-पहल नहीं है।

बातचीत करते करते हम वेस्टमिनिस्टर ब्रिज के पास पहुँचे। मैंने पूछा—तुमको एलिस कहा करूँ या मिस क्लिफ़र्ड?

बालिका ने मुसकुरा कर कहा—मैं तो अभी तक काफ़ी सयानी नहीं हुई। आप चाहे जिस नाम से पुकार सकते हैं। लोग मुझे मेगी कहते हैं।

"तो क्या तुम सयानी होने के लिए उत्कण्ठित हो?"

"जी हाँ।"

"क्यों?"

"सयानी होने पर मैं काम करके अधिक पैदा कर सकूँगी। मेरी माँ बूढ़ी हो गई हैं।"

"जो काम तुम करती हो वह तुम्हें पसन्द है?"

"जी नहीं, मेरा काम तो बड़ी मैशीन की तरह है। और मैं ऐसा काम करना चाहती हूँ जिससे कि दिमाग़ से काम लेना पड़े। जैसे सेक्रेटरी का काम।"

हाउसेस् आव् पार्लामेण्ट के पास पुलिस का सन्तरी पहरा दे रहा है। उसको दहनी ओर छोड़ कर वेस्टमिनिस्टर के पुल को पार करते हुए हम दोनों लेम्बेथ पहुँचे। यह ग़रीबों की बस्ती है।

मेगी ने कहा—यदि कभी सेक्रेटरी हो सकूँगी तो माँ को इस महल्ले से हटाकर दूसरी जगह ले जाऊँगी

छोटे आदमियों की भीड़ को पार कर हम दोनों चलने लगे। मैंने पूछा—तुम्हारा पहला नाम छोड़कर दूसरा नाम क्यों लिया जाता है ?

मेगी ने कहा—मेरी माँ का भी पहला नाम एलिस है। इसी से मेरे पिता ने मेरा दूसरा नाम संक्षिप्त कर लिया था।

"तुम्हारे पिता तुमको मेगी कहा करते थे या मेगसी ?"

"जब आदर करके पुकारते थे तब मेगसी ही कहते थे। आपको किस तरह मालूम हुआ ?"

"मैंने मज़ाक में कहा—हाँ-हाँ, मैं भारतवासी न, जादू-विद्या और भूत-भविष्य की अनेक बातें हम लोग जानते हैं।"

बालिका ने कहा—यह मैंने भी सुना है।

मैंने विस्मित होकर पूछा—अच्छा ! तुमने क्या सुना है ?

"सुना है कि भारतवर्ष में ऐसे भी लोग हैं, जो अलौकिक करामात कर दिखाते हैं। उनको योगी कहते हैं। किन्तु आप तो योगी नहीं हैं।"

"मेगी, तुमने कैसे समझ लिया कि मैं योगी नहीं हूँ।"

"क्योंकि योगी लोग मांस नहीं खाते।"

"तो इसी से तुमने मुझसे पूछा था कि निरामिष-भोजी हूँ या नहीं ?"

बालिका कुछ उत्तर न देकर मुसकुराने लगी।

अब हम एक छोटे से घर के दरवाज़े पर पहुँचे। जेब से

लेच-की निकाल कर मेगी ने दरवाज़ा खोला। भीतर जाकर मुझसे कहा—आइए।

तीसरा परिच्छेद

भीतर जाने पर मेगी ने दरवाज़ा बन्द कर दिया और सीढ़ी के पास जाकर ज़रा ऊँची आवाज़ से पुकारा—माँ, तुम कहाँ हो ?

नीचे से आवाज़ आई—मैं रसोई-घर में हूँ बेटी, उतर आ।

यहाँ यह कहना आवश्यक है कि लन्दन की सड़कें ज़मीन से ऊँची हैं। रसोई-घर प्रायः रास्ते के समतल से नीचा होता है।

माँ का स्वर सुन कर मेगी ने मेरी ओर देख कर कहा—Do you mind? मैंने कहा—Not in the least चलो।

सीढ़ी तय करके मैं बालिका के साथ उसके रसोई-घर में पहुँचा।

दरवाज़े पर ठहर कर मेगी ने कहा—माँ, भारतवर्ष के एक भले आदमी तुमसे मिलने आये हैं।

बुढ़िया ने आग्रह से पूछा—वे कौन हैं ?

मैं मेगी के पीछे पीछे मुसकुराता हुआ भीतर गया।

बालिका ने हमारा परस्पर परिचय करा दिया—"ये मिस्टर गुप्त हैं। ये मेरी माँ हैं।"

" How do you do!" कह कर मैंने हाथ बढ़ाया।

"क्षमा कीजिएगा, मेरा हाथ साफ़ नहीं।" कह कर मिसेस क्लिफ़र्ड ने अपना हाथ दिखलाया। उसमें मैदा लगा हुआ था। कहने लगीं—आज शनिवार है, इससे केक बना रही हूँ। शाम को आकर लोग ख़रीद ले जायँगे। रात में सड़क पर यह बेची जायगी। इसी प्रकार हम मुश्किल से गुज़र करती हैं।

दरिद्र-महल्ले में शनिवार की रात एक महोत्सव जैसी होती है। असंख्य लोग ठेलागाड़ियों में, बत्ती जलाये हुए, बेचने को सौदा लिये रास्ते रास्ते घूम कर बेचते फिरते हैं। सड़कों में आज शाम को नित्य से अधिक भीड़ भाड़ रहती है। शनिवार ही ग़रीबों के लिए सौदा-सुलुफ़ करने का दिन है। क्योंकि उन्हें साप्ताहिक वेतन उसी दिन मिलता है।

ड्रेसर* पर मैदा, चर्बी, किसमिस और अण्डा प्रभृति केक तैयार करने की सामग्री रक्खी है। टीन के एक बर्तन में हाल की पकी हुई कई केक भी रक्खी हैं।

मिसेस क्लिफ़र्ड ने कहा—ग़रीब आदमी के बावर्चीख़ाने में बैठना आपको बुरा न लगेगा? मैं क़रीब क़रीब काम कर चुकी हूँ। मेगी, तुम इनको बैठक में ले चलो। मैं अभी आती हूँ।

---

* रसोई-घर के टेबल को ड्रेसर कहते हैं।

मैं—नहीं-नहीं, मैं यहीं अच्छी तरह बैठूँगा। आप तो बहुत बढ़िया केक पकाती हैं।

मिसेस क्लिफ़र्ड ने मुझे धन्यवाद दिया।

मेगी ने कहा—"माँ टेफी अच्छी बनाती हैं। चख कर देखिएगा?

मैंने ख़ुशी के साथ सम्मति जताई। एक 'कपर्ड' खोल कर मेगी टीन के डब्बे में मुँह तक भरी हुई टेफी ले आई। मैं चख करके तारीफ़ करने लगा।

केक तैयार करते करते मिसेस क्लिफ़र्ड ने पूछा—भारतवर्ष कैसा देश है महाशय?

"बढ़िया देश है।"

"रहने योग्य है न? कुछ खटका तो नहीं?"

"जी हाँ, रहने योग्य है। लेकिन इस देश के समान ठंडा नहीं है। कुछ गरम देश है।"

"क्या वहाँ साँप और बाघ बहुतायत से हैं? वे मनुष्यों को सताते तो नहीं?"

मैंने हँस कर कहा—इन बातों पर विश्वास न कीजिए। साँप और बाघ जङ्गल में रहते हैं, बस्ती में नहीं। अगर कभी बस्ती में आ भी जाते हैं तो तुरन्त मार डाले जाते हैं।

"और ज्वर?"

"भारतवर्ष में कहीं कहीं अधिक होता है। लेकिन सर्वत्र नहीं और सब समय भी नहीं।"

"मेरा बेटा पंजाब में है। वह सैनिक है। पंजाब कैसी जगह है महाशय ?"

"पंजाब अच्छी जगह है। वहाँ ज्वर कम होता है। स्वास्थ्य खूब अच्छा रहता है।"

मिसेस क्लिफर्ड ने कहा—यह जान कर मैं सुखी हुई।

वे केक तैयार कर चुकीं। बेटी से कहा—मेगी, तू मिस्टर गुप्त को ऊपर ले जा। मैं हाथ धोकर चाय तैयार करके लाती हूँ।

आगे आगे मेगी और पीछे पीछे मैं बैठक में पहुँचा। साज-सामान बहुत मामूली और कम कीमत का है। फ़र्श की दरी बहुत पुरानी हो गई है। जगह जगह पर फट भी गई है। किन्तु है बहुत साफ़।

मेगी ने कमरे में आकर पर्दे हटा दिये और खिड़कियाँ खोल दीं। काँच जगा हुआ पुस्तकों का एक केस था। मैं खड़ा होकर वही देखने लगा।

थोड़ी देर में मिसेस क्लिफर्ड हाथ में चाय का ट्रे लिये आ पहुँची। अब उनके शरीर पर रसोई-घर का एक भी चिह्न न था। चाय पीते पीते मैं भारतवर्ष की बातें बताने लगा।

मिसेस क्लिफर्ड ने अपने बेटे का एक फ़ोटोग्राफ़ दिखाया। वह भारतवर्ष को जाने के पहले लिया गया था। उनके लड़के का नाम फ्रांसिस या फ्रैंक है। मेगी ने तसवीरों की एक किताब निकाली। उसकी वर्ष-गाँठ के उपलक्ष में उसके

भाई ने भेजी थी। इसमें शिमले की अनेक अट्टालिकाओं और स्वाभाविक दृश्यों की तसवीरें थीं। भीतर लिखा था—To Maggie on her birth-day, from her loving brother Frank.

मिसेस क्लिफ़र्ड ने कहा—मेगी, वह अँगूठी लाकर मिस्टर गुप्त को तो दिखला दे।

मैंने कहा—तुम्हारे भाई ने भेजी है क्या? क्यों मेगी, कैसी अँगूठी है? लाओ देखूँ तो सही।

"वह जादू की अँगूठी है। एक योगी ने फ्रैंक को दी थी।" कह कर मेगी अँगूठी निकाल लाई। मुझसे पूछा—क्या आप इससे भूत-भविष्य बतला सकते हैं?

Crystal gaying नामक एक मामले की बातें मैं बहुत दिनों से सुन रहा हूँ। देखा, अँगूठी पर एक स्फटिक जड़ा है। हाथ में लेकर मैं उसे देखने लगा।

मिसेस क्लिफ़र्ड ने कहा—फ्रैंक ने यह अँगूठी भेजते समय लिखा था कि संयत मन से इस स्फटिक की ओर देख कर किसी दूरवर्त्ती मनुष्य का ख़याल करने से, उसके सब कार्य-कलाप इसमें दिखाई देंगे। उस योगी ने फ्रैंक को यह बात बतलाई थी। बहुत दिनों से फ्रैंक की कोई ख़बर न पाकर मैंने और मेगी ने कई बार इसकी ओर बहुत टकटकी लगाई और ख़याल किया है, किन्तु कुछ फल नहीं हुआ। आप एक बार देखिए तो सही। आप हिन्दू हैं, आप सफल हो सकते हैं।

मैंने देखा कि कुसंस्कार कुछ भारतवर्ष में ही नहीं है; वह यहाँ विलायत में भी है। मामूली पीतल की अँगूठी थी जिसमें एक काँच का टुकड़ा जड़ा था। फिर भी माँ-बेटी से यह बात कहने को मन न माना। उन दोनों ने समझ रक्खा था कि उनके फ्रैंक ने उस बहुदूर स्वप्नवत् भारतवर्ष से यह नई विचित्र वस्तु उनके पास भेजी है। इस विश्वास को मैं नष्ट भी करूँ तो कैसे ?

मिसेस क्लिफ़र्ड और मेगी का अत्यन्त आग्रह देख कर मैं अँगूठी को हाथ में ले स्फटिक की ओर देर तक एक-टक देखता रहा। अन्त में उन्हें अँगूठी लौटा कर कहा—मुझे तो कुछ भी दिखाई नहीं पड़ा।

माँ-बेटी दोनों ही कुछ दुःखित हुईं। उनका ध्यान दूसरी ओर ले जाने के लिए मैंने कहा—मेगी, यह सारंगी शायद तुम्हारी है।

मिसेस क्लिफ़र्ड ने कहा—जी हाँ, मेगी अच्छी तरह बजा सकती है। कुछ बजा-सुना दे मेगी।

मेगी ने माता की ओर रोष-कटाक्ष कर कहा—Oh mother!

मैंने कहा—मेगी ज़रा बजाओ न! मुझे सारंगी का स्वर बहुत अच्छा लगता है। देश में मेरी एक बहन है। उसकी उमर तुम्हारी ही इतनी होगी। वह मुझे सारंगी बजाकर सुनाती थी।

मेगी ने कहा—मेरा बजाना तो बिलकुल ही सुनने लायक़ नहीं होता।

मेरे बहुल आग्रह पर मेगी बजाने को तैयार हुई। कहने लगी—मेरे भण्डार में कुछ अधिक नहीं है, क्या सुनिएगा ?

"तो मैं ही फ़र्माइश करूँ ? अच्छा तुम अपना म्यूज़िक-केस ले आओ। क्या क्या है, देखूँ तो।"

मेगी ने काले चमड़े का बना एक पुराना म्यूज़िक-केस निकाला। खोल कर देखा कि उसमें अधिकांश स्वरलिपि सामान्य है, जैसे 'Good-bye Dolly Grey," "Honey suckle and the Bee," वग़ैरह। लेकिन कुछ चीज़ें सचमुच बढ़िया हैं यद्यपि फ़ैशन के हिसाब से वे बहुत पुरानी होगई हैं—यथा "Annie Laurie," "Robin Adair," "The last Rose of Summer" इत्यादि। मैंने देखा कि कुछ स्काच गीत भी हैं। स्काच गाना मुझे बहुत पसन्द है। इसी से "Blue bells of Scotland" नामक स्वर-लिपि चुन कर मैंने मेगी के हाथ में देदी।

मेगी सारंगी में बजाने लगी। मैंने मनही मन अलाप कर गीत गाया—

"Oh where—and where—is my Highland lad die gone"

बजाना ख़तम होने पर मैं मेगी को धन्यवाद देकर उसकी प्रशंसा करने लगा। मिसेस क्लिफ़र्ड ने कहा—मेगी

को कभी उपयुक्त शिक्षा पाने का अवसर नहीं मिला। जो कुछ सीखा है, मेहनत से सीख लिया है। यदि कभी हम लोगों के दिन फिरेंगे तो इसको lessons दिलाने का बन्दोबस्त करूँगी।

बातचीत हो चुकने पर मैंने कहा—मेगी और कुछ बजाओ न।

अब मेगी का संकोच हट चुका था। कहने लगी—कहिए, क्या बजाऊँ?

मैं उसकी स्वर-लिपि में खोजने लगा। शौकीनों की समाज में वर्तमान समय में जिन गीतों का आदर है उनमें से एक भी न मिला। सोचा, उन गीतों की प्रतिध्वनि इस दरिद्र-महल्ले में अभी तक नहीं पहुँची।

खोजते खोजते अकस्मात् एक उच्च श्रेणी की स्वरलिपि मिली। यह Gounod रचित Faust नामक Opera का Flower song था। गान हाथ में लेकर मैंने कहा—इसे बजाओ।

मेगी ने बजाया। बजाना ख़तम होने पर कुछ देर तक मैं विस्मय से चुप रहा। Culture नाम की चीज़ योरपीय समाज की तह में कितने नीचे तक पहुँच चुकी है, यही मेरे विस्मय की बात थी। मेगी ने इस कठिन स्वरलिपि को भी बड़ी सफ़ाई से बजा लिया—और मज़ा यह कि वह निम्नश्रेणी की एक बालिका-मात्र है। मैंने सोचा, कलकत्ते

में किसी दिग्गज बैरिस्टर अथवा प्रसिद्ध सिविलियन की—मेगी की हमजोली की—कन्या गुनोड के फ़ास्ट से यदि एक संगीत ऐसे बढ़िया ढंग से बजाती तो समाज में वाह वाह होने लगती।

मेगी को धन्यवाद देकर मैंने पूछा—तुमने क्या यह भी खुद ब खुद सीख लिया है।

"नहीं, यह मैंने खुद ब खुद नहीं सीखा। अपने गिरजा के मिनिस्टर की बेटी से मैंने इसे सीखा है। आपने कभी यह अपेरा सुना है?

मैं—नहीं। मैंने अपेरा में कभी फ़ास्ट नहीं सुना। परन्तु गाइट के फ़ास्ट के अँगरेज़ी अनुवाद का अभिनय लाईसीयम मे देखा है।

"लाईसीयम में? जहाँ अर्विंग अभिनय करते हैं?"

"हाँ, तुमने अर्विंग का अभिनय देखा है?"

मेगी ने उदासी से कहा—जी नहीं, मैं किसी वेस्ट एण्ड थियेटर कभी गई नहीं। अर्विंग को कभी देखा तक नहीं। चित्रों की दूकान की खिड़की से उनका फ़ोटोग्राफ़ ज़रूर देखा है।

"अर्विंग आज-कल लाईसीयम में Merchant of Venice का अभिनय करते हैं। मिसेस क्लिफ़र्ड और तुम यदि एक दिन चलो तो बड़े आनन्द से मैं तुम लोगों को ले चलूँ।

मिसेस क्लिफ़र्ड धन्यवाद के साथ सहमत हो गई। मैंने पूछा—आप किस समय का अभिनय देखना पसन्द करती हैं, दिन के तीसरे पहर का या रात का ?

लन्दन में थियेटर में रोज़ रात को अभिनय होता है (रविवार छोड़ कर)। इसके सिवा किसी थियेटर मे शनिवार को, किसी में बुधवार को, किसी में शनि और बुध दोनों ही दिन 'मार्टिन' अर्थात् दिन के तीसरे पहर भी अभिनय होता है। किसी थियेटर में एक नाटक का आरम्भ होने पर प्रति दिन वही अभिनय होता है। जब तक दर्शकों की कमी नहीं होती तब तक इसी तरह चलता है। इस प्रकार कोई नाटक दो महीने, कोई छः महीने—या लोकप्रिय Musical Comedy होने पर दो तीन साल तक लगातार होता रहता है।

मिसेस क्लिफ़र्ड ने कहा—मेरी तबीअत ठीक नहीं। तीसरे पहरवाले अभिनय में ही सुभीता होगा। किसी शनिवार को मेगी की छुट्टी के बाद सब एक साथ चलेंगे।

मैं—बहुत अच्छा। सोमवार के दिन जाकर जिसी शनिवार के टिकट पाऊँगा उसी के टिकट ख़रीद लूँगा और आपको सूचना दूँगा।

मेगी ने कहा—किन्तु मिस्टर गुप्त, आप बहुत अधिक दाम का टिकट न ख़रीदिएगा। यदि आप क़ीमती टिकट ख़रीदेंगे तो हम लोग बहुत दुःखित होंगी।

मैंने कहा—नहीं जी, अधिक दाम के टिकट क्यों ख़रीदूँगा। अभी अपर सर्किल का टिकट ख़रीदूँगा। मैं भारतवर्ष का कोई राजा-महाराजा नहीं हूँ—अच्छी बात है, तुमने Merchant of Venice पढ़ा है?

"मूल नाटक नहीं पढ़ा है। स्कूल की मेरी पाठ्य-पुस्तक में Lamb's Tales से थोड़ी सी कहानी उद्धृत थी। मैंने उसी को पढ़ा है।"

"अच्छा, मैं तुम्हारे लिए एक मूल नाटक भेज दूँगा। अच्छी तरह पढ़ रखना। उससे अभिनय समझने में सुभीता होगा।"

शाम हो रही थी। मैंने उन लोगों से विदा माँगी।

सोमवार के दिन दस बजे लाईसीयम के बाक्स-आफ़िस में जाकर मैंने कर्मचारी से पूछा—अगले शनिवार के तीसरे पहरवाले—अभिनय के लिए मुझे अपर सर्किल के तीन टिकट मिल सकते हैं?

"नहीं महाशय, अभी दो शनिवार तक नहीं। सारी बैठकों के टिकट बिक गये हैं।"

"तीसरे शनिवार को?"

"उस दिन के लिए दे सकता हूँ।" कह कर उसने उस तारीख़ का एक प्लेन निकाला। देखा, उस शनिवार को भी अपर सर्किल की कई सीटें बिक गई हैं। बिकी हुई सीटों का नम्बर नीली पेंसिल से कटा हुआ था।

प्लेन हाथ में ले ख़ाली सीटों में से एक स्थान की परस्पर संलग्न तीन सीटें पसन्द करके मैंने उनका नम्बर कर्मचारी को बतला दिया। बारह शिलिङ्ग में उन नम्बरों के टिकट ख़रीद कर मैं डेरे पर चला आया।

चौथा परिच्छेद

तीन महीने होगये। मैं इस बीच में और भी कई बार मेगी के साथ जाकर उसकी माता से मिल आया हूँ। मैं एक दिन मेगी को जू—गार्डन भी ले गया था। वहाँ Indian Rajah नामक हाथी पर अन्यान्य बालक-बालिकाओं के साथ मेगी भी चढ़ी थी। हाथी पर चढ़ने से उसको बेहद ख़ुशी हुई।

किन्तु अभी तक उसके भाई की कुछ ख़बर नहीं मिली। एक दिन मिसेस क्लिफ़र्ड के अनुरोध से मैंने इण्डिया आफ़िस में जाकर ख़बर ली। सुना कि जिस रेजिमेन्ट में फ्रैंक है वह आज-कल सीमान्त-समर में तैनात है। यह ख़बर पाकर मिसेस क्लिफ़र्ड अत्यन्त चिन्तित हुईं।

एक दिन सवेरे मेगी का एक पोस्टकार्ड मिला। उसने लिखा था—

प्रिय मिस्टर गुप्त,

मेरी माँ बहुत बीमार हैं। मैं एक हफ़्ते से काम पर नहीं

जा सकी। यदि आप एक बार दया कर आवेंगे तो मैं बड़ी कृतज्ञ हूँगी।

मेगी।

मैं जिस परिवार में रहता था उन लोगों से मेगी और उसकी माता के सम्बन्ध में मैंने बातचीत की थी। आज सवेरे जलपान के समय यह संवाद भी उन्हें सुना दिया।

गृहिणी ने मुझसे कहा—"तुम जब जाना, तो रुपया लेते जाना। लड़की एक हफ़्ते से काम पर नहीं गई। तनख़्वाह भी न मिली होगी। मालूम होता है, वे बड़ी मुसीबत में हैं।

नाश्ता करके मैंने कुछ रुपये लिये और लेम्बेथ की राह ली। उनके घर पहुँच कर दरवाज़ा खटखटाया। मेगी ने दरवाज़ा खोल दिया।

उसका चेहरा बहुत ही उदास था। आँखें धँस गई थीं। मुझको देखते ही कहा—Oh thank you Mr. Gupta. It is so kind—

पूछा—मेगी, तुम्हारी माँ कैसी हैं ?

मेगी ने कहा—इस समय सो रही हैं। वे बहुत बीमार हैं। डाक्टर ने कहा है कि फ्रैंक का समाचार न मिलने से फ़िक्र के मारे उनकी बीमारी बढ़ गई है। शायद वे बचेंगी नहीं।

मैं मेगी को ढाढ़स देने लगा। अपने रूमाल से मैंने उसकी आँखें पोंछ दीं।

मेगी ने कुछ स्वस्थ होकर कहा—आपसे मैं एक भिक्षा माँगती हूँ।

मैं—क्या मेगी ?

"बैठक में चलिए, वहीं कहूँगी।"

हम लोगों के पैरों की आहट से कहीं बुढ़िया की आँख खुल न जाय, इसलिए हम दोनों सावधानी से बैठक में गये। फ़र्श पर खड़े होकर मैंने स्नेह से पूछा—अच्छा, अब बतलाओ ?

मेरे मुँह की ओर मेगी घबराहट की दृष्टि से कुछ क्षण देखती रही। मैं भी प्रतीक्षा में रहा। अन्त में मेगी बिना कुछ कहे दोनों हाथों से मुँह ढक कर रोने लगी।

मैं बड़ी मुश्किल में पड़ा। इस बालिका को किस तरह ढाढ़स बँधाऊँ ? इसका भाई सीमान्त-समर में है। जीता है या मर गया, भगवान् ही जाने। पृथ्वी में एक-मात्र आधार माता थी। उस माता के भी न रहने से इसकी क्या दशा होगी ? यह यौवनोन्मुखी बालिका इस लन्दन में कहाँ खड़ी होगी ?

मैंने ज़ोर लगाकर उसके मुँह पर से हाथ हटा दिये और कहा—मेगी, क्या कहना है कहो। अगर मैं कुछ उपकार कर सकूँगा तो मैं उसे करने में कोई कसर न करूँगा।

मेगी ने कहा—मिस्टर गुप्त, नहीं जानती कि मैं जो प्रस्ताव करूँगी उसे सुन कर आप क्या सोचेंगे। यदि वह बहुत गर्हित हो, तो मुझे क्षमा कीजिएगा।

"क्या प्रस्ताव है ?"

कल दिन भर माँ यही कहती रही हैं कि यदि मिस्टर गुप्त श्राकर उस स्फटिक की श्रोर कुछ देर तक देखें तो शायद फ्रैंक की खबर बतला सकें। वे तो हिन्दू हैं।—इसी के लिए मैंने आपको बुलाया है।

"यदि तुम्हारी इच्छा ही है तो उस अँगूठी को ले श्राश्रो,—मैं श्रवश्य चेष्टा करूँगा।"

मेगी ने घबराये हुए स्वर से कहा—किन्तु यदि इस बार भी कुछ फल न हो तो ?

मैंने मेगी के मन के भाव को भाँप लिया। भाँप कर चुप हो रहा।

मेगी ने कहा—मिस्टर गुप्त, मैंने पुस्तकों में पढ़ा है कि हिन्दू-जाति बहुत ही सत्यपरायण है। स्फटिक देखने के बाद आप यदि माँ से यह कह दें—'फ्रैंक अच्छा है—जीवित है,—क्या यह बात बिलकुल झूठ होगी ? बहुत बेजा होगी ? यह कहते कहते बालिका की आँखों से आँसू टपकने लगे।

मैंने लहमे भर तक सोच-विचार किया। फिर मन में सोचा, मैं कोई पुण्यात्मा नहीं—मैंने इस जीवन में बहुत से पाप किये हैं। एक पाप श्रौर सही। यह मेरा सबसे छोटा पाप होगा।

प्रकट में कहा—मेगी, तुम चुप रहो, रोश्रो मत। लाश्रो

वह अँगूठी, दो एक बार अच्छी तरह देखूँ तो सही। यदि कुछ भी न दीख पड़ेगा तो जैसा तुमने कहा है वैसा ही करूँगा। वैसा करना यदि अन्याय होगा, तो ईश्वर मुझे क्षमा करेंगे।

मेगी ने अँगूठी लाकर मुझे दी। उसे हाथ में लेकर मैंने मेगी से कहा,—अच्छा तुम देख तो आओ कि तुम्हारी माँ जागी हैं या नहीं।

कोई पन्द्रह मिनट में मेगी ने लौट आकर कहा—माँ जाग उठी हैं। उनको आपके आने की सूचना भी दे दी है।

"तो मैं चल कर उनको देख सकता हूँ?"

"चलिए।"

मैं बुढ़िया की रोग-शय्या के समीप गया। मेरे हाथ में अभी तक वह अँगूठी है। बुढ़िया से 'गुड मार्निंग, करके मैंने कहा—मिसेस क्लिफ़र्ड, आपका बेटा मज़े में है, जीवित है।

यह सुनते ही बुढ़िया ने तकिये से माथा कुछ ऊँचा किया और पूछा—क्या आपने यह स्फटिक पर देखा है?

मैंने बेधड़क होकर कहा—मिसेस क्लिफ़र्ड, मैंने यह स्फटिक में ही देखा है।

बुढ़िया ने फिर तकिये पर सिर रख लिया। उसकी आँखों से आनन्द के आँसू झरने लगे। वह अस्फुट स्वर से कहने लगी—God bless you—God bless you.

× × ×

मिसेस क्लिफ़र्ड को इस मर्तबा आराम हो गया।

पाँचवाँ परिच्छेद

अब मेरे देश लौटने के दिन निकट आगये। एक बार इच्छा हुई कि लैम्बेथ जाकर मेगी और उसकी माता से विदा हो आऊँ। किन्तु वह परिवार इस समय शोक-सन्तप्त है। फ्रैंक सीमान्त-युद्ध में मारा गया है। एक महीना हुआ, काले बार्डर-दार चिट्ठी के ज़रिए मेगी ने मुझे यह ख़बर दी थी। हिसाब करके देखा कि जिस दिन मैंने मिसेस क्लिफ़र्ड से कहा था कि उनका पुत्र मज़े में है, जीवित है, उसके पहले ही फ्रैंक दुनिया से चल बसा था, इस कारण मिसेस क्लिफ़र्ड को मुँह दिखाने में मुझे लज्जा मालूम होने लगी। इसी से मैंने एक पत्र लिख कर मेगी और उसकी माँ को यहाँ से विदा होने की बात जताई।

क्रम से लन्दन में मेरी अन्तिम रात बीती। सवेरा हुआ। मैं आज देश को जाऊँगा। परिवार के सब लोगों के साथ नाश्ता कर रहा हूँ। इसी समय बाहर के दरवाज़े पर शब्द हुआ।

दासी ने आकर सूचना दी—Please Mr. Gupta—मिस क्लिफ़र्ड आपसे मिलने आई हैं?

अभी मैं नाश्ता कर ही रहा था। मैं समझ गया कि मेगी, मुझसे विदा होने आई है। उसे नौकरी पर जाने में कहीं देर न हो जाय, इस आशङ्का से मैंने गृहिणी की अनुमति

लेकर टेबल छोड़ दिया। हॉल में जाकर देखा कि काले कपड़े से शरीर को ढके हुए मेगी खड़ी है।

पास ही पारिवारिक लाइब्रेरी का कमरा था। वहाँ ले जाकर मैंने मेगी को बिठाया।

मेगी ने कहा—आप आज ही जाइएगा?

"हाँ मेगी, आज जा रहा हूँ।"

"देश पहुँचने में आपको कितने दिन लगेंगे?"

"दो सप्ताह से कुछ अधिक।"

"वहाँ आप किस जगह रहेंगे?"

"मैं पंजाब सिविल-सर्विस में भर्ती हुआ हूँ। वहाँ पहुँचे बिना मैं ठीक ठीक नहीं कह सकता कि मुझे कहाँ रहना होगा।

"वहाँ से सीमान्त क्या बहुत दूर है?"

"नहीं, बहुत दूर नहीं है।"

"डेरागाज़ीख़ाँ के पास फ़ोर्ट मनरो में फ्रैंक की समाधि है।" कहते कहते बालिका की आँखों से आँसू टपक पड़े।

"मैं जब उस ओर जाऊँगा तब अवश्य ही तुम्हारे भाई की समाधि देख कर तुमको चिट्ठी लिखूँगा।"

मेगी ने कहा—किन्तु आपको कष्ट और असुविधा तो न होगी?

"कैसा कष्ट? कहाँ की असुविधा? मैं जहाँ रहूँगा वहाँ से डेरागाज़ीख़ाँ बहुत दूर नहीं है। मौक़ा मिलते ही मैं एक बार वहाँ ज़रूर जाऊँगा और तुमको लिखूँगा।"

मेगी के चेहरे से कृतज्ञता प्रकट होने लगी। उसने मुझे धन्यवाद दिया,—उसका गला रुँध गया। उसने पाकेट से एक शिलिंग निकाल कर मेरे सामने टेबल पर रक्खा और कहा—आप जब वहाँ जायँ तब एक शिलिंग के फूल खरीद कर मेरे भाई की समाधि पर फैला दीजिएगा।

भाव के आवेग में मैं नीची नज़र किये रहा।

सोचा कि बालिका के बहुत कष्ट से कमाये हुए इस शिलिंग को लौटा दूँ और कहूँ कि हमारे देश में फूल सब जगह बहुतायत से होते हैं, मोल नहीं लेने पड़ते।

किन्तु फिर सोचा, इस त्याग के सुख से बालिका को वंचित क्यों करूँ? बड़े श्रम से उपार्जित इस शिलिंग के द्वारा जितना भी सुख मिल सकता है, उसे प्रेम के नाते त्याग देने को यह उद्यत हुई है। उस त्याग के सुख की बड़ी कीमत है—त्याग के उस सुख को प्राप्त करने से इसका विरह-तप्त हृदय कुछ शीतल होगा। उस सुख से बालिका को वंचित करने में क्या लाभ है?—यह सोच कर मैंने शिलिंग ले लिया।

"मेगी, इस शिलिंग के फूल खरीद कर मैं तुम्हारे भाई की समाधि पर सजा दूँगा।"

मेगी उठ खड़ी हुई। कहने लगी—मैं आपको क्या कह कर धन्यवाद दूँ? मेरा काम पर जाने का वक़्त होगया है। Good-bye—पत्र भेजते रहियेगा।

"मैंने उठ कर मेगी का हाथ अपने हाथ में ले लिया, और "Good-bye Magic—Heaven bless you;"—कह कर मैंने उसके हाथ को होंठों के पास ले जाकर चूम लिया।

मेगी चली गई।

रूमाल से आँखों के आँसू पोंछ कर मैं बक्स-ट्रंक आदि ठीक करने के लिए ऊपर चला गया।

पुनर्मूषिक

पहला परिच्छेद

गरमी का मौसम है। वारीन्द्रनाथ का सन्ध्या-भोजन हो चुका। आठ बजे हैं, किन्तु लन्दन में खासा दिन का सा उजेला है। जून महीने में वहाँ नौ बजे के पहले अँधेरा नहीं होता।

वारीन्द्रनाथ बेजवाटर में रहता है, क़ानून पढ़ता है। कम से कम क़ानून पढ़ने के लिए ही उसके चाचा ने उसे विलायत भेजा है। विलायत में उसको दो साल हो चुके किन्तु अभी तक एक भी पुस्तक मोल लेने अथवा क़ानून की वक्तृता सुनने का उसे सुभीता नहीं हुआ। हाल में उसने बहुत बड़ी प्रतिज्ञा की है। इस बार देश से रुपया आने पर वह क़ानून की दो एक पुस्तकें मोल लेगा और गरमी की छुट्टी के बाद, टर्म आरम्भ होने पर, नियमानुसार लेक्चर सुनने जायगा। अधिक क्या, आज दो हफ़्ते से वह किसी थियेटर

में नहीं जाता। पिछले रविवार को मिस मेनिंग के साथ भेंट कर आया है।

लैण्ड-लेडी आई और टेबल साफ़ करने लगी। सिगरेट मुँह में दबाये हुए वारीन्द्र ने कहा—मिसेस ब्राउन।

"क्या है महाशय ?"

"मुझे दश शिलिंग उधार दे सकती हो ?"

एप्रन कपड़े से हाथ पोंछते पोंछते मिसेस ब्राउन ने कहा—दस शिलिंग ? मिस्टर चटर्जी मुझे खेद है, मेरे पास नहीं। तीन सप्ताह से आपके बिल बाकी पड़े हैं—इसलिए मुझे बहुत सँभल कर खर्च करना पड़ता है। दूधवाला भी दाम लेने आया था, तीन बार लौटा दिया है। मांस बेचनेवाले को—

वारीन्द्र ने बीच में ही रोक कर कहा—मिसेस ब्राउन !

"महाशय !"

"मुझसे ये बातें कहने से क्या फ़ायदा ? देखो, अगले सप्ताह देश से मेरे पास रुपया आवेगा। बीस पाउण्ड आवेगा। एकआध रुपया नहीं। तुमको विश्वास न हो तो मेरे घर की यह चिट्ठी देख लो।"

बँगला में लिखी एक चिट्ठी जेब से निकाल कर वारीन्द्र ने गर्व के साथ मिसेस ब्राउन के आगे फेंक दी। इसके बाद मुँह बना कर मुसकुराने लगा।

मिसेस ब्राउन पत्र लेकर उजेले के पास जा उलट-पलट

कर दो मिनट तक देखती रहीं, फिर कहने लगीं—यह कौन भाषा है महाशय ?

"कौन भाषा क्या ? बँगला है बँगला। पढ़ नहीं सकतीं ?"

"बँगला ! Dear me ! तो क्या मैं बँगला जानती हूँ महाशय ?"

"तुम बँगला नहीं जानतीं ?"

"नहीं मिस्टर चटर्जी।"

"I see मैं समझता था कि तुम बँगला जानती हो। अच्छा, उस अंश का तुम्हें अनुवाद सुनाता हूँ।"

कह कर वारीन्द्र उठा और लैण्ड-लेडी के पास गया। पत्र को हाथ में लेकर इधर-उधर देख कर कहा—

"यह देखो, यह लिखा है—'यहाँ अत्यन्त गरमी पड़ती है। बरफ़ रुपये सेर है।'—समझती हो न ?"

मिसेस ब्राउन ने संशय के साथ कहा—हाँ।

वारीन्द्र ने कहा—इसका अनुवाद है—I am sending you twenty pounds next week. समझ गई न, अब विश्वास हुआ कि नहीं। जाओ, तुम्हारे पास न हो तो अपने स्वामी से उधार ला दो। अगले हफ्ते एक बड़ी चेक मिलेगी।

मिसेस ब्राउन ने कुछ सोच कर कहा—तो इसी दम चाहिए ? कल सवेरे देने से काम न चलेगा ?

वारीन्द्र ने प्रबल भाव से सिर हिला कर कहा—The

idea ! देखो, आज रात को नौ बजे मिस मेनिंग के Soiree में मेरा निमन्त्रण है। मैं क्या शाम की पोशाक पहन कर, साधारण मनुष्यों की तरह, आमनिबस में चढ़ कर जाऊँगा ? मेरे लिए कैब चाहिए।

"कहाँ जाइएगा महाशय ?"

"मिस मेनिंग की Soiree में। Soiree किसे कहते हैं, जानती हो ?"

"कभी सुना तो नहीं ?"

"ईवनिंग पार्टी तो मालूम है ? वही है। फ़रासीसी में सोयरी कहते हैं।"

अचरज के साथ मिसेस ब्राउन ने कहा—Dear me !

"जाओ-जाओ। मैं तब तक शाम के कपड़े पहन कर आता हूँ।"

"अच्छा।"

"और मेरी बैठक के कमरे में कुछ बिस्कुट और ह्विस्की रख देना। वहाँ सुन्दरी महिलाओं के साथ बातें करके मैं बहुत थक जाऊँगा। बहुत भूख सतावेगी, समझ गईं ?"

अच्छा, रख दूँगी।"

मिसेस ब्राउन चली गईं। वारीन्द्र भी गुनगुनाकर गाता गाता गाता शाम की पोशाक पहनने के लिए अपने सोने के कमरे में गया।

दूसरा परिच्छेद

रात को नौ बजे के बाद वारीन्द्रनाथ की कैब आकर इम्पीरियल इंस्टीट्यूट के सामने खड़ी हुई।

इस नाम की एक बहुत बड़ी अट्टालिका है। इसमें बहुत से विभाग और हॉल हैं। "जहाँगीर-हॉल" में मिस मेनिंग की सान्ध्य-मिलन सभा हो रही है। मिस मेनिंग कभी कभी इसी प्रकार मिलन-सभा करती हैं। लन्दन गये हुए सभी भारतवासियों का उसमें निमन्त्रण होता है। कुछ आमोद-प्रमोद का भी बन्दोबस्त रहता है। इस सभा का उद्देश्य भारतीयों के साथ विलायत के विशिष्ट समाज का परिचय कराना है।

कैब से उतर कर वारीन्द्र ऊपर गया। ज़ीने से ही उसे उजेला दिखाई पड़ा। नर-नारियों के मृदु आलाप की गूँज भी उसके कानों तक पहुँची। भीतर जाकर देखा कि उस विशाल हॉल में ख़ासी भीड़ है। महिलाओं की वेश-भूषा नयन-लोभनीय है। देखा, एक जगह एक भारतीय महाराजा अँगरेज़ी पोशाक पहने कई पुरुषों और स्त्रियों के साथ सदालाप कर रहे हैं। दूसरी ओर भारत के एक पेंशन-प्राप्त लेफ्टीनेंट गवर्नर एक पारसी सज्जन और उनकी स्त्री से हँस हँस कर बातें कर रहे हैं। अधिकांश लोग खड़े खड़े बातें कर रहे हैं—इधर-उधर टहल भी रहे हैं। मख़मल से

मढ़े कई बड़े बड़े आसन भी इधर-उधर पड़े हैं। कोई कोई वहाँ जाकर बैठ भी जाते हैं।

वारीन्द्र भीतर जाकर पहले मिस मेनिंग को ढूँढ़ने लगा। कुछ क्षण के बाद एक जगह हॉल में उनको देख कर वारीन्द्र ने उनके पास जा अभिवादन किया। मिसेस मेनिंग एक बेशक़ीमती काला कपड़ा पहने हैं। उनका मुखमण्डल प्रशस्त, प्रफुल्ल और प्रसन्न है। उनके सफ़ेद बाल बिजली के प्रकाश में अपूर्व शोभा देते हैं।

वारीन्द्र से हाथ मिला कर उन्होंने कहा—"तुमको यहाँ देख कर मैं सुखी हुई।" इस प्रकार की और भी दो चार स्नेह की बातें करके, उन्होंने कई पुरुषों और महिलाओं से वारीन्द्र का परिचय करा दिया।

वारीन्द्र खड़ा खड़ा कई मिनट तक उनसे बातें करता रहा। इसी समय हॉल में एक ओर सारंगी का शब्द हुआ। एक अँगरेज़-महिला ने सर एविन आर्नल्ड की बनाई एक भारतवर्षीय कविता का अनुवाद स्वर-ताल से गाया।

घूमते घूमते वारीन्द्र ने देखा कि उसके एक मित्र भुवनचन्द्र दत्त एक बूढ़ी मेम से बात-चीत कर रहे हैं। वारीन्द्र को देखते ही उन्होंने उससे वारीन्द्र का परिचय करा दिया—"मिस्टर चटर्जी—मिस टेम्पेल।"

मिस टेम्पेल दीर्घासन पर बैठी थीं। उन्होंने वारीन्द्र से कहा—आइए, मेरे पास बैठिए।

वारीन्द्र ने बैठ कर कहा—आप कब आई हैं ?

"कोई आध घण्टा हुआ। आपका नाम क्या है ? अच्छी तरह सुन नहीं सकी।"

वारीन्द्र ने कहा—मेरा नाम चटरजी है।

"चटरजी ? चटरजी ? चट्टोपाध्याय ? तो आप ब्राह्मण हैं ?"

"जी हाँ। ओहो आप तो सब जानती हैं।" कह कर वारीन्द्र मुसकुराया।

मिस टेम्पेल ने उसके कौतुक-हास्य की ओर ध्यान नहीं दिया। उन्होंने माथे से अपने हाथ लगा कर कहा—नमस्कार।

हँसते हँसते वारीन्द्र ने भी कहा—नमस्कार—नमस्कार। आपने यह सब कहाँ सीखा ?

भुवनदत्त ने कहा—मिस टेम्पेल अभी हाल में ही भारत की सैर करके आई हैं।

वारीन्द्र ने कहा—Oh how interesting! भारतवर्ष में आप कितने दिन रहीं ?

"छः महीने।"

"आपका यह समय आनन्द से तो बीता ?"

बुढ़िया ने गम्भीर भाव से कहा—मैं आनन्द के लिए नहीं गई थी। मैं तो सीखने गई थी।

मिस टेम्पेल का यह भाव देख कर और ये बातें सुनकर वारीन्द्र को मन में कुछ कौतुक मालूम हुआ। किन्तु उसने

गम्भीरता के साथ कहा—यह सुन कर मैं सुखी हुआ। इस देश के अधिकांश आदमी आमोद के लिए भारत की सैर करने जाते हैं। भारत की हज़ारों वर्षों की ज्ञानगरिमा का उनको पता ही नहीं लगता।

मिस टेम्पेल ने कहा—आप सच कहते हैं। सौभाग्य की बात है कि वहाँ दो-चार महात्माओं से मेरी भेंट होगई थी। उनके मुँह से हिन्दू-धर्म की व्याख्या सुनकर मैं धन्य धन्य हो आई हूँ।

वारीन्द्र ने परम-धार्मिक बन कर कहा—हिन्दू-धर्म संसार के सब धर्मों का सिरताज है। हिन्दू-धर्म और संस्कृत-साहित्य हमारे चिरगौरव की वस्तुएँ हैं।

मिस टेम्पेल ने पूछा—क्या आपने संस्कृत का अध्ययन किया है?

"कुछ थोड़ा सा।"

"मैंने संस्कृत-श्लोक सुने हैं। वह ध्वनि जैसी मधुर है वैसी गम्भीर भी। आप दो एक संस्कृत-श्लोक सुनाइए न।"

"अच्छा, सुनिए—

कश्चित् कान्ता-विरह-गुरुणा स्वाधिकारप्रमत्तः
शापेनास्तंगमितमहिमा वर्षभोग्येन भर्तुः।
यक्षश्चक्रे जनकतनयास्नानपुण्योदकेषु
स्निग्धच्छायातरुषु वसतिं रामगिर्याश्रमेषु॥"

कह कर वारीन्द्र चुप हो रहा।

मिस टेम्पेल ने कहा—अहा कैसा सुन्दर है ! कैसा सुन्दर है ! मिस्टर चटर्जी, यह श्लोक क्या किसी धर्मग्रन्थ का है ?

वारीन्द्र ने अपने साथी भुवनमोहन की ओर देख मुसकुरा कर कहा—ठीक धर्म-ग्रन्थ का नहीं। यह दर्शन-शास्त्र-सम्बन्धी एक ग्रन्थ का पहला श्लोक है।

मिस टेम्पेल ने कहा—बहुत ठीक ! अब इस श्लोक का भावार्थ भी सुना दीजिए।

वारीन्द्र ने पूर्ववत् गंभीर भाव से कहा—इसका भावार्थ तो बहुत ही कठिन है। एक बात में समझा देना और भी कठिन है। फिर भी आत्मा का अविनश्वरत्व प्रतिपादित करनेवाली दो-एक युक्तियाँ इसमें हैं।

"ग्रन्थ का नाम क्या है, मिस्टर चटर्जी ?"

"मेघदूत।"

मिस टेम्पेल ने तुरन्त कहा—मेघ डिउटा ? By कालिडासा ?

यह सुनते ही वारीन्द्र का चेहरा सूख गया। उसने मन में अपनी ग़लती मान ली। सोचा, शायद मिस टेम्पेल संस्कृत जानती हैं—कभी मेघदूत भी पढ़ा होगा। उसकी सब चालाकी पकड़ी गई।

हालत देख कर, वारीन्द्र को अकेला छोड़, भुवनदत्त चटपट खसक गया।

इधर उत्तर न देने से काम न चलते देख वारीन्द्र ने कहा—जी हाँ, कालिदास का बनाया मेघदूत ही है।

मिस टेम्पेल ने कहा—अहा, यदि मैं संस्कृत जानती और इस ग्रन्थ को पढ़ सकती तो कैसा अच्छा होता।

यह सुनने से वारीन्द्र की जान में जान आई। वह समझ गया कि विपद की आशंका व्यर्थ है।

मिस टेम्पेल कहने लगीं—मैं समझती थी कि मेघदूत काव्य-ग्रन्थ है।

वारीन्द्र ने उत्साहित होकर कहा—उच्च अङ्ग का काव्य-मात्र ही दर्शन है, और सुन्दर दार्शनिक तत्त्वमात्र कविता है।

इसी समय हॉल में एक ओर टं टं करके पियानो बजने लगा। किसी भले आदमी ने एक गीत छेड़ दिया।

गाना ख़तम होने पर वारीन्द्र ने मिस टेम्पेल से कहा—आप बहुत थकी दिखाई देती हैं। आपको पीने के लिए कुछ ला दूँ ?

मिस टेम्पेल ने कहा—चलिए, मैं आपके साथ ही चलती हूँ।

वारीन्द्र उनके बाहु से अपना बाहु सम्बद्ध करके उस कमरे में ले गया जहाँ जल-पान की व्यवस्था थी।

वहाँ कुछ महिलायें चाय, काफ़ी आदि पी रही थीं। उनके साथ के पुरुष उनकी सेवा में व्यस्त थे।

वारीन्द्र ने मिस टेम्पेल को एक आसन पर बिठा कर पूछा—आपके लिए क्या ला दूँ ? चाय या काफ़ी ?

मिस टेम्पेल ने कहा—बहुत गरम है, कोई ठण्डी चीज़ लाइए।

"क्लारेट कप लाऊँ ?" *

"नहीं-नहीं। उसमें मादक द्रव्य मिला रहता है। मैं जब से भारतवर्ष से लौट कर आई हूँ, इन चीज़ों को छूती भी नहीं।"

मन में हँस कर प्रकट में वारीन्द्र ने कहा—तो फिर होम मेड लेमनेड † लाऊँ ?

"धन्यवाद।"

मिस टेम्पेल को शीतल करके वारीन्द्र उनको फिर हॉल में लौटा लाया। मिस टेम्पेल ने कहा—आज रात होगई है—मैं घर जाती हूँ। आपसे वार्तालाप करके मैं सुखी हुई। आप कभी कभी मुझसे भेंट किया कीजिएगा। यह लीजिए मेरा कार्ड।

वारीन्द्र ने धन्यवाद देकर उनको अपना एक कार्ड दिया और कहा—आप क्या अकेली ही आई हैं ?

"जी हाँ।"

"तो मैं नीचे चल कर आपको गाड़ी पर बिठा आ सकता हूँ ?"

"नहीं, धन्यवाद। आप कष्ट मत कीजिए।"

---

* Claret-cup क्लारेट मिले हुए एक शरबत का नाम है।

† बिना गैस के लेमनेड का नाम Home-made lemonade है।

"कष्ट काहे का ? यह तो मेरे लिए अत्यन्त आनन्द का कारण होगा।"

"बहुत धन्यवाद। अच्छा तो आइए।"

वारीन्द्र ने सोचा था कि भाड़े की कैब मँगा कर मिस टेम्पेल को चढ़ा दूँगा। नीचे उतर कर उसने देखा कि रास्ते में एक बढ़िया निजी गाड़ी मिस टेम्पेल की प्रतीक्षा कर रही है। इससे वारीन्द्र को बड़ा विस्मय हुआ। क्योंकि लन्दन में ऐसे वैसे लोग इस प्रकार की गाड़ी पर नहीं चलते।

गाड़ी पर चढ़ते समय मिस टेम्पेल ने पूछा—कल शाम को आपका कहीं और कोई काम है ?

"जी नहीं।"

"तो कल आकर क्या मेरे साथ चाय पीजिएगा ?"

"धन्यवाद। बड़ी खुशी के साथ।"

वारीन्द्र से गुडनाइट करके मिस टेम्पेल गाड़ी में बैठ गईं।

तीसरा परिच्छेद

दूसरे दिन नाश्ते के बाद लैण्ड-लेडी ने वारीन्द्र से पूछा—कल की रात वहाँ आनन्द से तो कटी महाशय ?

कुछ दिल्लगी करने की इच्छा से वारीन्द्र ने ठण्ढी साँस लेकर कहा—हाँ, मिसेस ब्राउन।

लैण्ड-लेडी ने पूछा—इस तरह ठण्ढी साँस क्यों ?

धूर्तता करके वारीन्द्र ने कहा—मिसेस ब्राउन, मेरी दशा बहुत ही संकटापन्न है।

"क्यों, ऐसा क्या हो गया ?"

"कल रात को मैं प्रेम के फन्दे में पड़ गया हूँ।"

लैण्ड-लेडी ने खिलखिला कर कहा—अच्छा जी अच्छा, यह तो सुख की बात है। तो लड़की क्या बहुत सुन्दरी है ?

"हाँ मिसेस ब्राउन, बहुत ही खूबसूरत है।

मिसेस ब्राउन ने मुसकुरा कर कहा—प्रथम प्रणय के समय ऐसा ही होता है।

वारीन्द्र कुरसी पर ज़रा तन कर बैठ गया। उसने कहा—मिसेस ब्राउन, क्या कभी कोई तुम्हारे प्रेम में फँसा था ?

मिसेस ब्राउन ने नाराज़ होकर कहा—क्यों, महाशय, मैं क्या किसी में प्रणय पैदा करने लायक नहीं ?

"नहीं-नहीं। मैं यह नहीं कहता। केवल पूछता हूँ। नाराज़ क्यों होती हो ?"

"यदि कोई मेरे प्रणय में नहीं पड़ा तो मेरा विवाह कैसे हुआ महाशय ?"

"अच्छा, यह बात है। तुम विवाहिता रमणी हो, यह तो मैं भूल ही गया था। तुम तो देखने में गृहिणी—गृहस्थी का भार सँभालनेवाली अधेड़—नहीं जान पड़तीं।"

मन ही मन ख़ुश होकर मिसेस ब्राउन ने कहा—आपने सच कहा है। कोई कोई मुझसे कहता है कि मैं अपनी असली उम्र की अपेक्षा कम उम्र जँचती हूँ। अच्छा बतलाइए तो मेरी उम्र क्या है ?

मिसेस ब्राउन पचास वर्ष को पार कर गई हैं, इस विषय में किसी दर्शक को भ्रम होने की संभावना नहीं। वारीन्द्र ने रंग जमाने के लिए कहा—यही तीस बत्तीस ?

मिसेस ब्राउन का चेहरा आनन्द से खिल गया। कहने लगीं—नहीं जी, कुछ अधिक हो गई है। आपकी प्रणयिनी का नाम क्या है महाशय ?

"मिस टेम्पेल।"

"आपके प्रति उसका कैसा भाव है ?"

"कुछ कह नहीं सकता। किन्तु आज उसने चाय पीने के लिए मुझे निमन्त्रण दिया है।"

"बहुत ख़ूब। I wish you happy after-noon." कह कर लैण्ड-लेडी बिदा हुई।

मुँह में पाइप दबा कर वारीन्द्र सोचने लगा—कल मेघ-दूत का श्लोक पढ़ने से कैसी मुश्किल में पड़ गया था, यह सोच कर हँसने लगा। जो हो, मिस टेम्पेल अद्भुत स्त्री है। आज दो घण्टे पहले जाकर ब्रिटिश-म्यूज़ियम से धर्म-शास्त्रों के कुछ श्लोक कंठ कर ले जाऊँगा। योग-शास्त्र की भी दो-चार बातें संग्रह करके मिस टेम्पेल को वशीभूत करूँगा।

शाम के चार बजे। ब्रिटिश-म्यूज़ियम से निकल कर वारीन्द्र कैबल पर सवार हो मिस टेम्पेल के घर पहुँचा। मिस टेम्पेल का घर पोर्टलेण्ड में है। यहाँ धनी लोग रहते हैं।

वारीन्द्र ने ड्राइंग रूम में आकर कई मिनट अपेक्षा की। इतने में मिस टेम्पेल ने आकर प्राच्य प्रथा से उसकी अभ्यर्थना की।

मिस टेम्पेल ने बैठ कर कहा—दीवार पर यह तसवीर आपने देखी ? ये मेरे गुरु हैं।

वारीन्द्र ने देखा कि आँखें मूँदे योगासनस्थ एक अर्धनग्न बंगाली-मूर्ति है। नीचे अँगरेज़ी और संस्कृत में लिखा है—स्वामी योगानन्द।

योग-शास्त्र-सम्बन्धी चर्चा चलाकर वारीन्द्र ने अपनी हाल की पैदा की हुई विद्या प्रकट करके मिस टेम्पेल को आश्चर्य में डाल दिया। अन्त में पूछा—आपने स्वामीजी से योग-शास्त्र के सम्बन्ध में भी कोई उपदेश लिया है ?

"जी नहीं, क्योंकि अभी मुझे अभ्यास करने का अधिकार नहीं। निरामिष भोजन करके शुद्धाचार से जब मेरे तीन वर्ष बीत जायँगे तब स्वामीजी मुझे सिखायेंगे। उन्होंने मुझसे नित्य गंगाजल पीने को कहा था। किन्तु गंगाजल यहाँ कहाँ ? यहाँ मैं अत्यन्त विशुद्ध और साफ़ जल पीती हूँ। उससे कोई आध्यात्मिक अपकार नहीं हो सकता।"

वारीन्द्र ने गंभीर भाव से कहा—गंगाजल का माहात्म्य असाधारण है। आपने Mark Twain की More Tramps Abroad नामक पुस्तक पढ़ी है?

"जी नहीं।"

"उस पुस्तक में Mark Twain ने भारतवर्ष के अपने भ्रमण का वर्णन किया है। वाराणसी में एक यूरोपियन सिविल सर्जन से उनकी भेट हुई थी। डाक्टर ने Mark Twain से गंगाजल के विषय में एक वैज्ञानिक परीक्षा की बात कही थी, वह अत्यन्त आश्चर्यजनक है।"

मिस टेम्पेल ने उत्सुकता से पूछा—कैसी परीक्षा?

"लिखा है, इन डाक्टर साहब ने एक वक्त एक पात्र में गंगाजल और दूसरे में कुए का जल लेकर दोनों की परीक्षा की। प्रत्येक पात्र में कालरा के कुछ कीटाणु छोड़ दिये। ४८ घण्टे में परीक्षा करके देखा कि गंगाजल में छोड़े हुए सब कीटाणु मर गये हैं। किन्तु कुए के जल के कीटाणुओं की बहुत वृद्धि हुई है।"

यह सुनकर मिस टेम्पेल अत्यन्त उत्तेजित हो उठीं। और भी दो चार संस्कृत-श्लोक और गपशप सुना कर वारीन्द्र ने मिस टेम्पेल को एकबारगी आत्मविस्मृत कर दिया।

छः बजे वारीन्द्र जाने के लिए उठा। मिस टेम्पेल ने कहा—कल शनिवार को सन्ध्या-समय आपको कोई काम है?

"जी नहीं।"

"तो कल मेरे साथ डिनर खाइए ?"

"धन्यवाद। मैं ज़रूर आऊँगा।"

"किन्तु मैं निरामिषभोजी हूँ। क्या आप मांस खाते हैं ?"

"जी हाँ, खाता तो हूँ।"

"तब तो आपको कष्ट होगा।"

"नहीं मिस टेम्पेल, मुझे कोई कष्ट न होगा। मेरा हिन्दूसंस्कार निरामिष भोजन का ही पक्षपाती है। किन्तु इस देश में आकर स्वास्थ्य के ख़याल से गोश्त खाने लगा हूँ।"

मिस टेम्पेल ने उत्तेजित भाव से कहा—यह बिलकुल ग़लत ख़याल है। मांस खाने से इस देश में स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, यह एक कुसंस्कार-मात्र है। देखिए, मैं जब से भारतवर्ष से लौटी हूँ तब से, आज छः महीने हुए, निरामिष भोजन करती हूँ। इससे क्या मेरा स्वास्थ्य नष्ट होगया है ?

वारीन्द्र ने विस्मय दिखाते हुए कहा—ओहो ! तब तो मैं भी अब निरामिष भोजन ही किया करूँगा। वही मेरे लिए तृप्ति-जनक है।

मिस टेम्पेल ने ख़ुश होकर कहा—अच्छा, शनिवार को ७ बजे आइएगा।

वारीन्द्र चलता हुआ।

चौथा परिच्छेद

शनिवार आया। वारीन्द्र शाम की पोशाक पहन कर तैयार हुआ। उसकी लैण्ड-लेडी ने आकर पूछा—मिस्टर चटर्जी, क्या आज आप डिनर कहीं बाहर खायँगे? मुझे तो पहले सूचना नहीं दी।

वारीन्द्र ने कहा—मिसेस ब्राउन, मैं बिलकुल भूल ही गया। मेरा मन अत्यन्त चंचल था।

लैण्ड-लेडी ने कहा—प्रेम में पड़ने से मनुष्य की यही दशा होती है। शायद आपकी प्रणयिनी के घर निमन्त्रण है?

"हाँ, मिसेस ब्राउन! नहीं तो इतनी सावधानी से पोशाक क्यों पहनता? बोलो, मैं इस समय कैसा मालूम होता हूँ?

मिसेस ब्राउन ने कहा Stunning! यदि आप आज 'प्रपोज' करें तो वे इनकार न कर सकेंगी।

"मिसेस ब्राउन, क्या मुझे सिखला दोगी कि 'प्रपोज' किस तरह किया जाता है? अच्छा, तुमने जब मिस्टर ब्राउन को 'प्रपोज' किया था तब क्या कहा था?"

इस बात से बिगड़ कर मिसेस ब्राउन ने कहा—महाशय, महाशय, 'प्रपोज' क्या मैंने किया था?

वारीन्द्र ने मुसकुरा कर कहा—तब किसने किया था?

"स्त्रियाँ स्वयं कभी प्रपोज करती हैं ? मिस्टर ब्राउन ने मुझको प्रपोज किया था।"

वारीन्द्र ने कहा—I see मैं समझता था कि शायद तुम्हीं ने किया था। अच्छा, उन्होंने क्या कहा था ?

"सुनिएगा ? अच्छा तो कहती हूँ।" कह कर मिसेस ब्राउन खिड़की के पास एक सोफे पर बैठ गईं।

"एक दिन हम दोनों हाइडपार्क घूमने गये थे। एक पेड़ के तले दो कुर्सियाँ पड़ी थीं। हम दोनों वहाँ बैठे बातें कर रहे थे।"

वारीन्द्र बीच में ही बोल उठा—हाइडपार्क—अकेली—एक नौ जवान मित्र के साथ तुम घूमने गईं थीं! बिना Chaperon के ? तुम्हारे माता-पिता को मालूम था ?

लैण्ड-लेडी ने हँस कर कहा—नहीं, मेरे माता-पिता को मालूम न था। उनका मिजाज़ कड़ा था। engaged होने के बाद भी बिना शेपेरन के हमें बाहर नहीं जाने देते थे।

"तो क्या तुम छिप कर गईं थीं ?"

मिसेस ब्राउन ने मुसकरा कर कहा—हाँ महाशय।

अपने दोनों हाथ ऊपर उठाकर वारीन्द्र ने कहा" Holy Moses ! oh, naughty Mrs. Brown, I am shocked.

वारीन्द्र का भाव देख कर प्रौढ़ा लैण्ड-लेडी कुछ देर तक हँसती रही। फिर कहने लगी—यदि आप इतना शाक्ड हो गये हैं, तो मैं अब आगे की बातें न बताऊँगी।

"नहीं, नहीं। मैं सीखता जाता हूँ।"

मिसेस ब्राउन कहने लगीं—"बातें करते करते क्रम से शाम होगई। मैं घर जाने के लिए उठी। मिस्टर ब्राउन ने कहा, 'बैठो-बैठो, एक बात कहनी है'। बैठने पर मुझसे कहा—"मेरी, तुम मेरे साथ विवाह करोगी?" मैं पहले तो किसी तरह राज़ी न होती थी। अन्त में वे घास पर बैठ गये और कहने लगे—मेरी, तुम यदि मुझसे विवाह न करोगी तो मैं फ़ौज में भर्ती होकर विदेश चला जाऊँगा और लड़ाई में मर जाऊँगा।

वारीन्द्र ने कहा—कैसा सर्वनाश था। तब तुमने क्या कहा?

"क्या करती महाशय, लाचार होकर राज़ी होगई।"

वारीन्द्र ने कहा—अच्छा, क्या मेरी प्रणयिनी भी तुम्हारी तरह कोमलहृदया होगी? मैं उससे कहूँगा कि यदि तुम मेरे साथ विवाह नहीं करती हो तो मैं बैरिस्टर होकर कलकत्ता-बार-लाइब्रेरी में धक्का देकर जान दे दूँगा।

× × × ×

पोर्टलेण्ड में डिनर के बाद वारीन्द्र के लिए एक अभावनीय घटना होगई।

मिस टेम्पेल के सुसज्जित कमरे में वारीन्द्र बैठा है। आज इस बुढ़िया का मुख-मण्डल कुछ चिन्तायुक्त है।

दासी आकर काफी दे गई। काफी पीते पीते मिस टेम्पेल

ने कहा—इधर कई दिन से मेरे मन में एक चिन्ता ने घर कर लिया है। मैं यदि आपसे कई एक व्यक्तिगत प्रश्न पूछूँ तो आप क्षमा करेंगे?

वारीन्द्र ने कुछ सावधानी से कहा—आपके प्रश्न यदि आपत्ति-जनक न होंगे तो मैं अवश्य ही प्रसन्नतापूर्वक उत्तर दूँगा।

मिस टेम्पेल ने ज़रा देर चुप रह कर कहा—यह तो आप पहले ही बता चुके हैं कि आपके माता-पिता जीवित नहीं। तो क्या आपका विवाह हो चुका है?

"जी नहीं।"

"यहाँ आपके लिए खर्च कौन भेजता है?"

"मेरे चाचा साहब।"

"क़ानूनी पेशे से क्या आपका विशेष अनुराग है?"

"जी नहीं।"

"इधर कई दिन आपसे बातचीत करके मैंने समझा है कि हिन्दू-धर्म पर आपका प्रबल अनुराग है।"

वारीन्द्र मन ही मन हँसा।

मिस टेम्पेल कहती जाने लगीं—देखिए हिन्दू-धर्म पर मेरी यथेष्ट भक्ति है। मैं इस धर्म का प्रचार योरप में करना चाहती हूँ। मेरे पास धन की कमी नहीं। इसी के सम्बन्ध में आज मैं आपसे एक प्रस्ताव करूँगी। मैं इस सम्बन्ध में आपकी सहायता चाहती हूँ। मैं एक हिन्दू युवक को गोद लेना चाहती हूँ। तो आप मेरे पोष्य पुत्र होंगे?

वारीन्द्र चुप रहा।

मिस टेम्पेल ने कहा—मैं आपका उत्तर अभी सुनना नहीं चाहती। आप अच्छी तरह विचार करके मुझे उत्तर दें। यदि स्वीकार हो तो आपको और काम-काज छोड़कर पहले हिन्दू-शास्त्र का और फिर योरप की भाषाओं का अच्छी तरह अध्ययन करना होगा। दो साल के बाद आपको लेकर मैं हिन्दू-धर्म का प्रचार करने के लिए बाहर निकलूँगी।

वारीन्द्र ने कहा—मैं सोच-समझ कर आपसे निवेदन करूँगा।

मिस टेम्पेल ने कहा—मेरा और कोई वारिस नहीं। मेरी धन-दौलत के उत्तराधिकारी आप ही होंगे। मैं जब तक जीऊँगी, आपका सब खर्च चलाऊँगी। प्रति सप्ताह जेब-खर्च के लिए दस गिन्नियाँ आपको दूँगी। आपको कठोर अध्ययन करना होगा और शुद्धाचारी हिन्दू की तरह रहना होगा।

वारीन्द्र का मस्तक चक्कर खाने लगा। एक हफ्ते की मुहलत माँग कर वह उस रात को बिदा हुआ।

पाँचवाँ परिच्छेद

तीन महीने हो गये। वारीन्द्र मिस टेम्पेल का पोष्य पुत्र होकर उनके घर रहता है। अब उसका नाम—वारीन्द्रनाथ चटर्जी-टेम्पेल है।

एक हिसाब से वारीन्द्र बड़े मज़े में है। पहले वह रुपये-पैसे के लिए तंगदस्त रहता था। अब वह बात नहीं। बण्ड स्ट्रीट के सिवा अब वह कहीं सूट नहीं सिलवाता।

आमनिबस पर चढ़ना उसने क़तई छोड़ दिया है। उत्कृष्ट हवाना के सिवा और चुरुट वह छूता ही नहीं। यार दोस्तों को साथ लेकर जब थियेटर देखने जाता है तब प्रायः तीन-चार गिन्नी किराये के बाक्स ही लेता है।

किन्तु उसे एक दिक़्त है—भोजन और अध्ययन के मारे वह परेशान है। उसने जब धूर्तता करके कहा था कि उसका हिन्दू-संस्कार निरामिष भोजन का ही पक्षपाती है, तब यह सोचा न था कि उसकी हिन्दू जीभ को एक दिन इस तरह दण्ड मिलेगा। निरामिष खाद्यों को जिह्वा के लिए तृप्तिदायक बनाना बड़ी निपुणता का काम है। वह चतुराई अँगरेज़-रसोईदारिन में नहीं। मिस टेम्पेल के टेबल पर दूध-मिले 'ह्वाइट सास' से आवृत जो निरामिष खाद्य रक्खे जाते हैं—वे प्रायः अखाद्य होते हैं। वारीन्द्र को दूसरी दिक़्त यह है कि उसको ग़पशप उड़ाने के लिए बिलकुल ही वक़्त नहीं मिलता। हफ़्ते मे उसे दो दिन फ़रासीसी और दो दिन जर्मन-भाषा पढ़नी पड़ती है; इसके लिए शिक्षक नियुक्त हैं। इसके सिवा मिस टेम्पेल स्वयं भी देख-रेख रखती हैं। सप्ताह में दो दिन ब्रिटिश-म्यूज़ियम में जाकर हिन्दू-शास्त्र की चर्चा करने के लिए नियत हैं। बस, यही दिन आराम से कटते हैं। वह ब्रिटिश-म्यूज़ियम

में जाकर बढ़िया उपन्यास पढ़ता है। अथवा वहाँ न जाकर कहीं घूमने चला जाता है।

तीन महीने तक मिस टेम्पेल के साथ रहने से रुपये-पैसे की कमी न होने पर भी, वारीन्द्र कुछ सुस्त-सा हो गया है। इस बुढ़िया का नया नया साथ उसे कौतुक-जनक मालूम होता था। लेकिन कौतुक ऐसी चीज़ है कि तनिक पुराना होते ही बेमज़े हो जाता है। डिनर के बाद जो थोड़ा सा समय उसे मिस टेम्पेल के साथ बिताना पड़ता था, वह कष्ट से बीतने लगा। इसी कारण वह प्रायः थियेटर चला जाता था। मिस टेम्पेल इससे मन में खिन्न होती थीं किन्तु खुलकर मना न करती थीं। तथापि जातिच्युत होने से बचाने के लिए वे उसे कहीं बाहर डिनर न खाने देती थीं। वारीन्द्र को घर में ही डिनर खाकर बाहर जाना पड़ता था।

आज लन्दन में बड़ी धूम है। ऐतिहासिक पुराना "गेटी थियेटर" टूट कर नया बना है। आज रात को निउगेटी थियेटर खुलेगा। "अर्किड" नामक एक नया अभिनय पहले-पहल होगा। वारीन्द्र ने बहुत पहले से एक बाक्स ले रक्खा था। अभिनय आरंभ होने पर देखा गया कि वारीन्द्र के बाक्स पर उसके तीन मित्र भी मौजूद हैं। एक तो वही पूर्व-परिचित भुवनदत्त हैं। अन्य दोनों पुरुष नहीं। उनकी पोशाक भड़कीली है सही किन्तु उनमें refinement नहीं। उनकी भाषा में माधुर्य्य तो है, किन्तु शालीनता नहीं। स्त्री-जाति

होने पर भी उन पर "महिला" का भ्रम होने की बहुत कम संभावना थी।

तीन घण्टे तक अभिनय हुआ। खेल खतम होने पर ये सब बाहर निकले और रास्ते के फुट-पाथ पर खड़े हुए। बारीन्द्र ने कहा—"Let's go and have some supper at the Troc."

'Troc' से मतलब 'Trocodero' लन्दन की उच्च श्रेणी की भोजनशाला है। 'ट्राकोडेरो' में भोजन करना शौकीनों का विशेष लक्षण है। थियेटर से लौटते वक्त धनी लोग उक्त भोजनालय में कुछ खाकर घर या क्लब को जाते हैं। इस लोभनीय प्रस्ताव को सुन कर एक युवती ने कहा—You are a dear.

दूसरी ने कहा—"I like their champagnes awf'ly.।" गाड़ी पर चढ़ कर ये सभी ट्राकोडेरो पहुँचे। बारीन्द्र ने यहाँ पहले से ही एक टेबल रिज़र्व कर रक्खा था। यहाँ जाकर चारों बैठ गये।

मूल्यवान चाँदी की तश्तरियों में भरी तरह तरह की खाद्य सामग्री आई। बरफ़ से आकंठ-निमज्जित बालटियों में शैम्पेन की बोतलें आईं। शाम के कपड़े पहने हुए वेटर, निःशब्द घूमते हुए, खानेवालों की सेवा में तत्पर हैं। महिलाओं की वेश-भूषा की शोभा से भोजन-शाला झिलमिल कर रही है। ऊपर कहीं बाजा बज रहा था। नर-नारियों

की रमणीय बातों की गूँज तथा बार बार हँसी और शैम्पेन के काग खोले जाने के शब्द ने बाजे के सुर के साथ मिल कर स्थान को उत्सवमय बना रक्खा था।

इधर तो इनका खाना-पीना और हास्य-परिहास होने लगा और उधर हॉल के दूसरी ओर, इन लोगों के ओझल में, दो बूढ़ी महिलाएँ आईं। उनमें एक मिस टेम्पेल थीं।

उन्होंने बैठ कर दो प्याले काफी मँगवाई। वे काफी पीते पीते बातें करने लगीं। मिस टेम्पेल ने अपनी संगिनी से कहा—आज के इस कनसर्ट में आपके अनाथाश्रम के लिए कितने रुपये आये?

दूसरी महिला ने कहा—बहुत अधिक जगह भर गई थी। बहुत कम आसन खाली थे। मालूम होता है, दो सौ गिन्नी से ऊपर आया होगा।

"सभी बाजन्त्रियों ने अच्छा बजाया था, खास कर जिन्होंने शोपेयाँ (chopin) से कुछ बजाया था, उन्होंने तो कमाल कर दिया था। मुझे बहुत पसन्द आया।

"आप तो आती ही न थीं—आपको मैं ही घसीट लाई हूँ।"

काफी पीते पीते मिस टेम्पेल ने कहा—आपके इस कनसर्ट के लिए मैंने टिकट खरीद रक्खा था, किन्तु मैं भूल

गई थी। आज यह होगा, यह मुझे बिल्कुल याद न था। आप न आतीं तो मेरा आना न होता।

काफी पीकर ये उठ खड़ी हुईं। इसी समय हॉल के दूसरी ओर मिस टेम्पेल की नज़र घूमी। लहमे भर एक-टक देख कर अन्त में उन्होंने जेब से चश्मा निकाल कर लगाया।

जो कुछ देखा, उससे उनका वार्द्धक्य रेखाङ्कित मुख-मण्डल आकाश की तरह गंभीर हो उठा।

संगिनी से कहा—मुझे एक मिनट के लिए क्षमा कीजिएगा, मैं अभी आती हूँ।

अब वे धीरे धीरे हॉल के दूसरी ओर जाकर वारीन्द्र के बहुत ही नज़दीक जा खड़ी हुईं। किन्तु ज़रा सी देर के लिए उनको देखते ही वारीन्द्र डर कर खड़ा होगया। उसने कहा—"Good evening." उसके आगे प्लेट में निषिद्ध खाद्य-सामग्री और बग़ल में फेनदार पिघले सोने की तरह मदिरा थी।

"Good evening, Don't let me interrupt you." कह कर मिस टेम्पेल लौट गईं।

× × ×

उस रात को वारीन्द्र जिस समय घर पहुँचा उसके पहले ही मिस टेम्पेल सोने चली गई थीं।

सारी रात वारीन्द्र को नींद नहीं आई।

दूसरे दिन सुबह प्रातःकाल के कलेऊ के समय सुना

के मिस टेम्पेल अब तक बिस्तरे पर हैं—उनकी तबीअत ठीक नहीं ।

दो बजे, लंच खाने के लिए, भोजन के कमरे में पहुँच कर सुना कि मिस टेम्पेल अभी तक नहीं उठीं ।

उसने चुपचाप अकेले लंच खाया । वहाँ से जब वह उठने लगा तब दासी ने एक पत्र लाकर वारीन्द्र के हाथ में दिया । मिस टेम्पेल के हस्ताक्षर थे ।

उस में लिखा था—

कल रात को जो कुछ देखा है, उससे मेरे दिल में सख़्त चोट लगी है । मेरे साथ तुम्हारा जो सम्बन्ध था, वह आज से टूट गया । मैं अब तुम्हारा मुँह देखना नहीं चाहती । आज तुम इस घर को छोड़ देना । तीन महीने तक यहाँ रहने से जो तुम्हारा वक़्त बरबाद हुआ है उसके हर्जाने के लिए इस पत्र के साथ सौ पाउण्ड का एक चेक है ।

"एडना टेम्पेल"

अपना सब सामान बाँध कर वारीन्द्र ने कैब मँगवाई । संध्या के पहले वह बेजवाटर में लौट गया । "जो पहले था वही फिर हो गया ।"

प्रवासिनी

पहला परिच्छेद

जून का महीना है। प्रातःकाल के सूर्य की सुनहरी किरणों से लन्दन नगर प्रकाशित है। प्रत्येक रास्ते में फूल बेंचनेवाली लड़कियाँ ढेर के ढेर फूल बेंच रही हैं। एक चौपहिया गाड़ी में सवार होकर माल-असबाब के साथ दो बंगाली युवक टेमूस नदी के किनारे जेटी पर पहुँचे। आज दोपहर को १२ बजे इस घाट से एडिनबरा की ओर जहाज़ छूटेगा। दोनों युवक गरमी की छुट्टियों में वहाँ घूमने जा रहे हैं।

एक का नाम हेमचन्द्र दत्त है। वह कलकत्ता-विश्वविद्यालय का प्रतिभाशाली छात्र था। विलायत आकर इसने केम्ब्रिज-विश्वविद्यालय से सम्मान के साथ उपाधि प्राप्त की है। गत वर्ष सिविलसर्विस परीक्षा में भी यह कृतकार्य हुआ है। अगले नवम्बर महीने में देश लौट जायगा। दूसरे युवक का नाम अतुलचन्द्र मित्र है। वह धनी का लड़का है। कोई छः

वर्ष से विलायत में है। अब तक 'पास वास' कुछ कर नहीं सका। देश से आते वक्त इसके अभिभावकों ने कह दिया था कि विलायत पहुँचकर सिविलसर्विस के लिए भी प्रयत्न करना और बार में भी नाम लिखाना। सिविलसर्विस परीक्षा पास कर लो तो क्या कहना है; नहीं हो तो बारिस्टर हो कर लौटना। अतुलचन्द्र विलायत आकर सिविलसर्विस के लिए तो "चेष्टा" करने लगा; किन्तु "आज-कल" करते करते बार में भर्ती न हो सका। बार में भर्ती होने की प्रावेशिक फ़ी डेढ़ हज़ार रुपया जो लाया था, वह भी इस बीच में उड़ गया। तीन साल बीत गये। अतुलचन्द्र लगातार दो साल सिविलसर्विस की परीक्षा में फ़ेल हुआ है। उसके माता-पिता ने लिखा कि अब बारिस्टरी की सनद लेकर शीघ्र लौट आओ। तब अतुलचन्द्र को घर लिख भेजना पड़ा कि बारिस्टरी के लिए तो मैं अभी तक भर्ती ही नहीं हो सका। रुपया चाहिए।—बारिस्टरी पढ़ते भी तीन साल हो गये। किन्तु परीक्षा देने का कुछ भी प्रबन्ध नहीं कर सका। वह कहता है कि लन्दन बड़ी बुरी जगह है। यहाँ चित्त नहीं जमता। इसलिए कुछ नई किताबें लेकर दो महीने के लिए एडिनबरा जाता है। वहाँ एकान्त में अच्छी तरह पाठ पढ़ेगा। बस, यही संकल्प उसके मन में इस समय जागरूक है।

गाड़ी जेटी के पास पहुँची। दोनों ने उतर कर कुली

की सहायता से जहाज़ पर माल-असबाब चढ़ा दिया। अपने अपने लिए निर्दिष्ट कैबिन में असबाब सजा कर दोनों ऊपर डेक पर गये। अभी सिर्फ़ दस बजे हैं। यात्री बहुत कम आये हैं। बहुतों ने माल-असबाब भेज दिया है, स्वयं यथासमय आजायँगे।

दोनों युवक होठों के बीच सिगरेट दबा कर डेक पर इधर-उधर घूमने लगे। अकस्मात् एक जगह, कितने ही सन्दूकों के बीच की एक चीज़ ने हेम की दृष्टि आकर्षित की। अतुल उस समय कुछ दूर पर जहाज़ की रेलिंग पकड़ यात्रियों का आना देख रहा था। हेम ने कहा—ओ अतुल, देखो तो।

अतुल उत्सुक होकर पास आया। हेम ने दिखलाया कि एक ट्रंक पर से जो लेबिल बँधा है उसमें लिखा है—Miss Roy.

अतुल ने कहा—कौन मिस राय विलायत आई हैं। मुझे तो कुछ मालूम नहीं।

हेम ने कहा—मैंने भी नहीं सुना।

तब दोनों ही कलकत्ते के राय-परिवारों का एक एक नाम लेकर अटकल लड़ाने लगे किन्तु कुछ भी निश्चय न हो सका।

अतुल ने कहा—चलो एक बार जहाज़ को घूम कर देखें, कैसी है मिस राय।

हेम ने कहा —इतनी भीड़ में पहचान लोगे ?

अतुल ने कहा—सैकड़ों कुमुद-कल्हारों के बीच यदि एक पद्म खिला हो तो उसे ढूँढ़ निकालना क्या कठिन है ?

हेम ने हँस कर कहा—कैसा अविचार है ! अँगरेज़ों की ऐसी ऐसी सुन्दर लड़कियाँ हुईं कुमुद-कल्हार और तुम्हारी बंगाली की लड़की हुई पद्म ? क्यों !

"बेशक 'वंग-कुसुम' के बिना कहाँ पर ऐसा मधु है ? रवीन्द्र बाबू के ब्रजांगना काव्य में या और कहीं पढ़ा है ।"

हेम ने अतुल की पीठ ठोंक कर कहा—धन्य है तुम्हे और तुम्हारे बँगला-साहित्य-ज्ञान को ! धन्य है तुम्हारी स्वजाति-प्रीति !

अतुल ने कहा—"चलो खोज कर देखें ।" दोनों ने अनेक स्थानों में ढूँढ़ा, किन्तु कहीं भी सुस्निग्ध, सलज्ज, सलोना मुखड़ा दिखाई न पड़ा । दोनों हताश हो फिर डेक पर लौट आये ।

अकस्मात् अतुल ने कहा—देखो, एक बड़ी भूल हो गई है ।

"क्या ?"

"एक बोतल ब्राण्डी नहीं लाये । निर्जला ब्राण्डी की दो-चार खुराकों से समुद्र-पीड़ा आसानी से रुक जाती है । शायद जहाज़ में मिल जाय । ज़रा देख आऊँ ।" कह कर अतुल चलता हुआ ।

कुछ समय बीत गया। अतुल को वापस आते न देख कर उसकी खोज के लिए हेम नीचे उतरा। हेम ने कैबिन में जाकर देखा कि दरवाज़ा बन्द है। दरवाज़े पर उसने हाथ से दो चार बार हलके धक्के दिये। भीतर से अतुल ने कहा—Come in.

हेम ने दरवाज़ा खोल कर देखा कि अतुल बैठा है, पास ही ब्राण्डी की खुली हुई बोतल रक्खी है। हाथ में गिलास लिये अतुल प्रतिषेधक का सेवन कर रहा है।

अतुल ने कहा—Just in good time—आओ, दो घूँट पी लो।

हेम ने लौट जाने को तैयार होकर कहा—नहीं जी, तुम्हीं पिओ। मैं न पीऊँगा।

"क्यों?"

"मैं क्या कभी पीता हूँ जो पी लूँ?"

"हानि क्या? Don't be so girlish Hem. यही तुम्हारा दोष है। दो घूँट पी लेने से तुम्हारी जाति न जायगी। 'औषधार्थे सुरां पिबेत्' यह आज्ञा शास्त्र में भी है।"

हेम ने हँस कर कहा—किस शास्त्र में पढ़ा है? कालिदास के वैराग्यशतक में या जयदेव के रामायण में?

"यदि रामायण पढ़ते तो तुमको मालूम होता,—सीता, राम—वे भी—'मद' न कहूँगा—आसव पान करते थे।"

"तो तुम भी आसव पान करो, मैं जाता हूँ।"

"जाओगे कहाँ ? बैठो न। बैठने से क्या तुम्हारा जातित्व नष्ट हो जायगा। लो, एक सिगरेट ही लो।"

हेम बैठ गया। सिगरेट का बक्स उसके आगे रख कर अतुल एक बँगला गीत गाने लगा। "by Jove मैं तो भूल ही गया था। मिस राय का कुछ पता चला ?

"नहीं।"

अतुल ने कोई एक औंस प्रतिषेधक पीकर कहा—देखो हेम, मुझे मालूम होता है कि इस मिस राय से भेंट होने पर मैं उसके प्रेम में फँस जाऊँगा।

हेम ने कृत्रिम रोष प्रकट करके कहा—खबरदार, पहले से ही निश्चय कर लिया है कि मैं उसके प्रेम में फँसूगा।

अतुल ने कहा—यह तो हो ही नहीं सकता—मैं फँसूँगा।

"वाह ! मैंने ही पहले उसके लगेज का आविष्कार किया है।"

"इसी से क्या तुम्हारा अधिकार हो गया ? यदि यही बात है, तो उस कुली का दावा सबसे ज़बर्दस्त है, जो उस ट्रंक को लाया होगा।"

"वह तो उम्मेदवार नहीं। जो उम्मेदवार हैं, उन्हीं में से निर्णय करो कि किसका अधिकार है। मैंने लगेज का आविष्कार किया है। तुमने क्या किया है ?"

अतुल ने कहा—मिस राय अवश्य ही मुझे पसन्द करेंगी।

हेम ने कहा—अवश्य ही पसन्द न करेंगी, वे तो मुझे पसन्द करेंगी।

अतुल ने मूँछों की नोकों पर हाथ फेर कर कहा—देखो मेरी कैसी बढ़िया मूँछें हैं।

हेम ने 'केस' में से सोने का चश्मा निकाला और लगा कर कहा—देखो, मेरा कैसा बढ़िया चश्मा है।

"All right—let's have a toss up" कह कर अतुल ने जेब से एक पेनी निकाली। "Heads I win, tails you lose." कह कर पेनी को तर्जनी पर रक्खा, और फिर अँगूठे की सहायता से उछाल दिया। पेनी फ़र्श पर आ पड़ी। अतुल ने झुकके देख कर कहा—" Tails you lose—चलो, मेरी ही जीत हुई *"

हेम ने कृत्रिम उसाँस लेकर कहा—अच्छा तो तुम्हीं उससे ब्याह करो।

* पेनी में जिस ओर इँगलैण्ड राजलक्ष्मी ब्रिटानिया की मूर्ति अङ्कित रहती है उसे heads (सेर) और जिस ओर पूँछसहित सिंह और यूनीकर्ण की मूर्ति होती है उस पृष्ठ भाग को tails (बकरी) कहते हैं। किसी बात का निर्णय करने की आवश्यकता होने पर एक heads (सेर) और दूसरा tails (बकरी) लेकर उल्लिखित रीति से पेनी उछालता है। नीचे गिरने पर जिसका अंश सामने रहता है उसी की जीत होती है। यहाँ अतुल ने चालाकी करके दोनों ही चिह्नों को अपने क़ब्ज़े में कर लिया था अतएव बाज़ी भी वही ले गया। यह एक पुरानी दिल्लगी है। हिन्दी में भी इस ढँग की एक कहावत है—आप हमारे यहाँ आवेंगे तो क्या लायेंगे और हम आपके यहाँ जायँगे तो क्या दीजिएगा ?

इसी समय जहाज़ खुलने का घंटा बजा। दोनों बाहर निकल कर डेक पर गये। वहाँ बहुत से नर-नारी एकत्र थे। किन्तु श्यामाङ्गिनी का दर्शन कहीं न मिला। जहाज़ खुल गया।

दूसरा परिच्छेद

एक बज गया। लन्दन की नगर-सीमा पीछे रह गई। अब तो जहाज़ के दोनों ओर जौ और सरसों के खेत हैं। वह सीधा समुद्र की ओर जा रहा है। क्रम से नदी का प्रसार बढ़ता जा रहा है। कोई घण्टे भर में ही जहाज़ सागर के संगम में पहुँच जायगा।

यात्रीगण एक दूसरे से पूछ रहे हैं—"Are you a good sailor." अर्थात् आप पर समुद्रपीड़ा का असर आसानी से तो नहीं हो जाता? इसी समय टनटन् करके दोपहर के भोजन का घंटा बजा।

अतुल और हेम दोनों भोजनशाला में पहुँचे। ज़रा एकान्त खोज कर दोनों जा बैठे। इसी समय वहाँ दो महिलाएँ आईं। एक की उम्र पचास वर्ष के लगभग होगी और दूसरी की बीस वर्ष के क़रीब। अधिक अवस्थावाली तो निस्सन्देह अँगरेज़-महिला है—किन्तु युवती के सम्बन्ध में सन्देह है।



उसकी देह का रङ्ग अँगरेज़ों का सा बिलकुल सफ़ेद नहीं—इटली या स्पेन-देशवासियों का सा है। बाल काले हैं।

ये अतुल और हेम के पास से ही निकलीं। जाते समय अतुल ने देखा कि उस अधेड़ स्त्री के हाथ में सोने का कंकण है, जिसमें बंगाल की कारीगरी स्पष्ट झलकती है। अतुल और हेम दोनों की आँखों ने एक दूसरे को तार दिये।

जब वे चली गईं तो हेम ने कहा—यही लड़की तो मिस राय नहीं ?

"मुझे यही सन्देह होता है। किन्तु बंगाली-स्त्रियों का रंग क्या ऐसा साफ़ होता है ? शरीर का रंग तो योरपवासियों जैसा है। केवल आँखें सफ़ेद नहीं—ख़ासी स्निग्ध गौर-कान्ति है।"

"क्या मालूम, किन्तु सन्देह की एक और भी बात है। बंगाली-लड़कियाँ विलायत में कभी गाउन पहन कर नहीं आतीं—साड़ी पहन कर आया करती हैं।"

"मालूम होता है, इस देश में बहुत दिनों से हैं।"

"योरपीय महिला मिस राय की गवर्नेस (शिक्षयित्री) मालूम होती है।"

"उसके हाथ के कड़े पर ध्यान दिया था ?"

"हाँ, देखा तो था। अजब नहीं कि मिस राय ने उपहार दिया हो।"

अतुल और हेम ने इस प्रकार बातचीत करते करते

भोजन किया। दूसरी ओर बैठी हुई अनुमित मिस राय की ओर भी वे बीच बीच में देखते गये।

भोजन करके डेक पर जाकर दोनों ने अच्छे चुरुट लिये। दूर पर समुद्र दिखाई देता है उसकी लहराती हुई सुनील देह पर सफ़ेद फेन नृत्य कर रहा है। डेक-चेयर पर बैठकर दोनों एक-टक यही देखने लगे।

इसी बीच में पूर्वोक्त महिलाएँ भी डेक पर आपहुँचीं। अतुल और हेम जहाँ बैठे थे वहीं खड़ी होकर वे, दूर पर दिखाई देते हुए, समुद्र की ओर ताकने लगीं। अतुल और हेम ने फ़ौरन चेयर छोड़ कर कहा—'Won't you take these chairs ladies'?

प्रौढ़ा ने कहा—"नहीं-नहीं, बैठिए-बैठिए। आप लोगों को तकलीफ़ क्यों दूँ?

अतुल ने कहा—चेयरों की कमी थोड़े है। आप यहीं बैठिए। हम दूसरी चेयर लाकर बैठते हैं।

"अनेक धन्यवाद"—कहकर दोनों महिलाएँ बैठ गईं। जहाज़ पर एक जगह बहुत सी कुर्सियाँ पड़ी थीं। अतुल वहाँ से चटपट दो कुर्सियाँ उठा लाया।

प्रौढ़ा ने पूछा—आप लोग क्या पहले ही पहल एडिनबरा जा रहे हैं?

अतुल ने कहा—जी हाँ। और आप?

"हम लोग तो एडिनबरा में ही रहती हैं। मेरी लड़की

लीला लन्दन में केनसिंगटन-कालेज आव् म्यूज़िक में पढ़ती थी। इस वर्ष पढ़ाई समाप्त हो गई है। इसी से मैं उसे लेने आई थी।"

"यही आपकी बेटी मालूम होती हैं।"

"जी हाँ, मेरे और भी एक कन्या और पुत्र हैं। वे एडिन-बरा में हैं। मेरा लड़का यूनीवर्सिटी में प्रोफेसर है। आप लोग इँग्लेण्ड कब आये हैं,—क्या पूछ सकती हूँ ?"

"इँग्लेण्ड आये मुझे छः वर्ष और मेरे मित्र इन को चार वर्ष हुए।"

यह सुनकर महिला ने कहा—दत्त!—आप क्या बंगाली हैं ? क्या आप दोनों ही बंगाली हैं ?

हेम ने कहा—जी हाँ।

"*I am so glad*—कलकत्ते में हमारे बहुत से आत्मीय और मित्र हैं। मेरे स्वामी बंगाली थे।"

हेम और अतुल एक साथ बोल उठे—ओहो! तब तो हम लोग आपको स्वजातीय कह सकते हैं।

"कम से कम मेरी बेटी लीला को अवश्य। वह कल-कत्ते में ही पैदा हुई थी। मेरे स्वामी एडिनबरा में जब डाक्टरी पढ़ते थे तभी मुझसे विवाह किया था। इसके बाद परीक्षा पास करके मुझे कलकत्ते ले गये। वहाँ मैं पाँच वर्ष रही थी। इसके बाद उनकी मृत्यु हो गई"—कह कर मिसेस राय ज़मीन की ओर ताकने लगीं।

बात का रुख पलटने के लिए मिस राय ने कहा—आप दोनों महाशय क्या good sailors हैं ?

अतुल ने कहा—समुद्र के शान्त रहने पर मैं असाधारण good sailor हूँ और यही दशा मेरे मित्र की भी समझिए।

यह सुन कर सभी हँस पड़े। हेम ने कहा—और आप ?

"मैं भी आप लोगों की ही तरह हूँ। माँ खूब good sailor हैं—क्यों न माँ ?"

मिसेस राय ने कहा—नहीं-नहीं, मैं गर्व नहीं करती। मैंने बारम्बार देखा है कि समुद्र-यात्रा के पहले जो अपने को बड़ी शान से good sailor समझते हैं वही पहले गिरते हैं। हाँ, इस रास्ते में वैसी लहरें नहीं उठतीं। Wash के पास पहुँचने पर लहरें ज़रा तेज़ी पकड़ेंगी। किन्तु उस रास्ते को तय करने में दो ही घण्टे लगेंगे।

इसी तरह नाना प्रकार की बातें करते करते सन्ध्या-समय हुआ। रात का भोजन करने के लिए तैयार होने को सभी उठे। मिसेस राय ने कहा—हम लोग खाने के लिए जहाँ बैठती हैं उसी टेबल पर आप दोनों भी भोजन करेंगे न ?

हेम और अतुल ने कहा—धन्यवाद, यह तो हम लोगों के लिए बड़े आनन्द की बात होगी।

तीसरा परिच्छेद

दूसरे दिन सवेरे कलेऊ के बाद जहाज़ The Wash के सम्मुख पहुँचा। जहाज़ ज्योंही डोलने लगा त्योंही यात्रीगण एक एक कर अपने अपने कैबिन में जाकर लेट रहे। डेक पर चलना दुष्कर है। सीढ़ियाँ उतरना कठिन है। यथेष्ट 'प्रतिषेधक' पी लेने पर भी अतुल पहले ही गिरा। फिर हेम का भी नम्बर आया। केवल दो चार अँगरेज़ पुरुष उस समय डेक पर टहलते रहे।

मध्याह्न में भोजन के समय टेबल के बहुत से आसन खाली पड़े रहे।

शाम को चार बजने पर जहाज़ जब यार्कशायर के सम्मुख पहुँचा, तब उसका हिलना-डोलना बन्द हुआ। यात्रीगण एक एक कर डेक पर दिखाई देने लगे। मानो सभी कई दिनों की बीमारी के बाद उठे हैं। राय-माता और कन्या हाथ में उपन्यास और कुशन लिये कैबिन से बाहर निकलीं। यह देख कर हेम और अतुल ने उनका बोझ स्वयं ले लिया और डेक पर ले जाकर अच्छी जगह चेयर रक्खी तथा उनको बिठाया। समुद्र की ताज़ी हवा लगने से धीरे धीरे, ये दोनों स्वस्थ होने लगीं। क्रम से होठों में हँसी की छटा आई, मुँह से आवाज़ निकली।

चाय की घंटी बजने पर हेम और अतुल ने कहा

दोनों उतरने का कष्ट न कीजिए। आप दोनों के लिए चाय आदि हम लोग यहीं ला देते हैं।

मिसेस राय ने कहा—I am famishing. Get me plenty of bread-and-butter please, Mr. Mitra, and some fruits.

अतुल ने कहा— All right, bread-and-butter Miss,* you shall have them.

मिस राय ने कहा—I am not a bread-and-butter Miss.

अतुल ने कहा— Yes, you are.

"No I aint" कह कर मिस राय ने हाथ के उपन्यास से अतुल पर आघात किया।

नीचे जाकर हेम ने कहा—क्यों जी, तुमने तो इतने ही में अपना ख़ासा रंग जमा लिया।

अतुल ने मूँछों पर ताव देकर कहा—भाई, सब इन मूँछों का प्रताप है।

गरमी के मौसम में रात के नौ बजे तक दिन की रोशनी रहती है। अँधेरा होने के पहले जहाज़ बन्दर में पहुँच जाने-

---

* कम उमरवाली युवतियों को Bread-and-butter-Miss कह कर परिहास किया जाता है। बालक-बालिकाओं को अधिकतर रोटी-माखन ही खाने को दिया जाता है। गोश्त कम। इसी से इस परिहास की उत्पत्ति हुई है।

वाला था। किन्तु Wash पार होने में दो के बदले चार घण्टे लग गये। रात होने पर जहाज़ को बन्दर में न घुसने दिया जायगा। प्रातःकाल तक इन्तज़ार करना होगा। रात होने के पहले जहाज़ पहुँचेगा या नहीं, इस विषय में यात्री लोग जल्पना-कल्पना करने लगे।

जिस समय दूर पर किनारा दिखाई पड़ा, उस समय अँधेरा हो रहा था। क्रम से रात आ गई। लीथ बन्दर की आलोक-माला दिखाई देने लगी। कल प्रभात के बिना जहाज़ बन्दर में न जा सकेगा।

रात बीती। प्रातःकाल उठकर यात्रियों ने जलपान किया। मिसेस राय ने बिदा होने के पहले हेम और अतुल से पूछा—आप लोग कहाँ ठहरेंगे?

"अभी तो किसी होटल में ठहर जायँगे। फिर रूम्स ढूँढ़ लेंगे।"

"हम लोग अपने यहाँ कभी कभी आपसे मिल कर सुखी होंगी। यह लीजिए हमारा ठिकाना। इस कार्ड में At home on Saturday evenings लिखा है, इससे शनिवार तक इन्तज़ार न कीजिएगा। जब और जिस समय इच्छा हो, चले आइएगा"—कह कर उन्होंने हेम और अतुल को एक कार्ड दिया।

लीथ बन्दर से रेल के रास्ते एडिनबरा जाना होता है। असल में लीथ तो एडिनबरा का उपनगर-मात्र है। जहाज़

से उतर कर रेल के रास्ते से कुछ मिनटों में थे एडिनबरा पहुँच गये।

चौथा परिच्छेद

एक महीना बीत गया। मार्चमेण्ट रोड के एक घर में रूम्स लेकर हेम और अतुल रहते हैं। राय-परिवार से इन दोनों की घनिष्ठता खूब बढ़ गई है—ख़ास कर हेम की। न्यौता तो प्रायः होता है।

आज रविवार को दिन के साढ़े दस बजे अतुल रात की पोशाक के ऊपर ड्रेसिंग गाउन पहन कर, अपने सोने के कमरे से बाहर निकल आया। बैठक में जाकर उसने दासी के लिए घण्टी बजाई।

दासी के आने पर पूछा—मिस्टर दत्त कलेऊ कर चुके?

"जी हाँ, आज वे और दिनों की अपेक्षा जल्दी कलेऊ करके कहीं बाहर गये हैं।"

इसी समय पास के गिरजे में टन टन शब्द होने लगा। अतुल ने कहा—आज शायद रविवार है,—गिरजे का घण्टा बज रहा है।

दासी ने कहा—हाँ महाशय, आज रविवार है। घर के सभी लोग गिरजे गये हैं। आपने कलेऊ नहीं किया था इसलिए केवल मैं रह गई हूँ।

"अच्छा, मेरे कारण तुम गिरजे नहीं जा सकीं? मुझे बहुत अफ़सोस है। अच्छा, खाने की सामग्री देकर तुम चली जाओ। इन्तज़ार करने की ज़रूरत नहीं।"

"धन्यवाद महाशय"—कह कर दासी ने एक ट्रे में भर कर खाने की सामग्री ला दी। टेबल पर सब चीज़ें रख कर वह चली गई।

अतुल के मुँह में सिगरेट है। टेबल के पास चेयर ला कर उसने एक प्याले में चाय उँड़ेली। अनमना होकर वह थोड़ी थोड़ी चाय पीने लगा।

अतुल मन में कहने लगा—हेम ज़रूर गिरजे में गया है। पिछले रविवार को भी गया था। एकाएक यहाँ के धर्म में उसकी प्रीति कैसे होगई? Cherchez la femme—मालूम होता है—कुमारी लीला की प्रेयर-बुक ले जाने के लोभ से भैया इतना जल्द, रात भर में ही, ऐसा धार्मिक बन गया है।

एक प्याला चाय ख़तम हुई। भोजन के अनेक पात्रों के ढक्कन खोल खोल कर अतुल देखने लगा। अन्त में केवल दो अण्डे उठा कर खाये। कल रात को थियेटर के बाद कहीं गया था, तीन बजे घर लौटा है—इसी से तबीअत भारी हो गई है—खाने की इच्छा नहीं है।

प्याले भर चाय और पीकर अतुल ने टेबल छोड़ दिया

अब नया सिगरेट होठों से दबा कर खिड़की के पास चेयर ले गया। हेम के सम्बन्ध में विचार करने लगा।

पहले की कई एक घटनाओं का स्मरण कर के अतुल ने स्थिर किया—हेम लीला के प्रेम में पड़ गया है, इसमें कोई सन्देह नहीं। और लीला? वह भी हेम की अनुरागिनी है। यह भी अतुल स्पष्टरूप से समझ गया है।

थोड़ी देर में अतुल ने अस्फुट स्वर में कहा—"What the devil does he mean by it? Will he marry the girl?"

सोचा—हेम जैसा शीतल प्रकृतिवाला और हिसाबी है उसको देखते हुए यह विश्वास तो नहीं होता कि केवल प्रेम के कारण वह विवाह करने को राज़ी होगा। Love in a cottage तो उसकी जन्मपत्री में नहीं लिखा। सिविल-सर्विस पास कर चुका है। देश लौटने पर 'विलायत से लौटी हुई' समाज में धूम मच जायगी। विवाह-योग्य कन्याओं की माताओं को खाना-पीना हराम हो जायगा। नीलाम की 'बोली' में सबसे ऊँचे दाम पर हेम अपने आपको बेंचेगा। किसी धनकुबेर की काली-कलूटी लड़की को पाँच अंकों की चेक पाने पर, हेम ब्याह लेगा? बेचारी मिस राय—मैं सचमुच तुम्हारे लिए दुःखित हूँ। सुन्दरी मिस राय, सुगायिका, सुशिक्षिता, कोमलहृदया मिस राय,—तुममें सब कुछ भला है, किन्तु तुम दरिद्र विधवा की बेटी हो। तुम्हार

हृदय प्रेम से परिपूर्ण हो सकता है, किन्तु तुम्हारी माँ का कैशबाक्स तो ख़ाली है। ख़बरदार कोई आशा न करना—कोई आशा न करना।

ग्यारह बज गये। अब अतुल ने सोचा, "जाने भी दो, दूसरे की फ़िक्र में क्या रक्खा है, चलो, कुछ अपनी भी चिन्ता करें।"—याद आया कि एडिनबरा में, एकान्त में, क़ानून पढ़ने की ग़रज़ से कुछ किताबें ख़रीद लाया था, सो उनके पन्ने अभी तक नहीं काटे गये। उठ कर ट्रंक से किताबें निकाल लाया। उनको हिलाने-डुलाने लगा और सोचा, आज पन्ने काट कर अध्ययन आरंभ कर दूँ। इसके बाद अकस्मात् याद आया—आज रविवार है—अनध्याय है। यद्यपि मैं क्रिस्तान नहीं हूँ तथापि "यस्मिन् देशे यदाचारः"—मानना ही ठीक है। आज रहने दो, तबीअत भी ठीक नहीं। विद्यारम्भे गुरुश्रेष्ठः—सीधा बृहस्पतिवार से आरंभ करूँगा। सरस्वती फिर ट्रंक-रूपी जेल में ठूँस दी गई।

बारह बजे। बैठे बैठे जी ऊब उठा। गिरजे की उपासना हो गई है। रास्ते में झुण्ड के झुण्ड नर-नारी और बालक-बालिकायें अपनी अपनी पोशाक पहने गिरजे से घर लौट रहे हैं। अतुल ने उठ कर कपड़े पहन लिये। वह घूमने के लिए बाहर निकला। नगर के बीच में प्रिंसेस गार्डन्स नाम का एक बहुत बड़ा मनोहर बाग़ है। वहाँ जाकर वह वायु-सेवन

करने लगा। कुछ देर बाद वृक्ष की छाया में एक बेंच पर बैठ कर सिगरेट पीने लगा।

इसी समय देखा कि कुछ दूर पर मिस राय के साथ हेमचन्द्र आ रहा है। अतुल ने इन्तज़ार किया, धीरे धीरे वे पास आये। अब अतुल ने उठ कर मिस राय के लिए टोपी उतारी। Good morning कह कर पूछा—आप लोग शायद गिरजे से आ रहे हैं?

हेम ने कहा—हाँ। गिरजे की गरमी से मिस राय मूर्च्छित सी हो गई थीं। इसी से उपासना के बाद शीतल वायु का सेवन कराने के लिए यहाँ लाया हूँ।

अतुल ने कहा—अफ़सोस है। इस समय आपकी तबी-अत कैसी है, मिस राय?

लीला ने कहा—धन्यवाद, अब तो तबीअत ठीक है। मालूम होता है। आप कभी गिरजे नहीं जाते।

अतुल ने कहा—गिरजे में? हाँ, जाता तो हूँ। प्रतिवर्ष क्रिसमस डे को जाता हूँ।

मिस राय ने हँसकर कहा—जो रविवार को दोनों समय गिरजे नहीं जाते, केवल एक बार जाते हैं, उनको श्लेष-कर ग्लैडेस्टन ने Oncer कहा है। आप तो once a year हैं।

अतुल ने कहा—आत्मा के परित्राण के लिए ही तो गिरजा जाते हैं? सो मेरे आत्मा है या नहीं, इसमें मुझे बड़ा

सन्देह है, मिस राय । इसी से मैं गिरजे को अधिक नहीं जाता ।

लीला ने कहा—अजी आपका आत्मा किसी दूसरे की मुट्ठी में तो नहीं जा पड़ा ?

"ऐसा होता तो भी समझता कि कहीं है भी तो । जिनका आत्मा दूसरे की मुट्ठी में जा पड़ा है उनको तो नियमित-रूप से गिरजे में जाते देखता हूँ ।" कह अतुल ने हेमचन्द्र की ओर वक्रदृष्टि की । हेम ने उसे सुन कर भी मानो नहीं सुना । कुमारी लीला के कपोल कर्णमूल तक लाल हो गये । किन्तु एक मुहूर्त में ही उसने अपने को सँभाल कर कहा—यहाँ बैठे रहने से क्या लाभ,—आइए न ज़रा घूम लें ।

अतुल ने मुसकुरा कर दोनों के मुँह की ओर देखा । फिर हेम की ओर देख दुष्टता कर कहा—Thanks—but shall I not be intruding ?

हेम ने कहा—नहीं-नहीं ।

अब तीनों ही नाना प्रकार की बातें करते हुए बाग़ में टहलने लगे । हेम और अतुल के बीच में मिस राय शोभा दे रही थीं । भारत के सम्बन्ध की कितनी ही बातें होने लगीं । अतुल ने कहा—मिस राय, आपको भारतवर्ष देखने की इच्छा नहीं होती ?

"होती क्यों नहीं ? खूब होती है । मैं बचपन में कलकत्ते में थी उसका मुझे छायावत् स्मरण है मैंने भारत का प्राकृ-

तिक सौन्दर्य,—नदी, वन, पहाड़—ज़रा भी नहीं देखा। ये सब देखने की मुझे इच्छा होती है। अच्छा, भारत में कौन फूल सबसे अच्छे होते हैं। कुछ के नाम तो लीजिए।"

अतुल ने कहा—"बेला, जूही, गन्धराज, मौलसिरी,—"

हेम—"कुमुद, कह्लार, कमल, केतकी, कामिनी,—"

मिस राय ने पूछा—कामिनी ? वह कैसा फूल होता है ?

अतुल ने कहा—छोटा सा सफ़ेद फूल है। रात में खिलता है। बड़ी मधुर और मृदु सुगन्धि होती है—इसी से इसका नाम कामिनी अर्थात् Lady-flower है।

लीला ने कहा—Lady-flower ? कैसा सुन्दर नाम है ! अच्छा, मिस्टर मित्र, इस देश के और हमारे देश के फूलों में क्या अन्तर है ?

अतुल ने कहा—आपकी बात का उत्तर देने के पहले, मेरा आन्तरिक धन्यवाद लीजिए, क्योंकि आपने भारतवर्ष को स्वदेश कहा है।

लीला ने कहा—अवश्य। मेरे पिता बंगाली थे। मेरा जन्म भारतवर्ष में हुआ है। मैं उस देश को स्वदेश न मानूँगी तो किसे मानूँगी ? मैं तो 'प्रवासिनी' हूँ।

अतुल ने कहा—"प्रार्थना करता हूँ कि भारत की दुहिता को एक दिन भारत में देखकर सुखी होऊँ।" फिर हेम की ओर घूम कर कहा—मेरी इस प्रार्थना में तुम शामिल नहीं होते हेम ?

हेम ने कहा—"अवश्य।"—किन्तु उसका स्वर अतुल
रह हास्य-विकसित न था। अपराधी जैसा था।

अतुल ने कहा—हाँ, आप भारतवर्ष के और इस देश के
में अन्तर पूछ रही थीं। सो इस देश के अधिकांश
भड़कीले हैं किन्तु गन्धशून्य हैं। भारतवर्ष के फूल देखने
हे बहुत बढ़िया न हों किन्तु उनमें सुगन्धि भरपूर होती
वैसी मीठी खुशबू इस देश के किसी फूल में नहीं।

मिस राय ने कहा—है क्यों नहीं, वायोलेट्स-लिलिज़
दि वेली जो है?

"मुझे तो पसन्द नहीं। आप भी जो एक बार भारत का
सूँघ लें तो फिर इन्हें पसन्द न करें।"

इसी समय कुमारी राय ने घड़ी देख कर कहा—एक बज
। हमारे घर आज दोपहर का भोजन करना मिस्टर दत्त
कार किया है। मिस्टर मित्र,—आपसे अनुरोध करने के
माँ यहाँ नहीं हैं, इसका मुझे खेद है। किन्तु मैं खूबी
ो हूँ कि यदि आप भी चलेंगे तो माँ बहुत प्रसन्न होंगी।

अतुल ने कहा—आपको बहुत धन्यवाद है मिस राय,
आज आपको मुझे क्षमा करना होगा।

ेम ने कहा—चले न चलो। भोजन के बाद शाम को
तरह गोष्ठी होगी। मिस राय का गाना सुनना।

स राय ने कहा— मिस्टर मित्र को मेरा गाना बिलकुल
नहीं।

अतुल ने कहा—पसन्द करता हूँ या नहीं, सो हेम से पूछिए—किन्तु—

कृत्रिम अभिमान से होंठ फुलाकर लीला ने कहा—"पसन्द करते हैं—किन्तु।" आपकी किन्तु परन्तुवाली पसन्दगी मैं नहीं चाहती—जाइए आप।

अतुल ने कहा—मैं आपके गान के सम्बन्ध में किन्तु नहीं लगाता। किन्तु आज रविवार जो है। आपका परिवार बेतरह धार्मिक है। आपके यहाँ रविवार को तास नहीं खेला जाता—धर्म-संगीत के सिवा और कुछ गाने की भी मुमानियत है। मेरी बड़ी बुरी आदत है, कि धर्म-संगीत सुनते ही मुझे जँभाई आती है। रविवार को नहीं, और किसी दिन आकर आपका गाना सुनूँगा। बर्न्स के बनाये हुए कुछ प्रेम-संगीत कृपा करके गाइएगा। अँगरेज़ी और स्काच स्वर में बड़ा अद्भुत प्रभेद है! अँगरेज़ी सुर से बँगला सुर ज़रा भी नहीं मिलता। किन्तु स्काच सुर सुनते ही बँगला की रागिनी याद आ जाती है। बर्न्स के गीतों से मैं मुग्ध हो जाता हूँ।

लीला ने कहा—बर्न्स के कौन कौन से गीत आपको बहुत पसन्द हैं?

"किन किन का नाम लूँ? बहुत से हैं। यही तो—Ye banks and braes O' bonnie Doon कैसा सुन्दर स्वर है, मानो बँगला का हो।"

हेम ने कहा—जानती हो मिस राय, हमारे देश के एव

थ ने बिलकुल इसी स्वर में इस भाव का एक गीत बँगला.
बनाया है।

मिस राय ने कहा—कौन सा गाना, बताइए न।

"आप तो बँगला समझेंगी नहीं।"

"तो भी सुन तो लूँ।"

हेम ने मृदु स्वर से गुनगुना कर गाया—

"फूले फूले ढले ढले बहे किवा मृदु वाय;
तटिनी हिल्लोले तुले कल्लोले बहिये जाय।
पिक किवा कुंजे कुंजे कुहू कुहू कुहू गाय,—
ना जानि किसेर लागि प्राण करे हाय हाय * ।"

बर्न्स का चिरपरिचित सुर सुन कर मिस राय चुप
रह सकीं। गुनगुना कर हेम के साथ सुर देने लगीं।

गाना समाप्त होने पर अतुल ने कहा—"Avaunt,
sinners! रविवार को आप लोगों ने प्रेम का गाना
ा ?" खूब हँसकर और टोपी उठा कर अतुल चला गया।

पाँचवाँ परिच्छेद

एक महीना और भी बीता। सन्ध्या-समय के कुछ
पहले अतुल और हेम कपड़े पहन बाहर निकले। आज
मिस राय ने इनका निमन्त्रण किया है। दो महीने एडिन-

---

* कवि-सम्राट् रवीन्द्रनाथ ठाकुर-रचित।

बरा में रहने के बाद, कल ये दोनों दस बजे की गाड़ी से लन्दन जायँगे। इसी से आज शाम को बिदाई का भोज है।

उस दिन और किसी का निमन्त्रण नहीं था। मिसेस राय का पुत्र और दूसरी बेटी भी घर में नहीं थी।

भोजन के बाद सब लोग ड्राइंगरूम में बैठे। राय-गृहिणी ने कहा—मिस्टर दत्त, कलकत्ते में हमारे जो आत्मीय हैं, उनके बच्चों के लिए मैंने ऊन की कुछ चीजें तैयार की हैं। उनका पार्सल बना कर यदि आपको दे दूँ तो क्या आप उनके पास पहुँचा देंगे ?

"अवश्य पहुँचा दूँगा। बड़ी प्रसन्नता से।"

"आपको कोई दिक़्क़त तो न होगी ?"

"कुछ भी नहीं।"

"लन्दन से आप किस महीने रवाना होंगे ?"

"नवम्बर में।"

"तब तो अभी तीन महीने हैं। घर जाने के पहले क्या एक बार और एडिनबरा न आइएगा ?"

"इच्छा तो है। इन दो महीनों में आपने मेरा जैसा कुछ आदर किया है उसको देखते हुए, यहाँ से विदा होने के पहले यदि बिना मिले चला जाऊँ तो यह अकृतज्ञता का काम होगा।"

मिसेस राय ने कहा—Very good of you to think sc

कुमारी लीला आज बड़ी ही सुन्दर वेशभूषा पहने है।

किन्तु उसके हृदय से आज आनन्द जाने कहाँ उड़ गया। कभी कभी मुसकुरा ज़रूर देती है, किन्तु चेहरे से मालूम होता है कि वह मुसकुराहट ऊपरी है—दिल की नहीं।

अतुल ने कहा—आज हम लोग मिस राय के कुछ अच्छे अच्छे गाने सुन कर जायँगे।

मिस राय ने कहा—अच्छी बात है। किन्तु आज आप को भी गाना होगा।

"जो गाता हो उससे कहिए। हेम गाएगा।"

"वे तो गायँगे ही। किन्तु आज मैं आपका गाना सुने बिना छोड़नेवाली नहीं।"

कुमारी लीला ने पियानो लिया। एक-दो-तीन—कई गाने हुए। तब हेम ने भी एक बँगला गीत गाया।

अतुल ने कहा—मिस राय, आपका Bonnie Prince Charlie गाना एक बार सुनूँगा।

अँगरेज़ों के इतिहास में जो Young Pretender कहे जाते हैं, उनका नाम स्काटलेंड में आज भी Bonnie Prince Charlie है। उस देश में इस समय भी ऐसे लाखों लोग हैं, जो समझते हैं कि Prince Charlie ही उनके यथार्थ राजा थे। यदि इस समय उनके वंशधर कहीं हों तो वही स्काटलेंड के सिंहासन के सच्चे अधिकारी हैं। अभी तक स्काटलेंड के मठों में, नदी-तटों पर, गिरि-शिखरों पर और उपत्यकाओं में

Bonnie Prince Charlie के सम्बन्ध में नित्य सैकड़ों गाथायें गाई जाती हैं।

मिस राय ने पियानो के पास बैठ कर जो गाना गाया उसके राफ़्रां अर्थात् प्रत्येक पद का अन्तिम चरण था—

Charlie's my darling—my darling—my darling.

मिस राय ने बड़ी सुन्दर ध्वनि और मधुरता से, जी लगा कर, गाना गाया। जब तीसरा राफ़्राँ-पद ख़तम हुआ तब मन्द मन्द मुसकुराकर अतुल ने हेम से कहा—"I say Hem, wouldn't you like to be Charlie?" हेम ने धीरे धीरे कहा—"Shut up"—कुमारी राय को सुनाने की मंशा अतुल को हर्गिज़ न थी। किन्तु लीला ने उसी दम पियानो से नज़र हटाकर पास ही बैठे हुए इन लोगों के मुँह की ओर देखा। उसका चेहरा लाल हो गया। उसने एकाएक गाना बन्द कर दिया। इससे अतुल बहुत ही चकराया। हेम ने कहा—ठहर क्यों गई?

मिस राय ने कहा—तीन verse (कड़ी) तो गाया। अब क्या ज़रूरत है?

शेष पद सुनाने के लिए हेम और अतुल आग्रह करने लगे। तब मिस राय मुसकुरा कर फिर गाने लगीं। किन्तु पहले की तरह गाना न जमा। गाने में वे हृदय को न लगा सकीं। मानो सुर और लय के साथ ठीक ठीक ग्रामोफ़ोन बज गया।

गाना खतम करके मिस राय ने कहा—मिस्टर मित्र, आज आपको गाना होगा। मैं किसी तरह न मानूँगी।

अतुल समझ गया कि मेरे अपराध को मिस राय ने क्षमा कर दिया। अत्यन्त निश्चिन्त होकर उसने पूछा—तो क्या गाऊँ ?

हेम ने कहा—तुम एक हँसी का गाना गाओ न ?

"हँसी का गाना ? और सुन कर यदि आप लोग हँसने लग जायँ तो ?"

कुमारी लीला ने कहा—हँसना ही चाहिए। हँसी के गाने में और हँसी न आवे ! भला यह भी कोई बात है ?

अतुल ने कहा—कहिए तो हँसी का नहीं,—करुण-रस का गाना गाऊँ। आपकी हँसी को मैं सहन न कर सकूँगा। मुझे ऐसा मालूम होगा कि गाने के कारण हँसी नहीं आ रही है बल्कि गाने में मेरी असमर्थता देख कर आप लोग हँस रहे हैं। मैं एक निराश-प्रणय का—करुण-रस का—गाना गाता हूँ।

मिसेस राय ने कहा—आशा करती हूँ कि आप स्वयं निराश-प्रणयी नहीं हैं।

कृत्रिम ठण्ढी साँस लेकर अतुल ने कहा—हाँ मिसेस राय, मैं भी एक निराश-प्रणयी हूँ। एक दिन शाम को, एक बाग़ में, मैंने अपने हृदय का सारा प्रेम एक बालिका को अर्पण कर दिया था। किन्तु वह निष्ठुर उपेक्षा के साथ उसे छोड़

कर—ठुकरा कर—चली गई। तब से मेरा जीवन श्मशान-तुल्य हो गया है।

कुमारी राय ने कहा—यह बात है तो यह घटना कहाँ की है? यहाँ की या लन्दन की?

"न यहाँ की और न लन्दन की। यह तो देश की है—मिस राय देश की। मेरी उम्र तब दस वर्ष की थी और उसकी सात वर्ष की।" यह कह कर मानो आँसू रोकने के लिए उसने रूमाल से आँखों को ढक लिया।

क़िस्सा सुन कर सब लोग हँसी से लोट-पोट हो गये। कुमारी राय ने कहा—रूमाल निचोड़ डालिए—निचोड़ डालिए। वह आँसुओं से तर हो गया है।

अतुल सूखे रूमाल को खूब निचोड़ने लगा।

मिसेस राय ने कहा—मिस्टर मित्र का गाना तो हुआ ही नहीं। बातों ही बातों में असल बात दबती जा रही है।

लीला ने कहा—हाँ, मिस्टर मित्र, अब गाओ।

अतुल ने तब पियानो के पास बैठ कर जो गाना गाया उसका भावानुवाद यह है।

"रोते हुए नायक ने कहा—हे बाला! विदा दो—विदा दो। यह अभागा मनुष्य हृदय की ज्वाला जताने फिर न पहुँचेगा।

"चिर दिन की मेरी आशालता आज छिन्न हो गई; विकसित हो रही वासना-कुसुम-राजि आज सूख गई।

"शरीर ऐसा कोमल और मुसकुराहट ऐसी मीठी होते हुए, कौन जान सकता था कि तुम्हारे हृदय में केवल ज़हर भरा हुआ है।

"आज से मेरा जीवन 'सहारा' मरुस्थल की तरह जलने लगा; हाय, ऐसी अपार यातना को मैं दिन रात अधिक समय तक कैसे सह सकूँगा!

"तब नायिका ने कहा,—यदि कुछ दिन तक सर्वरोग-हर बीचम्स पिल्स का सेवन करो तो ऐसी घोर यातना निरवधि न होगी।"

गाना सुन कर महिलायें हँसी न रोक सकीं; कुमारी लीला ने कहा—Dear, oh dear! O,—I never!—Just fancy her prescribing Beecham's pills for her lover,—of all things in the world?

हँसी की तरङ्गें रुकने पर हेम ने कहा—आपको मालूम है, एक बार एक गिरजेवालों के साथ बीचम-कम्पनी ने कैसी चतुराई खेली थी?

महिलाओं ने कहा—नहीं,—क्या बात थी?

"किसी गाँव में एक—dissenting Chapel था—वे उपासना-प्रणाली और संगीत प्रभृति में प्रचलित प्रथा का अनुसरण न करते थे। उन लोगों ने अपने मनमाने धर्म-संगीतों की एक पुस्तक भी छपाई थी। उपासना के समय प्रति रविवार को वह पुस्तक लोगों को दी जाती थी। कुछ

समय में पुस्तक की प्रतियाँ फट गईं, किन्तु उस गिरजे की ऐसी दशा न थी कि पुस्तक दुबारा छपाई जा सके। यह सुनकर बीचम-कम्पनी ने कहा—"हम पुस्तक छपा देंगे, किन्तु एक शर्त है। उसमें हम अपनी ओषधियों का विज्ञापन भी छापेंगे।" गिरजे के अधिकारी डीकन लोगों ने सोचा कि मुखपृष्ठ या अन्तिम पृष्ठ पर यदि उनका थोड़ा सा विज्ञापन बना रहेगा तो उसमें क्या हानि है?—ख़ासकर जब कि पुस्तक मुफ़् मिल रही है। उन्होंने धन्यवादपूर्वक सम्मति दे दी। पुस्तक छप आई। पहले दिन उपासना के समय उसी पुस्तक से एक धर्म-संगीत गाया जाने लगा। उपासक लोग प्रार्थना में समस्वर से योग दे रहे थे। ईसा मसीह की महिमा का गान होते होते अकस्मात् अन्तिम पद मे "बीचम की गोलियों" का गुणानुवाद ध्वनित हो उठा। गाना रुक गया। गिरजे के सब लोग सन्नाटे में आगये। अब जाँच करने पर मालूम हुआ कि पुस्तक में प्रत्येक भजन के अन्त में 'पिल' का प्रशंसापूर्ण एक नया चरण जोड़ दिया गया है।"

फिर हँसी के फ़व्वारे छूटे। दो एक गीत और गाये जाने पर मिसेस राय ने कहा—मिस्टर मित्र, मुझ पर एक अनुग्रह कीजिएगा?

"कहिए, मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।"

"मिस्टर दत्त के हाथ में जो चीज़ें कलकत्ते भेजना

चाहती हूँ, वे भोजन करने के कमरे में रक्खी हैं। उनको पैक करने में आप मेरी सहायता करेंगे ?"

"बड़ी ख़ुशी से। चलिए।"

"चलिए। मिस्टर दत्त हम दोनों को अवश्य ही आध घंटे के लिए क्षमा करेंगे। लीला, तुम मिस्टर दत्त को एक आध और गाना सुना कर तब तक entertain करना।"

एकान्त होते ही, हेम के साथ लीला का हँसी-मज़ाक करना न मालूम कहाँ उड़ गया। वह माथा झुका कर चुपचाप गीतों की पुस्तक के पन्ने पलटने लगी। हेम के कोई बात कहने पर लीला या तो सिर्फ़ सिर हिला देने अथवा 'हाँ' या 'ना' एक ही अक्षर का उत्तर देने लगी।

कुमारी का यह भाव देखकर हेम ने कहा—मालूम होता है, आप आज गाना गाते गाते थक गई हैं। असल में हम लोग बड़े स्वार्थी हैं। अपने आनन्द के लिए आपको इतना कष्ट दिया है।

लीला ने ज़रा चोखा हँसी हँस कर कहा—आप दो-एक गीत और गाकर दूसरों को आनन्दित करें तो आपकी आत्मग्लानि कम हो जाय।

हेम ने कहा—कौन सा गीत गाऊँ ? बँगला या अँगरेज़ी ?

"बँगला भला मैं क्या समझूँगी। अँगरेज़ी गाना गाइए।"

अब हेम पियानो के पास बैठ कर बर्नस का बनाया my love is like a red red rose नामक प्रसिद्ध गीत गाने लगा। उसका भावार्थ यह है;—

मेरी प्रियतमा तो नवीन वसन्त का खिल रहा गुलाब-फूल है; मेरी वह प्रिया मानो मधुर रागिनी है जो सुरीली तान और लय में गाई जाती है। मेरी प्यारी, तुम बड़ी सुन्दरी हो और मेरा प्रेम भी गहरा है! सात समुद्रों में जब तक पानी रहेगा तब तक मेरा प्रेम बना रहेगा। जब तक समुद्रों का पानी नहीं सूखता और गरमी-बरसात खाकर जब तक पहाड़ टूट फूट कर चूर चूर नहीं हो जाते तब तक मेरा प्रेम—सैकड़ों जन्म तक—स्थिर रहेगा और ज़रूर रहेगा। मेरी एक-मात्र प्रिया, अब कुछ दिनों के लिए मुझे बिदा करो;—अगर मैं हज़ार कोस के फ़ासिले पर भी चला जाऊँ तो भी लौट आऊँगा और बेशक और आऊँगा।

गीत के अन्तिम दो चरणों को हेम ने बारम्बार दुहराया—

Sae fare thee weel, my only love
And fare thee weel awhile.
And I shall come again, my love
Though it were ten thousand mile,
Though it were ten thousand mile, my love
Though it were ten thousand mile
And I shall come again, my love
Though it were ten thousand mile.

बर्न्स का सुर मानो रो रोकर कमरे में लोटने लगा।

गाना ख़तम होने पर हेम ने देखा कि मिस राय खिड़की

के पास जाकर बाहर की ओर देख रही हैं। हेम ने धीरे धीरे उनके पास जाकर पूछा—क्या आपको बहुत गरमी लगती है ?

"नहीं, खूब चाँदनी छिटक रही है, यही देखती हूँ।"

हेम ने कहा—यह क्या चाँदनी है ! यदि चाँदनी कहीं छिटकती है, तो भारतवर्ष में। उस चाँदनी को आप देखना नहीं चाहतीं ?

मिस राय ने कहा—चाहती तो बहुत हूँ।

हेम ने कहा—बहुत दिनों से आपसे एक बात कहने का विचार कर रहा हूँ—किन्तु कह नहीं सका। मैंने जिस दिन से आपको देखा है, उसी दिन से मैं आपको प्यार कर रहा हूँ। मैं आपको कितना प्यार करता हूँ, यह आप जानतीं नहीं। मेरे जैसे अयोग्य व्यक्ति को क्या आप स्वामीरूप में ग्रहण कर सकती हैं ? आज अपने हृदय को मैं आपके पैरों के पास रखता हूँ, क्या आप ठुकरा देंगी ?

मिस राय खिड़की के पास चुपचाप खड़ी रहीं। उनकी आँखों से आँसू झरने लगे। हेम ने समझ लिया कि मेरी मनोकामना पूरी होगी। तब उसने लीला की कमर में हाथ डाल कर उसको अपने पास खींच लिया। मिस राय ने आँसुओं से भीगा हुआ अपना मुख हेम के कंधे पर रख दिया। हेम ने कहा—मिस राय—लीला—बतलाओ, मुझे सुखी करोगी ? भारत की दुहिता को भारत लौटा ले जाने

का सौभाग्य क्या मुझे प्रदान न करोगी ? कहो—'हाँ' कहो-कहो।

आँसुओं से रुँधे रहे स्वर से लीला ने कहा—हाँ।

अब हेम ने यत्नपूर्वक लीला का मुँह उठा कर उसके आँसू पोंछ दिये। इसके बाद उसने प्रिया के अधर-वृन्त से प्रणय का पहला फूल चुन लिया।

आधा घंटा बीत गया। बाहर पैरों की आहट सुनाई पड़ी। दरवाज़ा खोल कर मिसेस राय और अतुल भीतर आये।

हेम ने लीला के साथ बाहुसम्बद्ध करके हँसते हँसते धीरे धीरे आगे बढ़ कर कहा—मिसेस राय, आज आपकी बेटी ने मुझे पति-रूप में ग्रहण करना स्वीकार कर लिया है। कृपा कर स्वीकृति दीजिए।

यह सुन कर राय-गृहिणी तनिक चुपचाप खड़ी रहीं। उनके मुख पर प्रसन्नता की हँसी फूट पड़ी, आँखें डबडबा आईं।

अतुल दो हाथ उछल कर बोला—Mrs. Roy—don't bless them. Stop, thief fire—murder.

अतुल के "रंगभंग" की बात सभी को मालूम थी। मिसेस राय ने हँस कर पूछा—क्या हुआ ? बात क्या है ?

अतुल ने उत्तेजित स्वर से कहा—मिसेस राय, यह हेम से ही पूछिए। जहाज़ खुलने के पहले ही A toss up हो गया था। जीत मेरी हुई थी। मिस राय से विवाह करने का मेरा ही अधिकार है। क्यों न हेम ?

लीला और हेम दोनों मुसकुराने लगे।

मिसेस राय ने कहा—किन्तु तुमने तो लीला को woo नहीं किया। जिसने woo किया उसने woo किया है।

अतुल ने गरदन टेढ़ी कर ली और गाल पर एक अँगुली रख कर सोच-विचार करके कहा—"यह ठीक है। मुझसे यह बड़ी भूल हो गई। ख़रगोश और कछुए की सी कहानी हो गई। सोता रह कर मैं हार गया। अच्छा तो हेम की ही जीत सही। All right, good luck to you Hem, old chap. My best, my very bestest congratulations."

हेम का हाथ पकड़ कर वह ख़ूब झकझोरने लगा।

दस हज़ार मील नहीं, चार सौ मील तय करके हेम फिर दो महीने में लन्दन से एडिनबरा पहुँचा। शुभ दिन को शुभ विवाह हो गया।

॥ समाप्त ॥